॥ श्रीः ॥

श्री वेदार्थ प्रकाश रामायण

अर्थात्

वेद रामायण की एकता

भाषा टीका सहित ।

श्री राम उपासकों के लिए अपूर्व रत्न है ।

॥ जिसको ॥

श्री अयोध्या वासी पण्डित श्री सरयू दासजी
महाराजने अत्यन्त परिश्रम से संग्रह करके
निर्माण किया ।

॥ उसीको ॥

सेठ छोटेलाल, लक्ष्मीचन्द बुक्सेलर ने
अपने लिए ।

मैनेजर महेश प्रसाद द्वारा—
सत्यनाम प्रेस, मैदागिन बनारस सिटी में
छपवा कर प्रकाशित किया ।

सन् १९२६ ई०

मूल्य १।।)

तदस्त्रं तस्य वीरस्य स्वर्ग मार्ग प्रभावनम् ।
रामबाणा सनच्पित्त माहवत्परमां गतिम् ॥ १ ॥
श्री वाल्मीकीय रामायणे किष्किन्धा काण्डे १७ सर्गे ।

दोहा ।

रामायुध अंकित गृह, सोभा वरनिन जाइ ।
नव तुलसिका वृंदतहँ, देषिहरष कपिराइ ॥ १ ॥

श्रीमानस रामायणे ।

अर्थात् श्रीराम भद्रके धनुष्य से छुटे हुए उस बाणने उसवीर बालिको परम गति (श्री साकेत लोक) को प्राप्त कराया वह बाण स्वर्ग (दिव्यधाम साकेत वासान्तानिक) मार्गका प्रकाशक है, वह श्रीरामनाम से अंकित है 'रामनामां कितैः शरैः' उससे जो कोई मुमुक्षु (मोक्षकी इच्छा वाले दूनों भुजामें धनुष बाण धारण करेंगे तोउनकी मुक्तिक्यों न होगी अवश्य होगी । श्रीगोस्वामी जी की दोहासे भी धनुष बाण धारण करना सिद्ध, होताहै क्योंकि जब वैष्णव को पशु, पुत्र, घर, द्वार, मन्दिर, वर्तन, भांडादिक में भगवत आयुध अंकित करने को लिखाहै तो क्या श्री विभीषणजी शरीरमें अंकित न हुए होंगे अवश्यही हुए होंगे । इससे दनों ग्रंथ से धनुष बाण धारण करना सिद्ध है । विशेष देखना हो तो 'श्रीराममंत्र परम वैदिक सिद्धान्त देखिये ।

वैष्णव साधु पं० श्रीसरयूदासजी श्रीअयोध्यावासी ग्रन्थकार।

भूमिका ।

मान्नीय सज्जनों ! इस अपूर्व ग्रन्थ में वेद और श्रीरामायण की एकता है। जिसमें वेदका अवतार श्री दशरथजी, तीनों रानियें त्रिकाण्ड शक्ति अर्थात् ज्ञान शक्ति कौशल्याजी, क्रिया शक्ति कैकेयीजी, और उपासना शक्ति, सुमित्रा जी हैं, एवं चारोभाई अर्थ, धर्म, काम, और मोक्ष, सामान्य, विशेषतरः विशेष-तम, धर्मोंके उपदेशक और अधिष्ठाताहैं और भक्ति आदि चारो फलोंकी साधना चारो महारानियों के अवतार हैं। ज्ञान सुग्रीवजी हैं, प्रबल वैराग्य श्रीहनुमान्जी हैं। कैवल्य साधन, संपूर्ण भालु बानर हैं, मोहरावण का अवतार है दशोइन्द्रियां दशोशिर हैं। अहंकार, कुम्भकर्ण है, काम मेघनाद है, जीव श्री विभीषणजी हैं। प्रवृत्ति लंकापुरी है, निवृत्ति श्री अयोध्याजी। इसी प्रकार से सब विषय शास्त्रीय प्रमाणों के सहित वर्णन हैं और श्रीगोस्वामीजीकृत रामायण का गूढ विषय "सतपञ्च चौपाई मनोहर" का विस्तार से वर्णन है। प्रथमावृत्ति में जहाँ२ त्रुटि रही सो विषय पूर्ण कर दिया गया है। जिसमें श्रुति, स्मृती, पुराण, संहिता, तंत्र, रहस्य, नाटकादि के प्रमाण भी दिए गए हैं। इसलिए सर्व साधारण सज्जनों को भी देखने योग्य है।

१ सब सज्जनों का दास

श्रीवैष्णव सरयूदास,

श्री अयोध्या जी।

श्रीजानकीवल्लभो विजयते सदा

अथ–

श्रीवेदार्थप्रकाशरामायण

तत्त्वं नास्ति यतः परं किमपितं सच्चिद्रसैकात्मकम्,
रामं दाशरथिं धनुर्द्धरमहं वन्दे किशोराऽकृतिम् ॥
श्यामांगं द्विभुजं सखीभिरनिशं श्रीसीतया नित्यया,
साकेते विहरंत मेव सखिभिर्नित्यानुगैर्भ्रातृभिः ॥ १ ॥

अर्थ—द्विभुजी श्रीदाशरथी रामको मैं वन्दना करता हूँ, जो दाशरथी राम दोनों हाथ में धनुष वाण धारण किये हैं, श्याम रंग जिनका स्वरूप है, किशोर षोडश वर्ष की जिनकी अवस्था है जिन परब्रह्म श्रीरामजी से दूसरा परतत्त्व कोई भी नहीं है, जो श्रीरामजी सच्चित् रसात्मक स्वरूप हैं, अर्थात् सच्चि-

दानन्द स्वरूप हैं, जो परब्रह्म श्रीजानकीजी के साथ में सम्पूर्ण मणिग्रीव सुशीलादि सखा और चारुशीला चन्द्रकला विमला आदि सखियों के साथ तथा श्रीभरतादिक भाइयों के साथ विरजा नदी के परे पार जो सर्वोपरि गोलोक है जिनके मध्यमें श्रीसाकेत नगर दशकोटि योजन विस्तार वाला है जिसको कि श्रीवाल्मीकीय तथा महाभारतादि ग्रन्थों में सांतानिक लोक कहके वर्णन किया है उस साकेत नगर में नित्यप्रति विहार करते हैं ॥ १ ॥ श्रीसाकेत लोकका वर्णन विस्तारपूर्वक (उपासनात्रय सिद्धान्त) नामक ग्रन्थ में किया गया है वहां देखिये ।

वात्सल्यादिगुणैः पूर्णां शृङ्गारादिरसाश्रयाम् ।
लक्ष्म्यादिसेवितां वन्दे मैथिलीं राघवप्रियाम् ॥

अर्थ—अब श्रीराघवजीकी प्राणप्रिया श्रीमैथिलीजी अर्थात् श्रीजानकीजी की वन्दना करता हूँ, जो श्रीराघवजी की प्राणप्यारी हैं और वात्सल्यादि गुण करके परिपूर्ण हैं, रसिकजन के आश्रय देने वाली हैं, और लक्ष्मी आदि शक्तियों करके सेवित हैं ।

हरेर्धाम्नां परां नित्यामयोध्यां सरयूं तथा ।
लक्ष्मणं भरतं वन्दे शत्रुघ्नं मरुतात्मजम् ॥

अर्थ--श्रीरामजी का नित्यधाम जो श्रीअयोध्याजी है, जिसके नन्दिनी, सत्या, साकेत, कोशला राजधानी, ब्रह्मपुरी, अपराजिता आदि नाम हैं तिनकी और श्रीसरयूजी तथा श्रीभरतजी, लक्ष्मणजी शत्रुघ्नजी श्रीहनुमान्जी इन सबकी वन्दना करता हूँ ।

श्री मंत्ररामायणे ।

रामायण द्रुमंनौमि रामरक्षा नवांकुरम् ।
गायत्री बीज मम्नाय मूलं मोक्ष महाफलम् ॥

अर्थात् श्रीरामायण रूप वृक्षको मैं नमस्कार करता हूँ, जिसकी गायत्री बीज है, रामरक्षा स्तोत्र नवीन अङ्कुर है, वेदमूल है मोक्ष महाफल है ।

अब हम इस अपूर्व ग्रन्थ श्रीवेदार्थप्रकाशरामायण को गुरु शिष्य के सम्वाद से वर्णन करते हैं, कारण कि जितने श्रुति, स्मृति, पुराण इतिहास, रामायण, महाभारत, तंत्र, रहस्य, नाटकादि ग्रन्थ हैं सो सब गुरु शिष्य और श्रोता वक्ता करके युक्त हैं, इसी से हम भी वर्णन करते हैं जिनको विचार के सहित देखने से व श्रवण करने से तत्काल वेदार्थतत्त्व का यथार्थ बोध होगा इसमें सन्देह नहीं।

शिष्यउवाच—

भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि तत्त्वं वेदार्थनिश्चयम्।
किमस्ति वै दयासिन्धो कथयस्व महामते ॥ ४ ॥

अर्थ—हे दया के समुद्र, श्रीगुरुदेव आप बड़े बुद्धिमान् और समर्थ हैं, इससे निश्चयात्मक वेदार्थतत्त्व क्या है सो निश्चय करके कहिये, मुझे सुनने की इच्छा है, भाव—यह कि वेदार्थ सब पदार्थ है परन्तु वेदका मुख्यार्थ क्या है, जिससे वेदकी स्थिति है सो कृपा करके कहिये, जिससे कि वेदका यथार्थ तत्त्व प्रकट हो।

श्रीगुरुरुवाच—

शृणु तात प्रवक्ष्यामि, तत्त्वं वेदार्थनिश्चयम्।
गुह्याद्गुह्यतरं गुह्यं, यं ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥

अर्थ—हे तात, तुम्हारा जो प्रश्न है सो ठीक है और सबका उपकारी है, कारण कि तत्त्व का बोध हुये बिना जीवका कल्याण होना दुर्लभ है इससे तत्त्व का प्राप्त होना इस समयमें बहुत ही कठिन है, कारण कि सर्वत्र कलियुग के प्रभाव से पाखण्ड मतका प्रचार होरहा है तत्त्व गुप्त होरहा है, परन्तु आज हम वह वेदार्थतत्त्व जो कि गुप्तसे गुप्त है सो सब भिन्न २ करके कहते हैं, जिनको जान के तुम संसार के दुःखों से तर जाओगे। हे शिष्य, इसीप्रकार का प्रश्न पार्वतीजी ने श्रीशंकरजी से किया तब जगद्गुरु श्रीशंकरजी ने कहा सो यह प्रसंग विस्तारपूर्वक माहेश्वरतन्त्र, सुन्दरीतन्त्र, में और शिव संहिता आदि ग्रन्थों में प्रसिद्ध है शिवजीने पार्वतीजी से कहा है और ब्रह्माजी

देखिके मूलप्रकृति श्रीजानकीजी ने प्रभुसे प्रार्थना की कि हे दयाकेसागर यह जो संपूर्ण जीव हैं सो सब बिना आपको जाने क्लेश भोगरहे हैं, सो इन सबके कल्याणार्थ कुछ उपाय करिये, जिसमें कि सब जीव आप के शान्ति, क्षमा, दया करुणा, वात्सल्यादि गुणोंको जानकर आपको प्राप्त हों। तब श्रीरामजी ने वेद प्रकट किया। हे शिष्य! (विद्ज्ञाने—) धातुसे वेद शब्द बनता है इससे वेदनाम हुआ। भाव यह जिससे कि ईश्वरज्ञान यथार्थ हो उसको वेद कहना चाहिये, सो सब जीवों को वेदार्थ ईश्वरज्ञान यथार्थ न भया वेदका जानना कठिन होगया तब पुनः श्रीजानकीजीने प्रार्थना की तब रामजीने व्याकरण शास्त्र प्रकट किया, जिससे कि वेदार्थ में प्रवेश हो सो न भया सब व्याकरण पढ़के वादविवादमें पड़गये सर्व वेदोंका तात्पर्य ईश्वर भजन न जाना। पुनः श्रीजानकी ने प्रभुसे प्रार्थना की। तब श्रीरामजाने चतुर्व्यूहरूप अर्थात् अनिरुद्ध १-प्रद्युम्न २—संकर्षण ३—वासुदेव ४—यहचार स्वरूप धारण किये। इससे भी सबको सुलभ न देखकर श्रीजानकीजी फिर बोली।

श्रीसीतोवाच—

चतुर्व्यूहंसमाधत्त सृष्टिस्थित्यन्तकारणात्।
न सुलभासि सर्वेषां देवदेव जगत्पते॥ ८॥

अर्थ—हे जगत्पते! आपने जो चतुर्व्यूह रूपको धारण किया सो तो केवल सृष्टि के उत्पत्ति पालन संहारके लिये यह रूप सबको सुलभ नहीं हैं। तव अन्तर्यामी रूपधारण कर सब चराचर में बसे वह भी सब को सुलभ न देखकर श्रीजानकीजी बोली यह स्वरूप केवल ज्ञानियों के लिये है सबके लिये नहीं। तव श्रीरामजीने चतुर्भुज पर स्वरूप नारायण का धारण किया। पुनः सुलभ न मान कर फिर बोलीं कि यह भी केवल ज्ञाता के लिये सुलभ है, तव श्रीरामजी ने नाना प्रकार के अवतार धारण किये फिरभी जानकीजी बोलीं कि इन अवतारों की न तो लीला उत्तम है न रूपही सुन्दर है, यह भी सब को सुलभ नहीं तव प्रभु दयालुने चार प्रकार के अर्चा अवतार धारण किये फिर भी सुलभता न मानी तव श्रीरामजी बोले—

ब्रूहि देवि यथा तथ्यं यत्तेमनसि वर्तते।
तथैवाहं करिष्यामि सत्यं सत्यं न चान्यथा॥

श्री सीतोवाच ।

देवदेव दयासिन्धो भक्तानुग्रह कारक ।
जीवानां दुःखनाशार्थं यत्नं कुरु ममप्प्रभो ॥
सीतायाः वचनं श्रुत्यारामो राजीवलोचनः ।
जीवानां दुःखनाशार्थं तत्वज्ञानार्थ दर्शनम् ॥
प्रवृत्तं च निवृत्तं द्विविधं कर्म वैदिकम् ।
तदेवस्वात्म क्रीडार्थभूमौ रामविनिर्मित ॥
प्रवृत्तिस्तु पुरीलंका नानारत्नसमन्विता ।
निवृत्तिश्चपराऽयोध्या सर्वलोक नमस्कृता ।
प्रवृत्तिरूप लंकायां जायतेमोहरावणः ।
अहंकारः कुम्भकर्णःजीवोनित्य विभीषणः ॥

अर्थात्—श्री जानकीजी के बचन सुनकर प्रभु बोले कि हे देवि ! जो तुम्हारे मनमें है सो कहो हम वही करेंगे सत्य है सत्य है झूठ नहीं। तब श्री जानकी बोलीं कि हे भगवन् ! आपने जो प्रवृत्ति निवृत्ति दो धर्म बेद में कथन किए हैं। सोई दोनों सिद्धांत नाना प्रकार के शरीर धारण करके लीला करें जिसे कि वेद पढे न पढे सबको आपकी लीलाऽनुकरण देखने से वेद का तत्वबोध हो जावे सो करिए। यह बचन सुनकर श्रीरामजी ने वेदतत्व प्रकाशित करने के लिये बेद में जो प्रवृत्ति निवृत्ति दो प्रकारके कर्म हैं, सोई अपने क्रीडार्थ पृथ्वी में निर्माण किए। उसमें प्रवृति लङ्कापुरी नाना रत्नों करके युक्त है। निवृति श्री अयोध्या जी हैं जो सबलोकों करके बन्दनीय हैं। प्रवृति रूप लंका में मोह रावण हुआ अहंकार कुम्भकर्ण हुआ नित्य जीव श्री विभीषणजी हुए। और निवृत्ति अयोध्या पुरी के अधिपति वेदका अवतार श्रीदशरथजी हुए और मोक्षके अधिष्ठाता रामजीने जन्मधारण किये हैं इसीसे अयोध्याजी का नाम शास्त्र में ऐसा कहा है ॥

सर्वोप पातकैयु क्तैर्ब्रह्महत्यादिपातकैः।
न योध्या सर्वतो यस्मात्तामयोध्यां ततो विदुः ॥९॥

अर्थ—रुद्रयामलमें शिवजीने पार्वतीजीसे यों कहा है कि संपूर्ण पापों के सहित ब्रह्महत्यादि भारी पाप जिससे न जीतसके उसको अयोध्या कहते हैं सो निवृत्ति है (प्रश्न—) हे स्वामीजी महाराज!! प्रवृत्ति किसको कहते हैं और निवृत्ति किसको सो कृपा करके कहिये (उत्तर—) हेशिष्य ! भागवत ७ स्कन्ध के १५ अध्यायमें ऐसा कहा है।

प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म वैदिकम्।
आवर्तेत प्रवृत्तेन निवृत्तेनाश्नुतेऽमृतम् ॥ १० ॥

अर्थ—प्रवृत्ति अर्थात् माया में आसक्त रहना और निवृत्ति नाम सबसे रहित होना यह दो प्रकार के वैदिक कर्म हैं तिनमें प्रवृत्ति करके जन्ममरण है और निवृत्ति करके मोक्षकी प्राप्ति है इस प्रकारसे कहा है इससे प्रवृत्ति लंकापुरी है तिसमें मोह का अवतार रावण है और मोहके वश होकर सब लोक रोरहे हैं इससे [लोकान् रावेतीति रावणः] अर्थात् सबको रुवावे उसको रावण कहिये महर्षिजी कहते हैं [रावणो लोक रावणः] अथवा अनन्य रामभक्त योगिराज शिवके कैलास पर्वतके नीचेदबे जो मोहरूपरावण इससे [स्वयं रावेतीति रावणः] नामहुआ और दशों इन्द्रियां जोहैं वही तो मोहरूपी रावण के दशोंशिर हैं हे शिष्य, (पिण्डे स ब्रह्माण्डे) इत्यादि प्रमाणसे जो कुछ वेदमें कथनहै सो सब ब्रह्माण्डमें रचनाहै और जो २ ब्रह्माण्डमें है सो सब शरीरमें है और जो २ शरीरमें है सोई सब लंका और अयोध्याजीमें हैं तहां मोहका अवतार रावण है, अहंकारका अवतार कुम्भकर्णहै, कामका अवतार मेघनादहै लोभ अतिकायका अवतार है मत्सरका अवतार महोदर हैं क्रोधदेवांतक का अवतार है द्वेष दुर्मुख का अवतार हैं. दम्भ खरका अवतार है, कपट अकंपनका अवतार है, दर्प नरान्तकका अवतार है, मद शूलपाणी का अवतार है और भी मोहके सहायक अनेकों राक्षस हैं तिन सबके बीचमें जीव श्रीविभीषण जी का अवतारहै जिनके वास्ते श्रीरामजी ने अवतार धारण करके मोहरूपी रावण को कुल सहित संहार करके विभीषण का उद्धार किया, हे शिष्य, इसीसे गोस्वामि श्री तुलसीदास जी ने रामायणमें कहा है कि—

अस कहि चला बिभीषण जबहीं। आयू हीन भये सब तबही॥

इहां पर बिभीषण जी जब लंका को छोड़कर रामजी के शरणमें चले तबहीं सब राक्षस आयुसे हीन होगये, भाव विभीषण जीवका अवतार है इससे सबको आयु हीन कहा (प्रश्न) हेस्वामी जी, इस गुप्त भेदको भली भांति विस्तारपूर्वक वर्णन करिये काहेसे कि हमको सुनने की बड़ी इच्छा है। बिना विस्तार से कहे बोध होना दुर्लभ है (उत्तर) हे शिष्य, इस भेदको विस्तारसे कहने का सामर्थ्य मेरे में नहीं है परन्तु कुछ कहते हैं तुम श्रवण करो बेदही राजा दशरथजीका अवतार हैं और चारवेद और चार उपवेद और साध्य साधनदो यह सब मिलाकर दशांगरथ नाम जिसमें हो सो दशरथ नाम वेद का है। यथा प्रमाण—

> आयुर्वेदो धनुर्वेदो गांधर्वं चार्थदर्शनम्।
> इतीमानि दशांगानि रथनामानि यस्य सः ॥११॥
> ज्ञेयो दशरथो वेदः साध्यसाधनदर्शनः।

अर्थ—हे शिष्य, शिवसंहिता में विस्तार से शिवजी ने पार्वती से कहा है कि सामवेद १, ऋग्वेद २, यजुर्वेद ३, अथर्वण ४, और उपवेद चार तिनमें आयुर्वेद ५, धनुर्वेद ६, गांधर्ववेद ७, अर्थदर्शन आथर्व्ववेद ८, साध्य ९, साधन १० यह दशांगरथ नाम जिसका हो उसको वेद के अवतार दशरथ जानो (प्रश्न—) वे स्वामी जी, कोई २ वेदान्ती लोग तो ज्ञानको दशरथ कहते हैं आप बेदको कहते है यह परस्पर भेद क्यों है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, ज्ञानका और वेदका परस्पर कुछभी भेद नहीं है काहे से कि ज्ञान का और वेदका तात्पर्य एकही है (ज्ञाअवबोधने) धातु से ज्ञानबना है और (विद्ज्ञाने) धातुसे वेदबना है इससे एकही अर्थ है, जानने ही को ज्ञान कहते हैं और जानने ही को वेद कहते हैं इससे दशों इन्द्रियाँ जिनके रथहों सो कहिये दशरथ नाम ज्ञान और जो कोई दशनाम पक्षी गरुड़ है जिनके रथ में सो नारायण हैं दशरथ ऐसा कहते हैं सो ठीकनहीं काहे से कि जो नारायण दशरथ भये तो रामजी का पुत्रहोना विरुद्ध है और दशों दिशामें रथजाने से यदि दशरथ कहो तो सोभी विरुद्ध है काहेसे सब रघुवंशी राजा चक्रवर्त्ती भये हैं सबके रथ दशों दिशामें गये हैं इससे पूर्वोक्त ही दशरथ अर्थ ठीक है काहेसे

कि वहाँ प्रवृत्तिरूप लंकापुरीका अधिपति मोह रावण है जिनके दशों इन्द्रियाँ दशोंशिर हैं और इहाँपर निवृतिरूप अयोध्यापुरी के अधिपति ज्ञान दशरथजीहैं जिनके दशों इन्द्रियाँ रथ हैं हे शिष्य, जबराजाको पुत्रनहीं हुआ तब गुरु वशिष्ठ जी ने पुत्रेष्टी यज्ञ कराया है उससे दथरथ रूप वेदहीने अवतार लिया है और जैसे राजा दशरथजी पुत्रेष्टी यज्ञसे भये हैं तैसेही श्रीरामजी भी चारोंभाई पुत्रेष्टी यज्ञसे भये हैं इहाँ पर रजबीजका कोई प्रसंग नहीं काहेसे कि ब्रम्हका और ज्ञानका अवतार है इससे यज्ञही द्वारा अवतार लिखा है तैसेही जानकी जी भी ज्ञानी राजा जनकजी के यज्ञमें ही पृथ्वी से भई हैं इसीसे विद्वान् लोग रामावतार को सर्वोपरि वेदका तत्व कहते हैं और हे शिष्य, पक्षपात को छोड़ कर देखो रामावतार के समान दूसरा कोई भी अवतार नहीं है इससे श्रीसीता रामजी सर्वोपरि हैं और सबके आदि कारण हैं और वेदने जो अवतार धारण किया है सो केवल मर्यादापालन और धर्मवृद्धि के निमित्त । यथा—

शिवसंहितायाम् ।

जज्ञेऽसौ यज्वनां वंशे इक्ष्वाकूणां महात्मनाम् ॥१२॥
मर्यादापालनायैव लोकानां धर्मवृद्धये ।

अर्थ—यह वेदने केवल मर्यादापालन के लिये और लोकों के धर्मवृद्धि के निमित्त अज महाराज इक्ष्वाकूवशीय के कुल में यज्ञ से अवतार लिया इससे हे शिष्य, जो जो धर्म वेद में वर्णन हैं सो सब आचरण दशरथजीने किये हैं और अन्तसमय में श्रीरामजी के विरहानल में शरीर को छोड़ दिये इसका भावयही है कि वेदकी स्थिति ईश्वर ही करके है ईश्वर विना वेद नहीं हैं दूसरे एक यहभी दिखाया श्रीसीतारामजी हमारे साक्षात् प्राण हैं, इससे रामजीका भजन करो यह उपदेश हुआ (प्रश्न-) हे स्वामीजी, कृपालु, वेदका अवतार तो श्रीदशरथजी हैं, और तीनों रानी कौन हैं सो कहिए (उत्तर—) हे शिष्य, तीनों रानी त्रिकाण्डशक्ति के अवतार हैं । यथा प्रमाण—

राजाऽत्मनावरीवर्त्ति शक्तित्रयसमन्वितः ॥१३॥
त्रिकाण्डोऽखण्डरूपार्थो ब्रह्माण्डेशमखालयः ।
शब्दरूपेण विप्राणामास्येषु निवसत्यसौ ॥१४॥

अर्थ—जो वेद संपूर्ण ब्रम्हाण्ड में त्रिकाण्ड अखंड अर्थ यज्ञ रूप होकर व्याप्त है ओर ब्राम्हणों के मुख में शब्दरूपहो करके निवास करते हैं सोइयह वेद राजाऽत्मावरोवर्त्तिक है तीनों शक्ति करके युक्त राजा दशरथ शोभित हुए हैं।

क्रियाज्ञानं तथोपास्तिरिति शक्तित्रयी शितुः।
एकैका बहुबिस्तारा फलस्फारा प्रमात्मिका ॥१५॥
तासां क्रिया तु कैकेयी सुमित्रोपासनात्मिका।
ज्ञानशक्तिश्च कौशल्या वेदो दशरथो नृपः ॥१६॥

अर्थ—क्रियाशक्ति, ज्ञानशक्ति, तथा उपासनाशक्ति, इस प्रकारकी जो ईश्वरीय तीनों सक्ति हैं तिनके एक २ फल का जो विस्तार है सो बहुत ही है तिनमें क्रियाशक्ति कैकेयीजी हैं, और सुमित्राजी उपासनाशक्ति हैं, और कौशल्याजी ज्ञानशक्ति हैं, वेद राजा दशरथजी हैं। हे शिष्य, इहां पर स्पष्ट कर दिया इस से श्रीरामावतार साक्षात् बेदार्थ है इसमें संदेह करना उचित नहीं और इसी प्रकार से गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी ने रामायण में भी कहा है (प्रश्न-) हेस्वामीजी, गोस्वामीजी ने रामायण में कहां पर कहा है सो कृपा करके कहिये (उत्तर—) हेशिष्य, गोस्वामीजीने रामजन्म के प्रकरण में कहा है। यथा—चौपाई।

अवधपुरी रघुकुलमणि राऊ। वेद बिदित तेहि दशरथ नाऊ
धरम धुरंधर गुणनिधि ज्ञानी।हृदय भगति मति शारंगपानी

अर्थ-श्रीगोस्वामीजी, कहते हैं कि अवधपुरी अर्थात् जहां किसी का वध नाम मृत्यु न हो ऐसी निवृतिरूप अयोध्याजी जहां पर रघुकुल में मणि के समान प्रकाश करने वाले राजा हुए जिनका वेद में विदित नाम प्रसिद्ध अथवा स्वयं वेदही प्रसिद्ध दशरथ नाम करके हुए (प्रश्न) हे स्वामीजी, वेद में तो त्रिकाण्ड प्रतिपादन है इहां दशरथजी में त्रिकाण्ड क्या है सो कहिये। [उत्तर] हे शिष्य, सुनो वह दशरथजी कैसे हैं कि धर्मका धुरा धारण करने वाले गुणी हैं इहां तक तो कर्मकाण्ड है और ज्ञानी हैं इससे ज्ञानकाण्ड कहा शारंगपानी श्रीरामजीकी भक्तिमति नाम भक्तिमें बुद्धि है इससे उपासनाकाण्ड कहा, भाव

तीनों काण्ड करके युक्त हैं, और जो कहो कि तीनों शक्ति कहां हैं सो आगे कहते हैं ॥

कौशल्यादिक नारि प्रिय, सब आचरन पुनीत।
पतिअनुकूल प्रेमदृढ़, हरिपदकमल बिनीत ॥

अर्थ—इहाँ पर कौशल्यादि कहने से तीनही रानी हैं ३६० अथवा ३५० रानी नहीं लेना काहे से कि इसी के आगे हविष्य बांटने के समय में कहा है॥

तबहिं राव प्रिय नारि बुलाई। कौशल्यादि तहाँ चलि आई॥

इत्यादि कहाहै इससे गोस्वामीजी कहतेहैंकि कौशल्यादि तीनों स्त्री जोहैं सो महाराजको प्रिय हैं और सब रानी आचरण करके पुनीत नाम पवित्र ह भाव कर्मकाण्ड करके युक्त हैं इससे कर्मकाण्ड दिखाया और पति अनुकूल प्रेमदृढ़से पतिकी आज्ञा में रहती हैं जिनका स्वामी सेवामें दृढ़प्रेम है इससे ज्ञानकाण्ड दिखाया और हरिपदकमलबिनीत से उपासनाकाण्ड दिखाया भाव राजा रानी सब कोई वेदार्थ आचरणमें चतुर हैं। हेशिष्य! इसी प्रकारसे गोस्वामीजी ने सब कुछ कहा है केवल अपनेको ज्ञान होना चाहिये अब आगे तीनों रानी के फल श्रवण करो जिनके श्रवण करनेसे आनन्द होगा। यथा—

क्रियायां कलहो दृष्टो दृष्टा प्रीतिरुपासने।
ज्ञानेनात्मसुखं नित्यं दृष्टं निर्हेतु निर्मलम् ॥१७॥

अर्थ—तिनमें क्रियाशक्ति कैकेयी में कलह देखा कि जिन्होंने रामजीको बनवास भेजकर सबको दुःख दिया और देवताओंको सुख दिया काहेसे कि कर्म ही के करने से देवलोक जाते हैं और उपासना शक्ति सुमित्राजी में प्रीति देखी कि जिन्होने बड़े आनन्द मन होकर श्रीलक्ष्मणजीको श्रीसीतारामजी के साथ में भेज दिया और नानाप्रकार की भक्ति को कहा। यथा-

पुत्रवती युवती जग सोई। रघुवर भक्त जासु सुत होई॥
न तरुबांझभलि बादि बिआनी। राम बिमुखसुतते हितहानी॥
तुम्हरे भाग राम बन जाहीं। दूसर हेतु तात कछु नाहीं॥

इसी प्रकारसे बहुत कहा है इससे उपासनाका स्वरूप यथार्थ दिखाया भाव माता सुमित्राजीकी समान होना चाहिये जो कि भगवत्भक्तिका उपदेश देवे नहीं तो वृथा है। हे शिष्य, ऐसेही, महर्षि बाल्मीकिजी ने कहा है। यथा-

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम्।
अयोध्यामटविं विद्धि गच्छ तात यथासुखम् ॥१८॥

अर्थ—रामजी को दशरथजी के समान और जानकीजी को मेरे समान बनको अयोध्याजी के समान जानो और सुख पूर्वक जावो इत्यादि कहा है इससे उपासना में भगवत्प्रीति दिखाई और ज्ञानशक्ति कौशल्याजीकरके नित्य निर्मल कारण रहित आत्मसुख को दिखाया इसीसे जब रामजी बनको जानेलगे तब श्रीकौशल्याजी मौन होगई और किसी को दोष नहीं दिया काहेसे कि दोष देना वृथा है। हे शिष्य, इससे वेदार्थ यह उपदेश हुआ कि क्रियाकाण्ड का फल केवल दुःख है और उपासनाकाण्ड का फल श्रीसीतारामजी की प्रीति होना और ज्ञानकाण्ड का फल केवल आत्मसुख है यह सिद्धहुआ और दशरथजी के द्वारा सत्यका और स्त्रीके वश न होना और रामजीमें अखंड प्रेम रखना चाहिये यहतीन बात विशेष करके उपदेश हुआ इसके सिवाय सब उपदेश ही है काहेसे कि रामावतार में जो कुछ कहा है और किया है सो सम्पूर्ण उपदेश ही है दूसरा कुछ नहीं (प्रश्न—) हे स्वामी जी, चारोंभाई कौन हैं और क्या २ उपदेश करने के निमित्त अवतार लिये हैं कृपाकरके कहिये। (उत्तर—) हेशिष्य, सावधान होकर सुनो।

तुरीया जानजी प्रोक्ता तुरीयो रघुनन्दनः।
एकमेव द्विधा जातौ भक्तिब्रह्मस्वरूपिणा ॥१६॥

अर्थ—तुरीया श्रीजानकीजी हैं और तुरीय श्रीरामजी हैं दोनों एकही हैं परन्तु संसार का उद्धार करने के वास्ते भक्तिरूप जानकीजी और ब्रह्मस्वरूप श्रीरामजी अवतार धारण किए हैं सो केवल मोक्षमार्ग दिखाने के निमित्त ही और कारण नहीं सो आगे नाम प्रकरण मे कहेंगे हे शिष्य, अब भरतजी के द्वारा धर्म का उपदेश विस्तार से श्रवण करो। यथा प्रमाण—

सर्वधर्मः क्रिया जन्मसर्गादिस्थितिकारणम् ।
कैकेय्याख्यक्रियायान्तु जातोयं भरतात्मना ॥२०॥
सर्वेषां जगतां नित्यं धारणाद्भरणाच्च सः ।
भव्यवस्तुरतत्त्वाच्च ख्यातोऽसौ भरताऽख्यया ॥२१॥
क्रियाकाण्डस्य शास्तासावैश्वर्यस्यापि शक्तिभृत् ।
पक्षपाती च धर्माणामधिष्ठाता प्रतिष्ठितः ॥२२॥

अर्थ—संपूर्ण धर्म जोकि सृष्टि का आदि अन्त अर्थात् उत्पत्ति पालन करने वाला है सो क्रियाशक्ति कैकेयी में भरत होकर जन्म लिया और सब संसार को जो नित्य पोषण पालन करे और मङ्गल वस्तु में जो रतहो इसको भरत करके कथन किया है। यथा—

विश्वभरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई॥

इत्यादि गोस्वामीजीने भी कहा है। भावार्थ—यह है कि क्रियाकाण्ड रूप कैकेयी करके संसारकी उत्पत्ति और धर्मरूप भरत करके पोषण पालन होना यह दिखाया "भरतीति भरतः" नाम हुआ पुनः वह भरतजी कैसे हैं कि क्रियाकाण्ड के शास्ता नाम शिक्षा करने वाले और धर्म के पक्षपाती तथा अधिपति हैं। हेशिष्य, इसीसे रामजी के बन जाने के पीछे सबका संदेह दूर करने के निमित्त धर्मकी सौगन्ध खाई है सो विस्तार से श्रीवाल्मीकीयरामायण के अयोध्याकाण्ड में प्रसिद्ध है और गोस्वामीजीने भी कहा है इससे धर्मका पक्षपाती और अधिष्ठाता कहा। हेशिष्य, अब लक्ष्मणजी को कामका अवतार सुनो। यथा—

सुमित्रारूपशक्त्या तु जनितो लक्ष्मणोऽर्भकः ।
भक्त्यापरियतो दासः सखासेवादिदैशिकः ॥२३॥
भगवद्रामदेवस्य कल्याणगुणशालिनः ।
अर्चनीयांघ्रिपद्मस्य दातुश्चानन्दसंपदाम् ॥२४॥

सर्वेषां लोककामानां व्यवस्थापकताश्रितः।
सर्वेषां रामकामानां नित्यानामपि साधकः ॥२५॥
कामाख्यपुरुषार्थस्य नेता लक्ष्मण उच्यते।
भक्तानां पक्षपाती च रामोद्देशे धृतव्रतः ॥ २६ ॥

अर्थ—और सुमित्रारूप उपासनाशक्ति ने लक्ष्मण पुत्र उत्पन्न किया जोकि सर्व भक्तन में श्रेष्ठ और सखा सेवादिधर्म के दैशिक नाम आचार्य्य हैं पुनः वह लक्ष्मणजी कैसे हैं कि श्रीसीतारामजी के चरणकमल के बड़े पूजक हैं और आनन्दरूप सम्पत्तिके देने वाले हैं इसी से सबको छोड़कर रामजी के साथ बन को चलेगये ऐसे अनन्यदास हैं फिर कैसे हैं कि सम्पूर्ण लोकोंको काम व्यवस्थापक नाम विशेष करके वेदार्थ कामको भिन्न २ प्रतिपादन करने वाले हैं और शासनपूर्वक कराने वाले हैं और रामजी का भी जो नित्य काम है सेवादि अथवा मेघनाद का वध करना तिनके भी साधक हैं और काम जो नित्य पुरुषार्थ है उसको नियमपूर्वक करने और कराने वाले को लक्ष्मण कहते हैं लक्ष्म कहि चिन्ह करके जो युक्त हों सो कहिये लक्ष्मण, गोस्वामीजी ने भी कहा है—

लक्षण धाम राम प्रिय, सकल जगत अधार।
गुरु वसिष्ठ तेहि राखा, लछिमन नाम उदार॥

इत्यादि कहा है और भक्तों के पक्षपाती हैं और रामजी के विषय में बड़े उपदेश करने वाले हैं यही जिन्होंने दृढ़व्रत होकर धारण किये हैं। हे शिष्य, अब शत्रुघ्नजी को अर्थसाधक कहिके वर्णन करते हैं। यथाप्रमाण—

शत्रुघ्नो नित्यशत्रुघ्नो रामरामजनाऽवलेः।
तयैव जनितो देव्या रामप्राणसमोनुज॥ २७॥
अर्थाख्यपुरुषार्थस्याध्यक्षः शिक्षासु दक्षिणः।
श्रीरामभक्तभक्तानां पक्षपाती विचक्षणः ॥२८॥

श्रीरामायुधयूथानां राजारत्नभुजांवरः।
शस्त्रशास्त्रसमूहज्ञो रामप्रेमामितोत्सुकः॥ २९॥

अर्थ—शत्रुघ्नजी श्रीरामजी के जन अर्थात् रामभक्तों के समूह हैं तिनके जो नित्य शत्रु हैं काम क्रोध लोभ मद मोहादिक तिनके नाश करने वाले हैं उन्हीं शत्रुघ्नजी को सुमित्रा देवीने उत्पन्न किया जो कि रामजीको प्राण समान प्रिय छोटे भाई हैं और कैसे हैं कि अर्थ करके जो पुरुषार्थ कथन है तेहिके अध्यक्ष नाम मालिक हैं और अर्थ शिक्षा में बड़े चतुर हैं और रामजी के जो भक्त लोग हैं तिनके पक्षपाती सेवक हैं। हे शिष्य, इसी से शत्रुघ्नजी ने भरत जी की सेवा को अंगीकार किया है पुनः वह शत्रुघ्नजी कैसे हैं कि रामायुध अर्थात् रामजी के जो आयुध नाम अस्त्र शस्त्र का समूह है तिनके जानने वाले हैं और राजाओं में श्रेष्ठ हैं और श्रीरामजी के अमित प्रेममें विह्वल रहते हैं ऐसेही गोस्वामीजीने भी कहा है। यथा—जाके सुमिरन ते रिपु नाशा। नाम शत्रुहन वेद प्रकाशा॥ इत्यादि।

अब श्रीरामावतार मोक्षाख्य पुरुषार्थ सुनो। यथा—

लोके रमयतां पुंसामेक मद्वैत धर्मिणाम्।
कौशल्या सुषुवेयत्तु कर्त्तारं जगतां सुतम्॥
मोक्षाख्यपुरुषार्थस्य भर्त्ताऽसौजगतांपतिः।
श्रीरामोराम इत्युक्त ऋषिभिस्त्वेक ईश्वरः॥

अर्थात्—एक अद्वितीय धर्मात्मा पुरुषों के हृदय में जो रमण करते हैं उन्हीं संसार कर्त्ताको श्रीकौशल्याजीने उत्पन्न किया। यह प्रभु कैसे हैं कि जगत्के पति हैं और मोक्षाख्य पुरुषार्थ के पति हैं जो "रमन्ते योगिनोनन्ते" इस श्रुतिके अनुसार योगियों के हृदय में रमण करने से अथवा योगि लोग जिनमें रमण करते हैं इसलिए ऋषियों करके एक ईश्वर श्रीरामजी कहे गए हैं इसलिए श्रीरामजी सर्वोपरि हैं। हे शिष्य, इसी प्रकार से शिवसंहित के पंचम पटल में विस्तार से कहा है इसका मुख्यार्थ यह है कि वेद राजा दशरथजी और त्रिकाण्डशक्ति तीनों रानी हैं और अर्थ धर्म काम मोक्ष चारों भाई हैं

और चारों महारानी श्रुतिकीर्त्ति १, उर्मिला २, माण्डवी ३, श्रीसीताजी ४, यही चारों क्रियाँ चारों फलोंकी प्राप्ति कराने वाली हैं यही वेदका तत्व है। यथा-धरे नाम गुरु हृदय बिचारी। वेदतत्व नृप तव सुतचारी॥ इत्यादि कहा है और श्रुति में भी ऐसा कहा है॥

अकाराक्षरसंभूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः।
उकाराक्षरसंभूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः॥ ३०॥
प्राज्ञात्मकस्तु भरतो मकाराक्षरसंभवः।
अर्द्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रहः॥३१॥

अर्थ—अकार अक्षर से श्रीलक्ष्मणजी हुये हैं जो विश्वभावन हैं अर्थात् समष्टि जाग्रदवस्थाऽभिमानीरूप होकर शरीर प्रतिजाग्रदवस्था साक्षी आत्मा विश्वसंज्ञक जीवों के नियामक हैं इसी प्रकार समष्टि स्वप्नावस्थाऽभिमानी होकर व्यष्टि स्वप्नावस्था साक्षी आत्मा तैजस संज्ञक जीवोंका नियामक शत्रुघ्न हैं सो उकार अक्षर से हुये हैं और समष्टि सुषुप्ति अवस्थाके अभिमानी होकर व्यष्टि सुषुप्ति अवस्था के साक्षी आत्मा प्राज्ञसंज्ञक जीवों के नियामक श्रीभरतजी मकार अक्षर से हुये हैं और अर्द्धमात्रा जो रेफ है सो सच्चिदानन्द का स्वरूप श्रीरामजी तुरीय अवस्था में रहकर सब जीवों के नियामक हैं इस प्रकार से कहा है। हे शिष्य, यही चारों अवस्था की साक्षी वेदार्थ चारों फल चार रूप धारण करके दिखाया हैं इसी प्रकार से गोस्वामीजी ने रामायण में कहा है। यथा—

छंद-सुन्दरी सुन्दर वरन्हसह सब एक मंडप राजहीं।
जनु जीवउरचारिउ अवस्था विभुन सहित बिराजहीं॥१॥
दोहा-मुदित अवधपति सकलसुत बधुन्ह समेत निहारि।
जनु पाये महिपालमनि क्रियनसहित फलचारि॥२॥

अर्थ— सुन्दरी चारों महारानीजी श्रुतिकीर्त्ति १, उर्मिला २, माण्डवी ३, श्रीजानकीजी ४, यह सुन्दरी चारों और शत्रुघ्न १, लक्ष्मण २, भरत ३, श्री

रामजी ४ इन चारों सुन्दर बरन्ह के सहित सुन्दरी एक मण्डप में कैसी शोभा देरही हैं कि जनु जीवके उर अर्थात् हृदय में चारिउ सुंदरी अवस्था जो स्वप्न१, सुषुप्ति २, जाग्रद् ३, तुरीया ४, है सोई विभुन नाम ऐश्वर्यन के सहित अर्थात् पूर्वोक्त विश्व १, तैजस २, प्राज्ञ ३, अन्तर्यामी ४, इति विभुन के सहित शोभित होरहे हैं इहां पर जनु उत्प्रेक्षालंकार हैं परन्तु कहना यथार्थ है और मण्डप जो कहा है सो कहनेमात्र है वास्तव में ज्ञानी राजा जनकजी के हृदय को मण्डप कहा है इसीसे चारों भाई को अङ्ग कहा और चारों महारानी को अङ्गी कहा ताते जीव जनकजी हैं और चारिउ महाराज और चारिउ महारानी को जो एकसमान कहा सो नारद पंचरात्र में प्रसिद्ध है। यथा—

हिरण्यवर्णां सीतां च माण्डवीं पाटलप्रभाम्।
उर्मिलां श्यामवर्णाभां श्रुतिकीर्तिसमप्रभाम् ॥ ३३ ॥

अर्थ—रामजी श्यामवर्ण श्रीजानकी हिरण्यवर्ण गोरी, भरतजी श्याम रंग के मांडवी गोरी, लक्ष्मणजी गौरवर्ण हैं उर्मिला श्याम हैं, शत्रुघ्नजी गौरवर्ण हैं श्रुतिकीर्ति श्याम हैं इस प्रकार से कहा है इससे जोड़ी कहा राजा जनकजी को कहकर अब दशरथजी को कहते हैं कि अवधपति राजा दशरथजी वधुन्ह नाम स्त्रियों के सहित चारिउ पुत्रको देखकर कैसे आनंद भये सो कहते हैं कि जनु महिपालमणि दशरथजी ने क्रियन के सहित चारि फल पाये अर्थात्— अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष यह चारि फल और क्रिया यथा—उद्यम १, अनुष्ठान २, रति ३, भक्ति ४, इति चारि क्रियन के सहित चारि फल पाये तहां पर अर्थ नाम द्रव्य सो विना उपाय किये नहीं प्राप्त होता है सो उद्योग क्रिया सुन्दर यशयुक्त श्रुतिकीर्तिजी हैं, और अर्थ शत्रुघ्नजी हैं । पुनः नानाप्रकार के धर्म सोई भरतजी हैं सो विना धर्मानुष्ठान किये प्राप्त नहीं होते हैं सो धर्मानुष्ठान क्रिया मांडवीजी हैं। और लोक संबंधी तथा भगवत्संबंधी जो नानाप्रकार के काम हैं अर्थात् भोग पदार्थ सोई तो लक्ष्मणजी हैं सो बिना दोनों संबंधी में प्रीति भये प्राप्त नहीं होते हैं सो प्रीतिक्रिया उर्मिला जी हैं । और मोक्ष के स्वरूप श्रीरामजी हैं सो नवधा भक्ति किये बिना प्राप्त नहीं होते हैं सो भक्ति क्रिया श्रीजानकीजी हैं इन सब का मिलान यथा—श्रीरामजी १, लक्ष्मणजी २, भरतजी ३, शत्रुघ्नजी ४, इति । अंतर्यामी १—विश्वात्मा २—प्राज्ञात्मा ३—

तैजसात्मा ४ चार पुनः तुरीया १—जाग्रत् २—सुषुप्ति ३—स्वप्ना ४-चार। पुनः मोक्ष १—काम २—धर्म ३—अर्थ ४ चार। भक्ति १, प्रीति २, अनुष्ठान ३, उद्योग ४ इस प्रकार से जानना चाहिये इससे वेदार्थ यथार्थ है । [प्रश्न—] हे स्वामीजी, श्रीरामजी ने चार भाई होकर क्या २ उपदेश किया सो विस्तार से कहिये। [उत्तर-] हेशिष्य, श्रीरामजी के द्वारा यह उपदेश हुआ कि सत्य बोलना, एक स्त्री व्रत रहना चाहिये पिताकी आज्ञा मानना, माता पिताकी सेवा करना, मरे पीछे माता पिता का श्राद्ध करना, साधु, ब्राह्मण, गौकी रक्षा करना, तथा इनकी सेवा करना, भाईपना रखना सब पर दया करना, सबको आदर देना. अभिमान नहीं करना, नीति से प्रजा पालना, वेद से विरुद्ध नास्तिकको दंड देना, सनातनधर्मकी रक्षा करना, गुरू करना विद्या पढ़ना, गुरुसेवा करनी, सन्ध्या करनी, वेद पढ़ना, भगवान् की मूर्तिपूजन, तीर्थव्रत सब करना। हे शिष्य, इसी प्रकार से सम्पूर्ण वेदोक्त धर्माचरण का उपदेश हुआ और लक्ष्मणजी के द्वारा अनन्य भगवत्सेवाधर्म उपदेश हुआ। [प्रश्न-] हे स्वामीजी अनन्यभगवत्सेवाधर्म क्या है सो कहिये। [उत्तर-] हे शिष्य! जब रामजी, बनको जाने लगे तब लक्ष्मणजीने आकर साथ के लिए प्रार्थना की उस समय रामजी ने संपूर्ण धर्म कहिके घर में रहने के निमित्त कहा, परन्तु लक्ष्मणजी नहीं रहे सब छोड़कर साथ चल दिये इससे लक्ष्मणजी ने यह दिखाया कि सर्वधर्मों को छोड़कर भगवत्स्मरण करना चाहिये जैसाकि गीता में भगवान् ने सब का सार सिद्धांत अर्जुन से कहा है। यथा प्रमाण अष्टादशाध्याये-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुच ॥ ३४॥

अर्थ-ब्राह्मण १, क्षत्रिय २, वैश्य ३, शूद्र ४, ब्रह्मचारी ५, गृहस्थ ६, वानप्रस्थ ७, संन्यस्त ८ इन वर्णाश्रमों का जो धर्म है इन सब धर्मों को हे अर्जुन तुम त्यागकर एक निरकेवल, मेरे शरण को प्राप्त हो जो कहो कि वर्णाश्रम के सर्व धर्मका त्याग का पाप होगा तिसपर भगवान् बोले कि सब पापोंको नाश करके मोक्ष देउँगा तुम मत शोचकरो। हे शिष्य, यह वचन गीता भरका सार है इसी धर्म को लक्ष्मणजीने उपदेश किया इससे सब छोड़कर भगवत् का भजन करना सर्वोपरि है इससे परे सिद्धान्त कुछ नहीं है और शत्रुघ्नजी के द्वारा भग-

वतसेवा धर्मका उपदेश भया कि सब छोड़कर साधु वैष्णव की सेवा करना चाहिये। [प्रश्न] हे स्वामीजी, शत्रुघ्नजी के द्वारा भागवतसेवा धर्मका कैसे उपदेश हुआ सो स्पष्ट करके कहिये। [उत्तर] हे शिष्य भगवत् का जो सेवक हो उसको भागवत कहते हैं सो भरतजी हैं तिनके आज्ञाकारी सेवक शत्रुघ्न जो हैं, इससे भागवतसेवा धर्म दिखाया कि भगवत् से भी तदीयाराधन श्रेष्ठ हैं इसीसे लक्ष्मण जीने जन्म ही से रामसेवा अंगीकार की और शत्रुघ्नजीने भरत जीकी सेवा ग्रहण की। यथा-बारहिं ते निज हितपति जानी। लछिमन रामचरण रति मानी॥ भरत शत्रुहन दूनौं भाई॥ प्रभुसेवक जस प्रीति बढ़ाई॥ इत्यादि गोस्वामीजीने कहा है इससे रामानुज लक्ष्मणजी हैं, भरतानुज शत्रुघ्न जो हैं। और कौशल्याजीने जो अपने हाथसे हविष्य सुमित्राजी को दिया उससे लक्ष्मणजी हुए हैं और कैकेयीजीने जो दिया है उससे शत्रुघ्नजी हुए हैं और भागवतसेवाधर्म भगवत्सेवासे भी श्रेष्ट हैं। यथा सुनु सुरेश उपदेश हमारा॥ रामहिं सेवक परमपियारा॥ मानत सुख सेवक सेवकाई। सेवक बैर बैर अधिकाई॥ इत्यादि रामायणमें कहा है पुनःभरद्वाजसंहिता में भगवद्वाक्य। यथा—

> मद्वंदनाच्छतगुणं मद्भक्तस्य तु वंदनम्।
> मद्भोजनाच्छतगुणं मद्भक्तस्य तु भोजनम्॥३५॥
> यो न पूजयते भक्त्या तमाहुर्ब्रह्मघातकम्।

अर्थ-मेरी वंदनासे सौगुण मेरे दासकी वंदना है, मेरे भोजनसे सौगुण मेरे दास के निमित्त भोजन है जो कोई मेरे दासका पूजन वंदन नहीं करता है उसको ब्रम्हघातक कहा है इसी प्रकार से सहस्रों वचन शास्त्र में प्रसिद्ध हैं ग्रन्थविस्तारके भयसे नहीं कहते हैं इससे साधु वैष्णवों की सेवा करनी चाहिये यह शत्रुघ्नजीके द्वारा उपदेश हुआ और भरतजीके द्वारा भगवत्पारतंत्रसेवा धर्मका उपदेश हुआ। [प्रश्न] हे स्वामीजी, भगवत्पारतंत्र सेवा क्या है सोकहिये [उत्तर] हे शिष्य, भरतजी जब सब छोड़के रामजी को लौटाने को चित्रकूट गये तब रामजी ने चौदह वर्ष के निमित्त आज्ञा देकर लौटा दिया उस आज्ञा को शिरपर धारण कर परवश अर्थात् महाराज की आज्ञा के वशी होकर

चौदह वर्ष पर्यंत अयोध्याजी में राज किया उससे भगवत् की आज्ञा-पूर्वक संसारीय व्यवहार करना और भगवत् भजन करना यह उपदेश हुआ और श्रीजानकीजी के द्वारा पतिव्रतादिक धर्म का उपदेश हुआ अर्थात् जैसे श्रीजानकीजी सब राजपाट छोड़ करके रामजी के साथ बनको गईं और अनन्य भावसे महराजकी सेवाकी तैसे ही स्त्री को पतिसेवा करनी चाहिये यह उपदेश हुआ । हे शिष्य इसका स्पष्टी करण यह है कि धर्म चार प्रकार के हैं । सामान्य धर्म १ विशेष धर्म २ विशेष तर धर्म ३ विशेषतम धर्म ४ उनमें सामान्य धर्म के उपदेशक श्रीरामजी हैं । इस धर्मानुष्ठान से जीवका कल्याण नहीं होता है । इसलिए श्रीरामजी के किया हुआ काम न करना चाहिए । जीव के लिए विशेष धर्म श्रीलक्ष्मणजी के किया हुआ धर्म अर्थात् सब धर्मको त्याग करश्रीरामजीकी सेवा करना चाहिए । यदि घर बार न त्याग सकेतो श्रीभरत जी की तरह "संपति सब रघुपति का आही ।" भाव वैष्णव होकर घरमें रहते हुए राजकाज धन पुत्र स्त्री सबको श्रीरामजीके जानकर " तुम्हहिं निवेदित भोजन करहीं । प्रभुप्रसाद पट भूषन धरहीं " इत्यादि बचनों के अनुसार भजन करे । जैसा कि ध्रुव, प्रहलाद, विभीषण. और अम्बरीषादिक राजा ने किया है । यदि यह भी न हो सके तो श्रीशत्रुघ्नजी की तरह साधु वैष्णवों की सेवा करे यह धर्म सबसे श्रेष्ठ है । श्रीरामजी के धर्म से बढ़कर श्रीलक्ष्मणजी का धर्म है । लक्ष्मणजीसे बढ़कर श्रीभरतजी का धर्म है श्रीभरतजी के धर्म से बढ़कर श्री शत्रुघ्नजी का धर्म है । वैष्णव सेवा से बढ़कर कुछ नहीं है । यह बात आदि पुराण में लिखा है । यथा—

मद्भक्तो वल्लभो यस्य स एव मम वल्लभः ।
तत्परो वल्लभोनास्ति सत्यंसत्यं वदाम्यहम् ॥

अर्थात् अर्जुन से श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि जिसको मेरा भक्त प्रिय है वही हमको प्रिय है उससे श्रेष्ठ प्रिय कोई नहीं है सत्य सत्य मैं कहता हूँ । इत्यादि बहुत कहा है सोई सिद्धान्त श्रीशत्रुघ्नजी के हैं । हे शिष्य इसी प्रवृत्ति निवृत्ति सिद्धान्त के अनुकूल विनय पत्रिका में श्रीगोस्वामीजीने यह पद लिखा है । यथा प्रमाण—

देव देहि अवलंब करकमल कमलारमन दमनदुख समन संतापभारी। ज्ञानराकेस ग्रासन विधुन्तुद दलन कामकरि मत्तहरि दूषनारी ॥ वपुष ब्रह्माण्ड सुप्रवृत्ति लंकादुर्ग रचित मनदनुज मयरूपधारी। विविध कोसाघ अति रुचिर मंदिर निकर सत्वगुन प्रमुख त्रैंकटककारी ॥ कुनप अभिमान सागर भयङ्कर घोर विपुल अवगाह दुस्तर अपारम् ॥ नक्ररागादिसंकुल मनोरथसकल संग संकल्प वीचीविकारम् ॥ मोह दसमौलि तद्भ्रान्त अहंकार पाकारिजितकाम विश्रामहारी। लोभ अतिकाय मत्सर महोदर दुष्ट क्रोध पापिष्ठ विवुधांतकारी॥ द्वैष दुर्मुख दंभ खर अकंपन कपट दर्प मनुजाद मदसूल पानी। अमितबल परम दुर्जय निशाचर चमूसहित षडवर्ग गोजातुधानी ॥ जीव भवदंघ्रिसेवक विभीषण बसत मध्यदुष्टाटवी ग्रसितचिन्ता। नियम जम सकलसुर जोग लोकेस लंकेशबस नाथ अत्यन्त भीता ॥ ज्ञान अवधेस गृहगेहनी भक्तिसुभ तत्र अवतार भुवभार हरता। भक्त संकष्ट मवलोक्य पितुवाक्य कृतगवन कियो गहन वैदेहिभरता ॥ कैवल्यसाधन अखिलभालुमर्कट विपुल ज्ञान सुग्रीवकृत जलधिसेतु। प्रबल वैराग्य दारुन प्रभंजनतनय विषयवन भवनमिव धूमकेतू ॥ दुष्ट दनुजेश निर्वंसकृत दासहित विश्वदुखहरन बोधैकरासी। अनुज निज जानकीसहित हरि सर्वदा दासतुलसी हृदय कमल वासी ॥ इति--

अर्थ-हे कमला अर्थात् लक्ष्मीरमण देव आप अपने हस्तकमलका अवलंब देहि नाम दीजिये वह करकमल कैसेहैं कि संपूर्ण दुःखका दमन नाम नाश करने वाले हैं और भारी संताप के भी नाशक हैं और अज्ञानरूप चन्द्रमा के नाश करने को राहु हैं। और हे दूषणारि, कामरूप हस्ती के नाश करने वाले शत्रुसिंह रूप हैं॥ हे शिष्य, अब [पिण्डे स ब्रह्माण्डे] इस भेदको रूपक करके दिखाते हैं कि हे देव वपुष शरीर तो ब्रह्माण्ड है तिसमें सुन्दर अर्थात् प्रवृत्ति विषय में अत्यंत करके लगे रहना सोई तो लंकापुरी है भाव वहां ब्रह्माण्ड में लंकापुरी है उसको मायावी मयदानवने बनाया है और इहाँ जो शरीर है सोई तो ब्रह्माण्ड है तिस में सुन्दर प्रवृत्ति जो सेवन है सो लंकापुरी है जिसको महामायावी मन ने बनाया है वहां नानाप्रकार के मन्दिर हैं इहां पर अन्नमय १ प्राणमय २, मनोमय ३ ज्ञानमय ४ विज्ञानमय ५ पंचकोश नाना प्रकार के सुन्दर मन्दिर हैं वहां सेना के अधिपति इहाँ सत्त्वगुण लेकर अर्थात् सत्त्वगुण रजोगुण तमोगुण यही तीनों कटक सेना के बनाने वाले मालिक हैं। वहां पर लंका के चारों ओर समुद्र महाभयका देनेवाला कठिन अथाह दुस्तर हैं, इहांपर कुनप शरीर का जो अभिमान है सोई भयंकर घोर कठिन विपुल बहुत से अवगाह अथाह दुस्तर दुःखसे भी न तराजाय अपार नाम जिसका किनारा नहीं ऐसा समुद्र है। वहां समुद्र जीव जन्तु करके युक्त है और बड़े २ जिसमें लहर हैं इहां अभिमानरूप सागरमें नानाप्रकारका जो मनोरथ सोई नक्र मकरादिक जीव हैं, और पंचविषयका संग होने से जो संकल्प विकल्प होता है सोई विकार वीचि नाम लहर है। वहां लंका का स्वामी रावण का भाई रहा पुत्र रहा इहां पर मोह सबको रुवाने वाला सोई दशशीश रावण है और तिसके भाई कुंभकर्ण अहंकार है पाक नाम यज्ञ तेहि के अरि नाम शत्रु इन्द्र तिनके जीतने वाला मेघनाद कामदेव है संपूर्ण विश्राम के हरने वाला लोभ अतिकाय नाम राक्षस है बड़ा मत्सर जो है सो भारी पेटवाला महोदर राक्षस है बड़ा दुष्ट है और क्रोध बड़ा पापी देवांतक नाम राक्षस है, गर्व जो है सो मनुजाद नाम मनुजअहारी राक्षस है, और मद जो है सो शूलपाणि है, द्वेष दुर्मुख नाम राक्षस है, दंभ खर राक्षस है और कपट अकंपन नाम राक्षस है इसी प्रकार के जो सब राक्षस हैं सो बड़े बली हैं और अत्यन्त दुर्जय हैं अर्थात् दुःखों करके जीतने योग्य नहीं हैं पूर्वोक्त जो षड्वर्ग

है काम क्रोध लोभ मोह मद मत्सरादिक तिन राक्षसनकी दशों इन्द्रियां राक्षसी हैं। तिन सबके मध्यमें जीव आपके चरण कमल का सेवक विभीषण है सो दुष्टरूप अटवी नाम बनमें चिन्तासे ग्रसित होकर बसता है यथा—सुनहु पवनसुत रहनि हमारी। जिमि दशनन्ह मह जीभ बिचारी॥ इत्यादि कहा है—हे शिष्य, वहां रावणके वशमें संपूर्ण देवता रहे इहां पर शौच १-होम २-तप ३-दान ४-स्नान ५-विद्या ६-व्रत ७-उपवास ८-मौन ९-इन्द्रिय रोकना १० यह दश नियम हैं और अहिंसा १-सत्य २-अस्तेय ३—ब्रह्मचर्य ४—दया ५—नम्रता ६—क्षमा ७—धैर्य्य ८—अल्पाहार ९—शौच १०—यह दश जो यम हैं सोई तो सुर जोग नाम देवता के समान और लोकेश नाम आठौं दिग्पाल के समान हैं सो मोहरूप रावण के बशमें पड़ कर व्याकुल होरहे हैं। वहां दशरथ जीहोते भये इहां ज्ञान जो है सोई तो निवृत्तिरूप अयोध्याजी के राजा दशरथजी हैं,तिनके गृह की गेहनी भक्ति मंगलदायी कौशल्याजी हैं तहां आपका भूमि-भार हरने के निमित्त अवतार हुआ। और भक्त जो विभीषण हैं तिनके संकष्ट देख करके हे जानकीनाथ, पिता के वचन करके बन में गमन किया॥ वहां भालु वानर की सहायता रही इहां पर कैवल्य मोक्ष के साधन क्षमा, करुणा, विवेकादिक ही अखिल नाम संपूर्ण भालु और बानर हैं और ज्ञान सुग्रीव जी हैं, जिन्हों ने संपूर्ण सहायता लेकर अभिमानरूप सागर में सेतु किया। वहां हनुमान्जी बड़े प्रबल थे इहां संसार से तीव्र वैराग्य होना ही बड़े बली महाकठिन वायुपुत्र हनुमान्जी हैं वहां बन मन्दिर जराए, इहा विषय जो शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्ध सोई तो बन और भवन नाम मन्दिर है तिन के वास्ते धूमकेतु नाम अगिन होकर भस्म किया। हे शिष्य, जिस समयमें लंकापुरीको हनुमान्जी जाते रहे उस समयमें हनुमान्जी को बाधा करनेको तीन स्त्री मिलीं इसका भाव यह है कि जब जीवको वैराग्य प्राप्त होता है और संसाररूपी समुद्र को उल्लंघन करनेको चाहता है, उस समय तीनों लोककी माया आकर बाधा करती हैं जैसे हनुमान्जी को तीनों लोककी माया ने बाधा की (प्रश्न—) हे स्वामीजी, तीनोंलोक की माया कैसे सिद्ध हुआ और कौन लोक की माया कौन है सो विस्तारपूर्वक कहिये, (उत्तर—) हे शिष्य, देवलोक की माया सुरसा है जो कि देवतों के भेजने से आई है और पाताल लोककी माया सिंहिका राक्षसी है जो समुद्र में रहती रही, और मृत्युलोककी माया

लंकिनी है जो प्रवृत्तिरूप लंका है स्वयं लंकिनी हो करके अपनी रक्षा करती रही इस में तीनों लोककी माया सिद्ध होगया और स्त्रीका रूप ही माया है, परंतु हनुमान्‌जी ने तीनोंको पराजय करके स्वामी का कार्य किया, इससे यह दिखाया कि वैराग्यवान् पुरुष को माया में नहीं फँसना चाहिये अपना कार्य अवश्यमेव करना चाहिये, यह उपदेश हुआ इसी से इहां पर हनुमान्‌जी को वैराग्य की उपमा दी। गोस्वामी जो कहते हैं। कि वहां दुष्ट दनुजेश रावण को संसार के दुःख हरने के निमित्त आप ने निर्वंश किया इहां दास के दुःख हरने के निमित्त मोहरूपरावण को मारि के लक्ष्मणजी और जानकी के सहित हेहरि मेरे हृदय कमल में वास कीजिये। इस प्रकार से गोस्वामीजी ने कहा है इससे रामावतार साक्षाद्वेदार्थतत्त्व है। (प्रश्न—) हेस्वामीजी, आज कल जो वेदांत रामायण है और घटरामायण है सो कैसा है कहिये कारण कि उसमें और ही प्रकार से सब बातें कही हैं। (उत्तर–) हे शिष्य, वेदान्तरामायण और घटरामायण दोनों कल्पित है किसी अद्वैतमतवाले की बनाई है ताते अप्रमाण है और बड़ा विरुद्ध है देखने का धर्म नहीं है नास्तिक मतका प्रतिपादन है और हमने जो कहा है सो तो शास्त्र के आधार से कहा है कुछ युक्ति मिलाके नहीं कहा है। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, अद्भुत रामायण में सहस्रमुख का रावण कहा है सो क्या है। कहिये (उत्तर–) हे शिष्य, यह भी पाखण्ड मत है कोई घोर शाक्तमतावलम्बी का बनाया है काहेसे कि रावण को दशों इन्द्रियाँ दशशीश है फिर सहस्रशिर वेदार्थ क्या है इससे पाखण्डियों का मत है कभी नहीं देखना, सुनना चाहिये। हे शिष्य, कलियुग में अब ऐसे २ ही ग्रंथ का प्रकाश होगा और सब कोई देखेंगे सुनेंगे यह सब कलियुग का प्रभाव है दूसरा कुछ नहीं यह निश्चय करके जानना। हे शिष्य, जब श्रीरामजी परब्रह्म जीवोंके उद्धार करने के वास्ते श्रीजानकी जी महारानी की प्रार्थना से वेदार्थ को प्रकाश करने के लिये अवतार लिया तब बिचार किया कि सब जीवों को संसाररूप समुद्र से तारना चाहिए। यथा प्रमाण—

सर्वांश्च जीवान्भवाम्भोधौतारयमिति प्रभुः।
चिन्तयन्नवतारस्य कार्यं तस्थौ महीतले॥ ३६॥

अर्थ– संपूर्ण जीवों को संसाररूप समुद्रसे तारेंगे ऐसा चिन्तवन करके अवतार के कार्य करने को पृथ्वीतलमें स्थित भये उस समय में वेद, पुराण, इतिहास, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सबने आकरके प्रार्थना की। यथा—

ततो वेदैः पुराणैश्च सेतिहासैः सहैश्वरैः ।
आगत्य याचितो रामः पूर्वां वार्तां रिरक्षुभिः ॥४०॥
धर्माधर्मादिवैयर्थ्यं कर्तुं तेनोचितं प्रभो ।
सनातनीं च मर्यादां सततं रक्ष राघव ॥ ४१ ॥
तव भक्तिप्रपत्तिभ्यां ये ये सेप्स्यन्ति राघव ।
कृतार्थीं कुरु तांस्तांश्च लीलानैव विभिद्यते ॥ ४२ ॥
इति तेषां मतिं शुद्धां मत्वापि रघुनंदनः ।
चक्रे स्वाभिमतं कार्यं दीनानाथैकपालकः ॥ ४३ ॥

अर्थ–तिस समय में वेद पुराण इतिहास ब्रह्मा विष्णु महादेव आकर के रामजीसे प्रार्थना की कि हे प्रभो, धर्म अधर्म को बे मर्यादा करना उचित नहीं है सनातन की जो मर्यादा है उसको सदैव रक्षा करना चाहिये । हे राघवजी, यदि आप अवश्य उद्धार करनाही चाहैं तो जो जो आपकी भक्ति और प्रपत्ति नाम शरणागतिकी चाहना करते हैं उन उन को कृतार्थी करो, यह चरित आप का कोई भी नहीं तोड़ेगा सदैव चला करेगा, इसप्रकार की तिन सबकी शुद्ध मतिको मानके श्रीरामजी ने अपना अभिमत कार्य जो अयोध्यावासी जनोंको साथ लेजाना है सो किया काहे से दीनों के नाथ और पालक हैं । हे शिष्य, रामजीने सबको साकेत लेजाने का विचार किया रहा जब ब्रह्मादिक ने आकर प्रार्थना की तब रामजी केवल अयोध्यावासी जनों ही को ले करके चले गये इससे रामावतार सर्वोपरि है काहेसे कि सबका उद्धार करना यह सयका काम नहीं है और न ऐसा किसी अवतारमें भया है । (प्रश्न—) हे स्वामी जी, रामावतार में जो जो लीला की है सो सब लीला बालकों को राम लक्ष्मण जानकी बना करके करना चाहिये कि नहीं सो कृपा करके कहिये । (उत्तर—) हे शिष्य, एक समय में अगस्त्यजी महाराज शिष्यों के सहित गन्धमादन पर्वत

पर गये तहां पर रामकुण्ड तीर्थ में स्नान करके हनुमान्जी के परमदिव्य आनन्दमय आश्रम पर गये हनुमान्जी आकरके मिले और आसनदिया शिष्यों के सहित ऋषिराजका पूजन किया पीछे भोजन करके बैठे इतनेही में सन्ध्या भई सन्ध्या वंदनादि करके बैठे तब तक हनुमान्जी ने ऋषिबालकों को शृङ्गार करके रामलीला रहस्य प्रारम्भ किया, सो साक्षात्कार लीला देख करके अगस्त्यजी बड़े आनन्द को प्राप्त होगये यहांतक कि शरीरकी सुध भूलिगये पीछे हनुमान्जी की प्रशंसाकी कि आप धन्य हैं जो इसप्रकारकी साक्षात् रामलीला रहस्य करते हैं और हमने भी आज देखा सो हम भी धन्य हैं इसीप्रकार के परस्पर बहुत विनय बड़ाई करके अगस्त्यजी बोले कि इसप्रकार की विधिपूर्वक यह रामलीला रहस्य बालकों को शृङ्गार करके करने के निमित्त किसने कहा है और किनसे आपने पाया है सो कहिये तब हनुमान्जी बोले कि जब रामजी परधाम साकेत लोकको जाने लगे तब साथमें जाने के लिये मैंने विनती की सुनके प्रभु बोले कि तुम अभी यहींपर रहो और विप्र बालकों को मैनसिल से शृङ्गार करके हमारी लीला किया करो हम इहां पर साक्षात्कार दर्शन दिया करेंगे तबसे हम यह लीला करते हैं और साक्षात्कार दर्शन होता रहता है यह उपदेश रामजी का है पुनः अगस्त्यजी बोले कि केवल आपही के लिये उपदेश है कि सबके लिय हनुमान्जी बोले कि सबके लिए आज्ञा है परन्तु विधि से करना चाहिये। अगस्त्यजी बोले विधि क्या है हनुमान्जी बोले विधि यह है कि प्रथम एक दिव्य लीलामण्डप बनाना चाहिये उसको वंदनबार तोरण कलश केराके खम्भ तथा पुष्पोंसे खूब सजाना चाहिये जिसमें नास्तिक अवैष्णव न जाने पावे और स्त्री बालकको सावधान से बैठावे जिसमें शब्द न हो सो करना चाहिये। और लीला करने वाले वैष्णव हों लीलाके आचार्य नेम धर्म से रहे कथा कहवावे यज्ञ करे साधु ब्राह्मणको भोजन करवावे जितने दिन लीला करनो हो उतने ही दिन का विधिपूर्वक संकल्प करे क्रीट मुकुटकी बिधिसे प्रतिष्ठा करे और नित्यप्रति पूजन किया करे। हे शिष्य, और भी (हनुमत् संहिता) में लिखा है कि विजयदशमी (दशहरा) के दिन राजा लोग सब अपने फौजोंको तैयार कर और लीला मूर्तिको आगे रथ पर सवार कराकर दक्षिण यात्रा करे। खूब धूमधाम से और रामजीकी सहायताके लिये भक्तिभाव से कि मैं श्रीरामजीका सेवक हूं तहां दक्षिण जाकर रावणके नामसे अस्त्र शस्त्र

चलावे रावण के स्वरूप बनाके। यह प्राचीन धर्म है फिर लौटकर नीलकंठ का दर्शन और शमी (छोंक) वृक्षकी पूजा करके नगर में आवे इस प्रकार से सब राजाओं को करना चाहिये सो कुछ२ अब भी राजपूताने में करते हैं लीला-स्वरूप नहीं बनाते हैं परन्तु सेनाओं को सजाके दक्षिणयात्रा करते हैं यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध है परन्तु यह नहीं जानते हैं कि विजयदशमी के दिन दक्षिणयात्रा करना क्या है और दशहरामें रामलीला होना यह तो सर्वत्र प्रसिद्धही है इससे लीला करना शास्त्र प्रमाण है परन्तु विधि और भावसे करना चाहिये जैसा कि शास्त्र में प्रमाण है नही तो भारी दोष कहा है। प्रश्न—हे स्वामी जी आज काल के जो लीलाधारी और रहस्यधारी लोग घर २ गांव २ लीला करते हैं सो करना चाहिये कि, नहीं। [उत्तर-] हे शिष्य, भगवत् लीला करनेका कोई नियम नहीं है कि अमुक ही स्थान में करे चाहै जहां जिस देश गाँवमें करे परन्तु भावसे करे परलोक से विमुख होकर न करे लोगों के उपदेश के लिये करे, काहे से कि लीलासे उपदेश विशेष है अर्थात् जहां लीला होती है तहां हज़ारों मनुष्यों के भी होनेसे राममय होजाता है इससे लीला करना भारी उपदेश है और सबको मालूम पड़ता है कि रामजी ऐसेरहे ताते लीला करना उचित है परन्तु अन्याय होकर न करे। और इस प्रकार के मनुष्य लीलामें न जाने देवे। यथा शिवसंहितायां पंचमपटले १५ अध्याय अगस्त्यजी से श्रीहनुमान जी का वचन।

वर्जयेन्म्लेच्छचाण्डालान् भक्तिशून्यान्दुराशयान्।
हासकान्दूषकांश्चौरान् हिंस्राञ्छूद्रान्मलीनसान्॥१॥
शैवाञ्छाक्तान् खलान् पापान्पाषण्डानशुचिर्नरान्।
मूर्खान् कौतुकिनो धूर्तानन्यदेवरतानपि॥ २॥
दुर्भक्ष्यान्निन्दकान् बाह्यान्मद्यमांसरतानपि।
नास्तिकान्हैतुकान्क्रूरानन्यानपि संत्यजेत्॥ ३॥

अर्थ—म्लेच्छ चाण्डाल जो रामभक्त नहीं हैं दुराशय अर्थात् दुष्टभावना वाले हँसी मसखरी वाले दूषण देने वाले चोर जीव हत्यावाले शूद्र मलीनवृत्ति

वाले शैव शाक्त दुष्टपापी पाखण्ड अपवित्र मनुष्य मूर्ख खेल तमाशे वाले धूर्त अन्य देवताओंकी भक्ति करने वाले अभक्ष्य अर्थात् लहशुन, पियाज, गाजर, शलगम गोभी सोया पलाकी गांजा भांग तमाखू अफीम इत्यादि के खाने पीने वाले निंदा करने वाले सर्व धर्मों से जो बाह्य है। तथा मद्यपीने वाले मांस खाने वाले नास्तिक तर्कवाले क्रूर इन सबको श्रीरामलीला के अन्दर न जानेदेवे केवल भक्तिवान् पुरुषोंको जानेदेवे॥

नैते योग्याः संप्रवेष्टुं रामैकान्तिककेलिषु।
अन्यथाकारको भ्रंश्येद्रामकोपेन भक्तितः॥ ४॥
परमैकान्तिनो यत्र पापदोषविवर्जितः।
गानं भगवतः कुर्युः संनिधत्ते तु यद्धरिः॥ ५॥

अर्थ—पूर्वोक्त सबको लीलारहस्यके भीतर न जानेदेवे यदि इन सबको लीला स्थानमें जानेदेवे तो लीला के करनेवाले व्यास बाबा श्रीरामजी के महाक्रोध करके भक्तिमार्ग से पतित होकर २१ अथवा ६४ पीढीको साथलेकर खूब मजेमें घोर नरक में जन्म २ गोता लगावेंगे दुष्टों का उद्धार कभी भी नहीं होता है। यथा-लोकहु वेदविदित कवि कहहीं। रामविमुख थल नरक न लहहीं॥ इससे लीलाधारी को चाहिये कि विचारसे कामकरे। जहां परमएकांत स्थान हो पाप दोषसे वर्जित हो उस स्थानपर भगवतलीला गाना बजानाकरे काहेसे कि लीला करना भारी यज्ञहै शुद्ध भूमिमें होना चाहिये उस स्थान पर स्वयं प्रभु आकर प्राप्त होते हैं और लीलामूर्ति में प्रवेश करते हैं और लीलास्वरूप विचार से। ऐसा बनावे यथा—

द्विजराजकुलोद्भूतं सुरूपं सुमुखादिकम्।
सुवर्णं शुभगं चारु चेष्टं मधुरभाषिणम्॥ ६॥
दृष्टि चित्तहरं पुंसां शिक्षादक्षं सुलक्षणम्।
कुमारं वा किशोरं वा रोगदोषविवर्जितम्॥ ७॥
पूजयेद्रामबुद्ध्यैव विहीनं त्वपलक्षणैः।
यदस्मिन् राघवः स्थित्वा क्रीडिष्यति प्रियायुतः॥८॥

अर्थ-द्विजराज अर्थात् उत्तम ब्राह्मण सारस्वत १, कान्यकुब्ज २, गौड़ ३, मैथिल ४, उत्कल ५, तैलंगी ६, द्राविडी ७, करणाटकी ८, महाराष्ट्री ९, गुजराती नागर ब्राह्मण १०, इनदशों ब्राह्मणों में श्रेष्ठ चाहे जिसके कुलमें उत्पन्न हो सुन्दर मुखादि और सुन्दर वर्णहो भाव यह है कि रामजी के भरतजी के स्वरूप श्याम हों और लक्ष्मणजो शत्रुघ्न जी गौरहों, तैसेही श्रीजानकी भी गौरांगी हों और सब स्वरूप शुभग नाम सुघर हों, वेडौल नहीं पवित्र चेष्टा हो मधुर बोलने वाले हों कठोर क्रूर बोलने वाले नहीं ॥ दृष्टि जिनकी ऐसी बांकी हो कि जिधर देखें उधर भाविकों का चिताकर्षण हो जावे और शिक्षा में प्रवीण हों सुन्दर लक्षण करके युक्त हों अवस्था जिनकी ८ वर्ष से १६ वर्षपर्यंत हो अधिक न हो कोई प्रकार का रोग दोष भाव काणे खोडे कूवडे लंगड़े लूले गूंगा वहिरा गजा कुक्कुरदंता विशेष अङ्ग वाले नहीं भाव कोई प्रकार के ऐव नहीं यदि ऐसी स्वरूप बनावे तो लीलाधारी नरक में जावे और देखने वाला भी दोषभागी हो इससे दिव्य स्वरूप वनावे ॥ २ ॥ जोस्वरूप वनावे वह सब कुलक्षणों से रहित हों उनस्वरूपोंको साक्षात सीताराम ही जानके पूजन करे यदि न पूजे दूसरा भाव राखे भाव मनुष्य जाने तो नरक के अधिकारीहो इससे अवश्य भाव राखे जिसमें श्रीसीतारामजी स्वरूपों में स्थित होकर क्रीडादि भावकरें इससे निरादर न करे।

तैलेनाभज्य चूर्णेन समुद्वर्त्य च वारिभिः।
पवित्रैः स्नापयेद्विद्वान्मंत्रोच्चारणपूर्वकम् ॥ ९ ॥

गव्यैः पंचभिः स्नाप्य तुलसीदर्भमिश्रितैः।
उष्णेन वारिणा भूयः शीतलेन च मंत्रतः ॥ १० ॥

पीतांबरयुगं दद्याद्ब्रह्मसूत्रं च सुन्दरम्।
रोचनाकुंकुमाप्तेन कस्तूरीतिलकेन च ॥ ११ ॥

अर्थ – सर्व सुगन्ध औषधियों को चूर्णकर उबटन याने (वेसन) के साथ मिलाकर तैलयुक्त हल्दी के साथ जलमें मिलाकर सर्वांग में उबटन लगाकर

स्वरूपों को पवित्र जलसे मूलमंत्रको पढ़कर विद्वान् पण्डित लोग स्नान करावें। पीछे तुलसीदलको मिलाकर पंचगव्य से स्नान कराकर फिरभी उष्ण (गर्म) जलसे अथवा शीतल जलसे मंत्र पढ़कर अच्छे प्रकार से स्नान कराकर दो पीतांबर और सुंदर पीतरंगका यज्ञोपवीत देना चाहिये और श्रीयुक्त कस्तूरी केशर मिलाकर—

तिलकेनाप्यलं कुर्य्याद्विन्दुंच केशवेश्मना।
आचामयेज्जलं शुद्धं रामनामानुकीर्त्तयन् ॥ १२ ॥
श्रीरामं तत्र संध्यायेदात्मानं स्वतएवतम्।
रामस्य मंत्रमुन्यादीस्नन्यसेत्तस्य यथोचितम्॥ १३॥
अङ्गेषु चांगदेवांश्च रामोस्मीति च भावयन्।
रामात्मा एवएवैति वेदांतविदितं मतम् ॥ १४ ॥
धूपयेद्दीपयेत्पश्चाद्भोजयेदमृतं च तम्।
नीराजनमुखामोदं तांबूलादि प्रदाय च ॥ १५ ॥
रामोयमिति तं भूयो लालयेन्नतु कोपयेत्।
तद्द्वारा भगवान् रामः साक्षाद्देवः समीहते ॥ १६॥

अर्थ—सुन्दर ऊर्ध्व पुण्ड्रतिलक करना विंदुके सहित और मैनशील (मुर्दाशंख) से कपोलादि शृङ्गार करना चाहिये काकपक्ष (जुलुफ़) की रचना कर सर्वाङ्ग में भूषण धारण करावे और क्रीट मुकुटादि को धारण कराकर शुद्ध जलसे आचमन करावे श्रीरामनाम का कीर्त्तनकरे करावे जिसमें कल्याणहो ॥६॥ श्रीराममंत्र षडक्षर से यथोचित विद्वान् लोग सर्वांग का संस्कार करे और तहां लीलास्थान में श्रीरामजीका ध्यान करे स्वरूपों को चाहिये कि अपने आत्माको स्वयं श्रीरामजी करके मानें और यही भाव लीला के आचार्य महंत सन्त पंडित व्यास लीलाकर्ता उपदेश करे स्वरूपों को कि आप स्वयं सीतारामजी हैं शान्ति क्षमा दयादिगुण उपदेश करे परस्पर स्वरूपों को भावोपदेश करे॥ अंगमें अंग देवताओंको भिन्न २ माने सबके भावना करे अपने को रामही जाने

कि राम मैंही हूं इस तरह का भाव सदैव राखे जिसमें सब भाविकों को श्रीराम जी के ही भाव होजावे और देखने वालेको व करने वालेको सच्चा भाव रखना चाहिये क्योंकि भाव ही प्रधान है देखो सती जीने सीताजी का रूप धारण किया उसी समय में परमभक्त शिरोमणि श्रीशंकरजीने सतीको त्याग कर दिया कि-जो अब करउँ सतीसन प्रीती। मिटै भगति पथ होइ अनीती॥ भाव स्वामिनी भावमाना नहीं तो सती कुछ सीता नहीं होगई केवल योगीराज श्रीशंकरजीने सूक्ष्म से सूक्ष्म भक्ति भावको दिखाया है। हे शिष्य, यह प्रसंग रामायण में बहुत ही सूक्ष्म है इससे लीलानुकरण भी सिद्ध होताहै तातें लीला स्वरूपों को अवश्य मानना चाहिये यदि भक्तिभाव हो नहीं तो दुष्टों के लिये कुछनहीं है, स्वरूपों में भावकरना यह मत वेदांन्तशास्त्र का प्रधान मत है भावलीला करना शास्त्र प्रमाण है कल्पित न जाने यदि कल्पित माने तो नरक वासहो॥ धूप दीपादि से विधिपूर्वक पूजन करे सुन्दर स्वरूपों को भोजन करावे पंचनीराजन करके मुख शुद्धिके लिये तांबूलादि देवे और रामही हैं ऐसा जाने लालन पालन करे क्रोध नहीं करे यदि स्वरूपों पर क्रोध करके मारे पीटे तो कोटि पुरुषा नरक जाय इसमें संदेह नहीं काहेसे कि लीलास्वरूपों के द्वारा साक्षात श्रीरामदेव प्राप्त होते हैं इससे सत्यभाव से करना चाहिये। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, नीराजन किसको कहते हैं और कैसे किया जाता है सो कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, पंचनीराजन शास्त्रमें ऐसा कहा है। यथा—

पंचनीराजनं कुर्य्यात्प्रथमं दीपमालया।
द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा॥
चूताश्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्तितम्।
पंचमं प्रणिपातेन साष्टांगेन यथाविधिः॥

अर्थ—पञ्चप्रकार के नीराजन करना प्रथम दीपमाला से दूसरा शंख में जलभर स्वरूपों पर घुमाकर बाहर फेंकदेना इस शंख का जल शरीरपर गिरै तो ब्रह्महत्यादि पाप नष्ट होता है। तीसरा धोती वस्त्र अथवा पीतांबर से चौथा आम के पीपल के पत्रोंसे करे पांचवां नीराजन नम्रतापूर्वक साष्टांग प्रणाम करना। भाव लीलास्वरूपों को साष्टांग भी करे प्रसाद भी लेवे

केवल भाव है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, शंखसे नीराजन करना और शंखोदक का माहात्म्य कहां लिखा है। उत्तर—

ततश्च सजलं शंखं भगवन्मस्तकोपरि ।
त्रिर्भ्रामयित्वा कुर्वीत पुनर्नीराजनं प्रभोः ॥
शंखोदकं हरेर्भुक्तं निर्माल्यं पादयोर्जलम् ।
चन्दनं धूपशेषं च ब्रह्महत्याऽपहारकम् ॥
योऽश्नाति तुलसीपत्रं सर्वं पापहरं शुभम् ।
तच्छरीरान्तरस्थापि पापा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥

अर्थ—तिसके पीछे जलके सहित शंखको भगवत् के शिरपर तीनवार घुमाकर फेंकदेवे यह भी नीराजन है ॥ शंखके जल भगवत् प्रसाद चरणोदक भगवत् पूजन का शेष (बचा) हुआ चंदन धूप सब ब्रह्महत्या हरनेवाला है जो तुलसीदल खाते हैं उनके भीतर के भी पाप सब नाश होजाते हैं इससे तुलसीदल खाते अब श्रीजानकीजीके स्वरूप बनाने को कहते हैं। यथा शिवसंहितायाम्-

सर्वलक्षणसम्पन्नमपलक्षणविवर्जितम् ।
कुमारं जानकीत्येव संस्कुर्य्याद्धि विधानतः ॥
जानकीमंत्रमुन्यादीन्न्यस्येत्तस्य कलेवरे ।
भोजयेल्लालयेत्तद्वद्रामदेवीति तां बुधः ॥
कुमारारूपसम्पन्ना नृत्यगानविचक्षणाः ।
अपलक्षणशून्या ये द्विजानां शुचयोनघाः ॥
संभाव्यास्ते सखीत्वेन जानक्यानुभाविताः ।
भोजिता धूपिताःसम्यक् शिक्षितास्तोषिताधनैः ॥

अर्थ—सर्वलक्षण करके युक्त हो और कुलक्षण करके विवर्जित हो ऐसा कुमार ८ वर्ष के स्वरूप जानकी जीके हों निश्चय पूर्वक उनको विधानसे संस्कार करना और जानकीजीके मंत्रसे जानकीजी के स्वरूपों को और रामजी के

रामजीके स्वरूप को मुनिलोग विद्वान् लोग संस्कार नाम प्रतिष्ठा करें और तिनके शरीरमें उन२ मंत्रों को स्थापित करें । विधिपूर्वक जिसमें भगवत् का भावहो उनको पण्डित लोग भोजन करावे पालन करे अर्थात् रामप्यारी जान करके सब प्रकारसे आदर सहित भाव करे ॥ ४ ॥ और रूपगुण करके युक्त नृत्यगानमें चतुर अपलक्षण करके शून्य ब्राह्मणमें ।पवित्र पापों से रहित ऐसा कुमार बालक ८ वर्ष के स्वरूप जानकीजीके आज्ञानुकूल सखी बनावे सबको सब प्रकार से भोजन से धूप दीपादि से पूजन करे और शिक्षा देवे कि आप अपने को रामजी जानो जानकीजी जानो सब पर दया करो । काम, क्रोध, लोभ, मोह छोड़दो । शान्ति, क्षमा, दया, वात्सल्यादि गुणको धारण करो इसी प्रकार के दिव्यगुण शिक्षाकरे और धन द्रव्यादि देकर संतुष्टकरे जिसमें कोईको दुःख न हो सो करे । हे शिष्य, इसी प्रकार से आगे और भी बहुत कहा ह कि स्वरूपों पर क्रोध न करे दंड न देवे दुःख न देवे यदि कोई प्रकार का दुःखदेवे तो जन्म२ अखण्ड नरक में रोवै कभी उद्धार नहो भगवद्द्रोही नास्तिक ह महा· चाण्डाल है जो स्वरूपों को कलेश देता है और खोटी दृष्टि से देखता है उसको वार २ धिक्कार है जो द्रव्य के वास्ते स्वरूपों को दुःखदेते हैं और ब्राह्मण छोड़कर जो अन्यजाति को स्वरू प बनाते हैं सो महादुष्ट नरकगामी है गुरुद्राही है । भगवद्द्रोही है । हे शिष्य, पांच ब्राह्मण जो हैं याने मागधी १, मथुरा के चौवे लोग, २ शाकद्वीपी ३, सनाढ्य ४, जोषिक ५, तथा गंगापुत्र महापात्र भाट कथिक इन सब को स्वरूप बनाना दोष है बनाने वाले नरक जावे और शूद्र नीचलोग जो लीला करते हैं सोनरकगामी हैं । हे शिष्य, यह कथालीला प्रकरण (शिवसंहिता) के पंचमपटलमें १५ से अष्टादशाध्याय १८ पर्यन्त वर्णन है। गंधमादन पर्वत पर हनुमानजी ने अगस्त्य ऋषिसे कहा है तबसे रामलीला भूमंडल में प्रचार है और प्रेमीलोग करते हैं यहीलीला कृष्णावतार में प्रद्युम्नादि यादवोंने वज्रनामदैत्य के यहांपर रामनाटक किया है सो यह कथा हरिवंश पुराण के विष्णुपर्वमें ९५ अध्यायमें प्रसिद्ध है तिससे थोरा लिखते हैं विशेष देखलेना। यथा प्रमाण—

रामायणं महाकाव्यमुद्दिश्यं नाटकीकृतम् ।
जन्मविष्णोरमेयस्य राक्षसेन्द्रवधेप्सया ॥ ५१ ॥

लोमपादो दशरथ ऋष्यशृङ्गं महामुनिम्।
शांतामप्यानयामास गणिकाभिः सहानघ॥ ५२॥
रामलक्ष्मणशत्रुघ्नोभरतश्चैव भारत।
ऋष्यशृङ्गश्च शांता हि तथा रूपैर्नटैःकृताः॥५३॥
तत्कालजीविनोवृद्धा दानवा विस्मयंगताः।
आचचक्षुश्च तेषां वै रूपतुल्यत्वमच्युतः॥ ५४॥
संस्काराभिनयौ तेषां प्रस्तावानांचधारणम्।
दृष्ट्वा सर्वं प्रवेषंच दानवा विस्मयं गताः॥५५॥इति-

अर्थ-रामायण महाकाव्य जो बालमीकीय रामायण है उसको यथार्थरीति नाटक की रीति करके दिखाने लगे जिसमें अप्रेमय विष्णु भगवानने राक्षस के बध करने की इच्छा करके देवताओं को कहा। प्रथम रोम पाद राजा दशरथ जी ऋषिशृङ्ग महामुनिको दिखाया रोमपादके पुत्री शांताके निमित्त वेश्या जैसे महा घोरवन में जा करके शृङ्गी ऋषिजी को आनती भई सो सब नाटक किया और राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न शृङ्गीऋषि शांता इन सबका जैसा रूप है तैसा रूप नट लोग नाटक करने वाले सो सब किया उस समय में बस गुणी लोग वृद्ध लोग दानव लोग आश्चर्य को प्राप्त होगये और परस्पर तिन सबके रामलीला देख करके चक्षुसे याने इशारे से बात करने लगे कि ऐसा कभी नहीं देखा॥ तिन सबके स्वरूप बनाना और बोलचाल हाव भाव छविछटा शाग्रता सब देख करके दानव लोग बिस्मय को प्राप्त होगये और वहुत से धन द्रव्यादि दिये सो विस्तार से आगे वर्णन है उसीको गोस्वामी जीने एक चौपाई में प्रमाण दिया है। यथा—खेलउँ तहां बालकन्ह मीला। करउँ सकल रघुनायकलीला॥ इत्यादि उत्तरकाण्ड में कहा है। इससे हे शिष्य, रामलीला करना शास्त्रप्रमाण है अवश्यमेव करना चाहिये परन्तु भावसे करना कल्याणकारक हैं नहीं तो घोर नरक तो हई है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, बहुतेरे नास्तिक मूर्खलोग कहते हैं कि वेदमें रामकृष्णादिके अवतार नहीं लिखा है सो यदि प्रमाण हो तो कहिये। हे शिष्य, यह मत

केवल दयानन्द का है कि वेदमें अवतार नहीं है, मूर्तिपूजन नहीं है श्राद्ध, करना नहीं है, तीर्थ नहीं है व्रत नहीं है तिलकमाला मंत्र नहीं है, साधु ब्राह्मणों को भोजन कराना नहीं हैं जातिका भेद नहीं है इत्यादि सो विरुद्ध हैं, जब से दयानन्द हुआ है तब से यह मत चला है प्रथम कोई ऐसा नहीं कहता रहा कि, वेद में अवतार नहीं है मूर्तिपूजन नहीं है, श्राद्ध नहीं। और न दयानन्द से प्रथम कोई ग्रंथों में ऐसा प्रमाण हो है। इससे हे शिष्य, यह मत सर्वथा पाखण्ड है और राक्षसोमत है स्कन्दपुराण में लिखा है कि कलियुग में राक्षस लोग अवतार लेके नास्तिक धर्म चलावेंगे। यथा प्रमाण—

राक्षसाः कलिमाश्रित्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु।
परस्परं विरुध्यन्ति भगवद्धर्मवंचकाः ॥ ५५ ॥
द्विजाऽनुष्ठानरहिता भगवद्धर्मवर्जिताः।

अर्थ—राक्षस जो हैं सो कलियुग के आश्रय होके ब्राह्मणों के योनिमें जन्म लेंगे और परस्पर विरुद्ध करेंगे और भगवद्धर्म के वंचक अर्थात् छल करने वाले होंगे और ब्राह्मण लोग अनुष्ठान से रहित होयँगे भगवद्धर्म से वर्जित होंगे। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण है इससे जितने नास्तिक हैं सो सब राक्षसों के अवतार हैं काहे से कि अवतार की निन्दा करना, मूर्तिपूजन निन्दा, श्राद्ध की निन्दा, ब्राह्मण की निन्दा करना, आचार्य्यो की निन्दा करना शास्त्र पुराण की निन्दा करना तीर्थ की निन्दा करना व्रतकी निन्दा करना यह सब राक्षसी धर्म है। सो रावणादिक में रहा विशेष देखना हो तो "कलिपाखडोदय" देखो हे शिष्य, कलियुग में ऐसे ही सब धर्मका प्रचार होगा इस से चिन्ता करने का काम नहीं है रामजी की इच्छा है अपने तो केवल श्री रामजी का भजन करना हो परम कल्याण है और यही सिद्धांत सबका है और परमात्मा का अवतार वेद में प्रमाण है। यथा—ऋग्वेद मं० १—अ० २१—सू० १५४।

प्रतद्विष्णुः स्तुवते बीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेषु अधिक्षिपन्ति भुवनानि विश्वा ॥

अर्थ—(तत् मृगः) नृसिंहवाराह रूपाभ्यां मृगः (न) च (भीमः) राम कृष्णपरशुरामकल्किरूपैरसुराणां भयंकरः (कुचरः कः) जलं उ एव संचार स्थानं यस्य स (कुचरः) कच्छपमीनरूपः (गिरिष्ठाः) वामनरूपेण वेदवाचि स्थितः (विष्णुः वीर्येण) प्रस्तुवते (यस्य) वामनरूपस्य (त्रिषु उरुषु विक्रमणेषु) पादप्रक्षेपेषु (विश्वा) सर्वाणि (भुवनानि) (अधिक्षियन्ति) निवसन्ति।

भाषार्थ—वह नृसिंह वाराहरूप से और राम कृष्ण परशुराम कल्किरूप से असुरों को भयदाता कच्छप मीनरूप से जलचारी वा मन रूप से वेद वाणी में स्थित विष्णुजी अपने पराक्रम से स्तुति किये जाते हैं जिस वामनरूप के तीन बड़े पादप्रक्षेपों में सब भुवन निवास करते हैं। हे शिष्य, यह मंत्र यजुर्वेद पांचवें अध्याय में भी बीसवां २० मंत्र है देख लेना। पुनः—

मन्त्रः–दशानामेकं कपिलं समानं तं हिन्वन्ति क्रतवे पार्याय गर्भमाता सुधितं वक्षणास्ववेनं तं तुष्यन्ती विभर्त्ति ॥५८॥

टीका-(तम्) दशानां दशावताराणां (समानं (एकं) अद्वैतं (कपिलं) कपिलावतारं (पार्याय) परिसमापयितव्याय (क्रतवे) ब्रह्मयज्ञाय (हिन्वन्ति) प्राहुर्भावाय प्रेरयन्ति (माता) (वक्षणासु) नदीरूपनाडीनां मध्ये (सुधितं) प्रजापतिना स्थापितं (अवेनन्तं) निवासमकामयमानं (गर्भं) प्रजापते गर्भं- (तुष्यन्ती) तुष्यंती सम्यग्ज्ञानादुपदेष्टारं योग्योयमिति प्रीतासती (विभर्त्ति) धारयति॥

भाषार्थः—दशावतारों के समान अद्वैत कपिलजी को परिसमाप्ति योग्य ब्रह्मयज्ञके लिये प्रेरणा करते हैं और माताजी प्रजापति द्वारा गर्भ में स्थापित निवास न चाहते गर्भ को अपना ज्ञानोपदेशक जानकर प्रसन्न होती धारण करती हैं॥ २॥

अपिवत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे यत्राददिष्ट पौंस्यम्॥

मंत्रार्थः-(इन्द्रः) परमेश्वरो विष्णुः "इदि परमैश्वर्ये" (सहस्र बाहवे) सहस्रबाह्वाख्यनृपतये (कद्रुवः कः) कामः (द्रुः) गच्छत्यूर्द्ध्वं वृक्षः कामवृक्ष रूपदेहात्। "द्रुगतौ" (सुतम्) अभिषुतं क्रोधं (अपिवत्) मनसि धारया मास (तत्र) तस्मिन्काले पौंस्यम्) वैष्णवं वीर्यं (आददिष्ट) आदीप्यत॥३॥

भाषार्थ-परशुरामरूप परमेश्वर ने सहस्रबाहु के लिये क्रोध को धारण किया उस समय उनका पराक्रम प्रदीप्त हुआ ॥ ३ ॥

मंत्रः-भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन्नुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात्॥

मंत्रार्थः—यदा (भद्रः) भजनीयः श्रीरामः (भद्रया) भजनीयया श्रीसीतया (सचमानः) सहितः (आगात्) आगच्छति देहे प्रादुर्भवति तदा (जारः) (रावणः स्वसारं) ऋषीणां रुधिरेणोत्पन्नत्वाद्भगिनीतुल्यां सीतां (अभ्येति) अभिगच्छति (पश्चात्) अन्तकाले (अग्निः) क्रोधेन प्रज्ज्वलितो रावणः (अभितिष्ठन्) युद्धे श्रीरामस्य सन्मुखे तिष्ठन् सन् (सुप्रकेतैः) सुप्रज्ञानैः (उशद्भिः) (श्वेतैः वर्णैः) (द्युभिः) कुम्भकर्णादीनां जीवात्मभिः सह [रामम्] [श्रीरामरूपं विष्णुं अस्थात्] विष्णोः सामीप्यतां प्राप्तवान् ॥ ४ ॥

भावार्थः—भद्र (राम) भद्रा सीताजीके साथ जब प्रगट हुये तब जार (रावण) ने ऋषियों के रुधिर से उत्पन्न होनेके कारण अपनी भगिनी सीता को हरण किया पीछे अन्तकालपर क्रोधसे प्रज्वलित रावणने सन्मुख होकर कुंभकर्ण आदिक शुद्ध ज्ञानी जीवात्माओंके साथ श्रीरामकी सामीप्यता को पाया ॥ ४ ॥ हे शिष्य, इस मन्त्रमें केवल रामावतार वर्णन है। पुनः सामवेदे उत्तरार्चिके अध्याय २ खं० १—सू० ३।

मंत्रः-कृष्णां यदे नीमभिवर्प्यसाभूज्जनयन्योषां वृहतः पितुर्ज्जाम्। ऊर्द्धं भानु ँ् सूर्य्यस्यस्तभायन् दिवो वसुभिररतिर्व्विभाति ॥ ५ ॥

मन्त्रार्थः)—(यद्) यदा (बृहतः) पितुः) महानारायणाय (योषाम्) महामायां (जनयन्) नन्दगृहे प्रादुर्भूतां कुर्वन् (जाम्) जायमानां (एनीम्) गमनशीलाम् (कृष्णां) कृष्णवर्णदेहरूपां प्रकृतिं (वर्प्यसा) आत्मीयेन तेजसा (अभिभूत) अभिभवति व्याप्नोति तदा (दिवः सूर्यस्य) मानससूर्य्यस्य (भानुम्) आत्मानं (ऊर्द्धगम्) स्तभायन् योगनिष्ठः सन् (वसुभिः—अरतिः)

धनदेहाभिमानरहितः सन् (विभाति) विविधं भांति भक्तानामुपर्यनुग्रहदृष्ट्या विभाति शत्रूंश्च दहति ॥ ५ ॥

भाषार्थः—जब ब्रह्म महानारायण की योषा महामाया को नन्द गृहमें प्रकट करतेहुये जायमान गमनशील कृष्णवर्णदेहरूपा माया को अपने तेजसे व्याप्त करता है तब मानससूर्य के आत्माको ऊँचा स्थित करते अर्थात् योगनिष्ठा होते धनदेहाभिमान से रहित होते श्रीकृष्ण नानाविधिसे प्रकाश करते हैं, अर्थात् भक्तोंपर अनुग्रह दृष्टि से और शत्रुओंपर क्रोध दृष्टिसे ॥ ५ ॥

मंत्रः–प्रकाव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानञ्जनिमा विवक्ति महिव्रत शुचिबन्धुः पावकः पदावराहो अभ्येति रेभन् ॥६॥

मंत्रार्थः—(उशना) शुक्रः इव (काव्यं) स्तोत्रं (ब्रुवाणः) उच्चारयन् (देवः) वेदाभिमानी देवः (देवानां) अवताराणां (जनिमा) जन्मानि (प्रविवक्ति) प्रकर्षेण ब्रवीति (महिव्रतः) पृथिव्याधारकः। "वृभृतौ" (शुचिबंधुः) दीप्तितेजस्कः (पावकः) पापानां शोधकः (वराहः) श्री वाराहावतारः (रेभन्) शब्दं कुर्वन् (पदा) पादेन (अभ्येति) देवानां समीपे गच्छति ॥ ६ ॥

(भाषार्थः) शुक्रकी समान स्तोत्रको उच्चारण करता वेदाभिमानी देवता अवतारों के जन्मों को कहता है पृथ्वीधारण करने वाले दीप्ति तेज पापों से शुद्ध करने वाले श्रीवाराहजी शब्द करते हुये देवताओं के समीप जाते हैं ॥६१॥

मंत्रः–सयोजयत उरुगायस्य जूतिं वृथा क्रीडन्तं मिमतेन गावः परीणसङ्कृणुते तिग्मशृंगो दिवा हरिर्ददृशे-नक्तमृज्रः ॥ ६२ ॥

मंत्रार्थः—(स) वाराहावतारः (उरुगास्य) बहुभिः स्तुतस्य विष्णोः (जूतिं) गतिं (योजयते) स्वकीये देहे युनक्ति (वृथा) मायारूपेण (क्रीडन्तं) (गावः) इन्द्रियाणि (न) (मिमते) मातुं न शक्नुवन्ति (तिग्मशृंगः) परीणसं) भूमिं बहुपदार्थवतीं (कृणुते) करोति (दिवा) देवानां संचारकाले ((हरिः) विष्णुरूपः (ददृशे) द्रश्यते नक्तम्) असुराणां संचारकाले (ऋज्रः) ऋजूगामी विस्पष्टो वाराहो द्रश्यते ॥ ६२ ॥

भाषार्थ—वह वाराहजी विष्णु की गति को अपनी देह में युक्त करते हैं इन्द्रियां उस माया रूपसे क्रीड़ा करनेवाले को नहीं जानसकतीं वह तीक्ष्ण शृङ्ग वाला पृथिवी को बहु पदार्थवती करता है दिवस अर्थात् देव संचारकाल में विष्णुरूप दीखता है और रात्रि अर्थात् असुरोंके संचारकाल में वाराहरूप दीखता है ॥ ६२ ॥

मंत्रः–इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदं समूढ-मस्य पा ँ सुरे ॥ ९ ॥ ६३ ॥

मंत्रार्थः—(विष्णुः) त्रिविक्रमावतारो वामनः (इदं) विश्वं) (विचक्रमे) विभज्यक्रमतेस्म (त्रेधा पदं निदधे) भूमावेकं पदमन्तरिक्षे द्वितीयं दिवि तृतीयम् (अस्य) पदं (पांसुले) चतुर्दशभुवनमय ब्रह्माण्डे (समूढम्) सम्यगन्तर्भूतम् ९

भाषार्थः—अमरेश त्रिविक्रमावतार वामनजी इस विश्व को उल्लंघन करते हैं तीन पग रखते हैं एक भूमिपर, दूसरा अंतरिक्ष में, तीसरा स्वर्ग में, इसका चरण चतुर्दशभुवनमय ब्रह्माण्ड में सम्यक् अन्तर्भूत होजाते हैं ॥ पुनः–यजुर्वेद अ० १७—मं० ३३ ।

मन्त्रः-आशुः शिशानो बृषभोन भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनां संक्रन्दनोऽनिमिष एकवीरःशत ँ सेना अजयत्साकमिन्द्रः ॥ १० ॥

मंत्रार्थः-(आशुः) आसमन्तात् शुइत्यव्यक्तः शब्दो यस्यस वाराहावतारः (शिशानः) शिशिला मन्दराचलः समुद्रमथने यस्य शानस्तीक्ष्णकारकः स कूर्मावतारः (वृषभः) वर्णानां श्रेष्ठो वामनावतारः (भीमः असुराणां भयंकरो नृसिंहावतारः (घनाघनः) घनः घनश्यामः अघनःबलदेवावतारः (चर्षणीनां) दस्युप्रायमनुष्याणां (क्षोभणः) क्षोभहेतुर्निष्कलंकावतारः संक्रन्दनः क्षत्रियाणां समाहन्तारः परशुरामावतारः (अनिमिषः) मत्स्यावतारः [न] च (एकवीरः) अद्वैतो वीरो रामावतारः (इन्द्रः) परमेश्वरः (साकम्) देवैः सह देवांश नरादिभिः सह वा (शत ँ) असंख्यातः (सेनाः) देव शत्रूणां सेनाः (अजयत्) ॥ ९ ॥

भाषार्थ—वाराह, कूर्म, वामन, नृसिंह कृष्ण, बलदेव निष्कलंक परशुराम, मत्स्य, रामावतारवाले परमेश्वर ने देवताओं वा देवांश मनुष्य आदिके साथ असुरों की असंख्य सेनाओं को जीता। इति वेदांतसारे। हेशिष्य इसीप्रकार से चारों वेद में अवतार का प्रमाण है और मूर्तिपूजन का श्राद्धका भी प्रमाण है केवल मूर्ख लोग जो हैं नास्तिक धर्मवाले उनको प्रमाण नहीं मिलता है काहे से कि सब रावणादि बंश के राक्षस हैं उन्होंने ब्राह्मणकुल में अवतार लिया है इस से अवतार का पूजन का श्राद्ध का खण्डन करना उनका धर्म ही है। हेशिष्य, यदि अवतार मूर्ति श्राद्ध वेद में नहीं प्रमाण होता तो महर्षि वाल्मीकिआदि क्यों कहते इससे सब प्रमाण है और वेदही का विस्तार सब पुराण है तिस में सब प्रमाण है। हेशिष्य, सब ग्रन्थन में सार सिद्धांत दो ग्रन्थ हैं एक वाल्मीकीय रामायण दूसरा भगवत्गीता यह दूनौं ग्रन्थ साक्षात् वेदार्थ है तिस में रामायण में तो अखंड रामावतार की कथा वर्णन है और रामायण के युद्ध काण्ड में वेदवक्ता ब्रह्माजी ने कहा है कि मत्स्य, वाराह, कच्छप, नृसिंह, कृष्ण, वामन इत्यादि आप ही हैं ऐसा रामजी से कहा है इससे वाल्मीकीय रामायण से भी सर्वावतार सिद्ध होता है और गीतामें भी कृष्णजीने ऐसा कहा है। यथा—

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥ ६८ ॥
परित्राणायसाधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ ६९ ॥

अर्थ—जब जब निश्चय करके धर्म की हानि होती है और अधर्म की वृद्धि होती है तब मैं रूपको धारण करता हूं। साधुन के रक्षणार्थ और दुष्टन के नाश के वास्ते युग युग में धर्मस्थापनके वास्ते अवतार लेता हूं। इत्यादि कहा है इससे हेशिष्य, अवतार होना प्रमाण है इस में संदेह नहीं करना चाहिये (प्रश्न) हे स्वामीजी श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी को हैं सो कृपा करके कहिये काहे से कि गोस्वामीजी की रामायण बहुत विलक्षण है और सर्वदेश में सर्व भाषा में होकर घर घर किल्लोल कर रही हैं सो कहिये।

(उत्तर) हेशिष्य, ब्रह्मसंहिता में लिखा है कि एक दिन महर्षि बाल्मीकि जी रामजी से मिलने के लिए साकेतपुरी को गये तहां श्रीरामजी को राज कुमार कहा सो लक्ष्मणजी को अच्छा नहीं लगा लक्ष्मणजी ने क्रोध होके शापदै दिया कि आप जाय के पुनः शरीर को धारण कर के राजकुमार श्रीरामजी की कथा वर्णन करो सो वही बाल्मीकी जी शाप के वशहोके सरवरि ब्राह्मण के कुल में जन्म लेकर श्री तुलसीदास जी हुए हैं सो यह कथा वशिष्ठसंहिता में भी प्रसिद्ध है यथा—वशिष्ठ वचन।

बाल्मीकिस्तुलसीदासः कलौ देवि भविष्यति।
रामचन्द्र कथा साध्वी भाषा रूपां करिष्यति ॥६०॥

अर्थ—बाल्मीकिजी कलियुग में तुलसीदासजी होयँगे और श्रीरामचन्द्रजीकी कथा को शांतिरस में भाषारूप करेगें ॥ इत्यादि कहा है इससे हे शिष्य. श्री तुलसीदासजी अवतार हैं कोई सामान्य पुरुष नहीं हैं जो कदापि सामान्य पुरुष होते तो ऐसी कीर्ति संसार में न होती। देखो और भी बहुतसे ग्रन्थ बने हैं परंच ऐसा मान किसी ग्रन्थ का नहीं है जैसा कि श्रीतुलसीकृत रामायण का मान है बस इतने में ही जान लो कि श्रीतुलसीदासजी आचार्य्य हैं और चारों वेद छवो शास्त्र अठारहों पुराणके वक्ता रहे सो आपही कहा है कि "नानापुराणनिगमागमसम्मतं" इत्यादि से रामायण में विद्वत्ता प्रसिद्ध है इस बातको विद्वान् लोगजानते हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, श्रीगोस्वामीजी के रामायण में और जो हैं सोतो सब जान परते हैं। परन्तु "सतपंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरे" इसका अर्थ यथार्थ नहीं जान परता है और न किसी के मुख से सुना है और न किसी टीकाकारने इसका अर्थ ठीक २ किया है सो आप कृपा करके कहिये क्योंकि आपही इसका अर्थ यथार्थ जानते हैं सो कहकर मेरे सन्देह को दूर कीजिये। उत्तर हे शिष्य, यह वचन श्रीगोस्वामीजी के रामायण भरे में विलक्षण और बहुत ही कठिन से भी कठिन है और रामायण भरेका सार सिद्धांत है इसका अर्थ समझना बहुत कठिन है यह रामायण की कुंजी है इसका अर्थ जो जानेगा सो रामायण भरेका कथा सब वेद पुराण शास्त्रके सिद्धान्त को

जानलेगा। हे शिष्य, श्रीरामजी के नामरूप लीला धाम चारो परब्रह्म के स्वरूप हैं ऐसी अथर्वण वेदकी श्रुति है। यथा—

सहोवाच–कौशल्येयो रघुनाथ एव महापुरुषः।

तस्य नाम रूपलीला धाममना वचनाद्यविषयाः॥

अर्थ— कौशल्यानन्दन श्रीरघुनाथजी महापुरुष हैं तिनके नामरूप लीला धाम चारों मन वचनसे परे है और अविषय हैं॥ १॥

रामस्य नाम रूपं च लीलाधाम परात्परम्।

एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्दविग्रहम्॥ ६२॥

अर्थ—श्रीरामजी के नाम रूप लीला और धाम यह चारो परात्परब्रह्म हैं, नित्य हैं, सच्चिदानन्द के स्वरूप हैं। इसी प्रकार के अनेक प्रमाण हैं तिनमें श्रीरामनाम सबसे श्रेष्ठ है रामनाम के समान दूसरा कुछ नहीं है काहे से कि रामनाम ज्ञानमार्ग का उपदेशक है यह प्रमाण अथर्वण वेदोक्त रामतापनीयोपनिषद् में कहा है। यथा—

धर्ममार्गं चरित्रेण ज्ञानमार्गं च नामतः।

स्वस्यध्यानेन वैराग्यमैश्वर्य्यं स्वस्य पूजनात्॥६३॥

अर्थ—श्रीरामजी के चरित्र करके धर्ममार्ग का उपदेश होताहै और रामनाम से ज्ञानमार्ग का उपदेश होता है और ध्यान करने से वैराग्य होता है पूजन करने से ऐश्वर्य होता है इत्यादि कहा है। इससे रामनाम सर्वोपरि है इससे परे सिद्धांत कुछ नहीं है यह सब का सिद्धांत हैं। हे शिष्य, इसी रामनामको रामायण में भी सार कहा है। यथा प्रमाण मानसरामायणे—

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययम्, श्रीमच्छंभुमुखेन्दुसुन्दरवरं संशोभितं सर्वदा। संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं, धन्यास्ते कृतिनः पिवन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्॥

भावार्थ—श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि ते सुकृतिजन धन्य हैं कि जिन्होंने सततं नाम निरन्तरसदा सर्वकाल में श्रीरामनामामृत अर्थात् रामनाम अमृत को पान करते हैं अब यह दिखाते हैं कि रामनाम रूप अमृत कहाँ से भया है अर्थात वह प्राकृत अमृत जो है सो तो प्राकृत जो क्षीरसमुद्र है उससे प्रकट भया है और यह जो रामनाम रूप अमृत है सो ब्रह्मजो वेद है मायासे रहित अर्थात् अविनाशी सोई तो अम्भोधि नाम समुद्र है तिससे समुद्भवनाम उत्पन्न भया है अथवा ब्रह्मरूप समुद्र से उत्पन्न भया है भाव बकार से रकार भया है और हकार से मकार भयाहै तात्पर्य्य ब्रह्मका भी सार राम नामहै पुनः वह रामनामामृत कैसा ह कि कलिमल अर्थात् कलियुग के जो मलनाम पाप हैं तिनको प्रकर्ष करके ध्वंसन नाम नाश करने वाला है और अव्ययं नाम निर्विकार अर्थात् मायासे रहित हैं भाव वह अमृत जो समुद्रसे प्रकट भया है सो मायिक है और श्रीरामनामामृत जोहै सो मायिकनहींहैं इससे अव्यय कहा पुनः श्रीराम नामामृत कैसा है कि श्रीमान् अर्थात् तेजमान् जो श्रीशिवजीके मुखचन्द्र समहै तिसमें सुन्दर श्रेष्ठ कल्याणकारी सर्वदा शोभित भया सर्वदा कहनेका भाव यहहै कि वह अमृत तो क्षीरसमुद्रसे प्रकट होकर चन्द्रमा में शोभित भया तिसमें भी सर्वदा नहीं काहेसे कि चंद्रमाका कल्पांतमें नाश होजाताहै और यह श्रीरामनामामृत जोहै सो शिवजीके मुखचंद्रमें सर्वदा शोभित भया। भाव शिवजी श्रीरामनामके प्रतापसे अमर हैं इससे सर्वदा कहा यह कथा विस्तारसे अमररामायण में और शुकदेवसंहितामें है और केदारखण्ड में शिवजीने पार्वति से कहाहै। यथा—

रामनामसमंतत्त्वं नास्ति वेदान्तगोचरे ॥ यत्प्रसादात्परां सिद्धिं संप्राप्ता मुनयोऽमलाः ॥ ७५ ॥ अतस्सर्वात्मना रामं नामरूपं स्मर प्रिये ॥ अनायासेन भोदेवि अमरी त्वं भविष्यसि ॥ ७६ ॥ रामनामप्रभावेण ह्यविनाशीपदं प्रिये । प्राप्तं मया विशेषेण सर्वेषां दुर्ल्लभं परम् ॥ ७७ ॥

अर्थ—शिवजी बोलेकि रामनाम के समान तत्त्व वेदांतविषय में नहीहै

जिनकी कृपासे संपूर्ण मुनियों को निर्मल परेसे भी परे सिद्धि प्राप्त भया है॥ इससे सबके आत्मारूप श्रीरामनाम को हे प्रिये, स्मरणकर जिनके स्मरण करने से विनाश्रमही अहोदेवि, तुम अमर होजावोगी॥ श्रीरामनाम के प्रभाव करके हे प्रिये हम सबसे दुर्लभ अविनाशी पदको प्राप्त हुए हैं इत्यादि कहा है इससे सर्वदा कहा और श्रीमान् कहने का यह भाव है कि चन्द्रमाकी कलाक्षीण होती रहती हैं और शिवजीके मुखचन्द्र सदा एकरस रहतेहैं इससे श्रीमान् कहा पुनः श्रीरामनामामृत कैसा है कि संसारामय अर्थात् संसार जो जन्ममरणरूप रोग है तिनके नाश करनेके वास्ते भेषजं नाम औषधि के समान है भाव उस अमृत से केवल शरीर ही का रोग जाता है और रामनामामृत से संसाररूप रोग नाश हो जाता है इससे रामनाम सर्वोपरि है और सब सुखों के करने वाले हैं भाव अमृत में स्वाद संतोष दुई सुख है और राम नाम में सब सुख है इससे सुखकरं कहा फिर श्रीरामनामामृत कैसाहै कि श्रीजानकीजीका जीवन है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इस श्लोक में गोस्वामीजी ने रामनामामृत के पान करने वाले अर्थात् नामके जापक दोई वर्णन किये हैं इसका क्या अभिप्राय है सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, इसका आशय यहहै कि श्रीरामनाम के जापक शास्त्रमें बहुत कहे हैं परंतु श्रीजानकीजी के समान और शिवजी के समान दूसरा नाम जापक कोई नहीं हैं सो गोस्वामी जी ने रामायणही में कहा है कि "तुम पुनि रामनाम दिन राती। सादर जपहु अनंग अराती" इत्यादि रात्रि दिन के नाम जापक शिवजी को कहाहै पुनः (दोहा-नामपाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट) इत्यादि श्रीजानकीजी को भी रात्रि दिनके नाम जापक कहाहै इससे दो जापक कहा है भाव रामनाम सर्वोपरि है और सबका सिद्धांत सार है दूसरे हेशिष्य रामजी के प्राप्ति करानेवाले श्रीजानकी जी और शिवजी दूनो मुख्य आचार्य्य हैं बिना इन दनौं की कृपाभये श्रीरामजीकी प्राप्ति होना दुर्लभ है। यथा रामायणे गोस्वामीजी का वचन—

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ॥
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वांतस्थमीश्वरम् ७८

अर्थ-गोस्वामीजी कहते हैं कि भवानीशंकर दनोंको हम बन्दना करते हैं कैसे हैं दोनों कि श्रद्धा विश्वास के रूपहैं जिनके विनासम्पूर्ण सिद्ध जो हैं सो

अपने हृदयमें स्थित ईश्वर को नहीं देखते हैं इत्यादि कहाहै पुनः-जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सोनपाव मुनि भगति हमारी॥ शिवपद कमल जिन्हहिं रतिनाहीं॥ रामहिते सपनेहु न सुहाहीं॥ पुनः श्रीरामजीके बचन यथा औरोएक गुपुत मत सबहिं कहौं करजोरि। शंकर भजन बिनानर भगतिन पावइ मोरि॥ पुनः बिनय॥ विनतवकृपारामपद पंकज सपनेहु भगतिन होई। ऋषय सिद्धि मुनि मनुज दनुजसुर अपर जीव जगमाहीं॥ तव पद विमुख पार नहिं पाव कोउ कलपकोटि चलि जाहीं॥ वहुकल्प उपाय करिये अनेक॥ विनु शंभु कृपा नहिं भौविवेक। हे शिष्य, इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे बिना शिवजीकी कृपा भये रामजी की प्राप्ति होना कठिन है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, शिवजी की भक्ति तो तामसी धर्म है ऐसा शिवपुराण में कहा है तो शिवभक्ति कैसे करना चाहिये यथा प्रमाण शिवपुराणे-

सात्विकैः सेव्यते विष्णुस्तामसरेव शंकरः।
राजसैः सेव्यते ब्रह्मा संकीर्णैस्तु सरस्वती॥

अर्थ—सात्विकी लोग विष्णुजी को सेवते हैं, तमोगुणी लोग शंकरजी की सेवा करतेहैं, रजोगुणी लोग ब्रह्माजीकी सेवा करतेहैं और महाघोर तमोगुण वाले नीच लोग सरस्वतीजी की सेवा करतेहैं। इत्यादि कहा है सो क्या है? कहिये। (उत्तर) हे शिष्य; इहाँ पर सूक्ष्म बिचार है "शिवसंहिता" में लिखाहै कि एक दिन शिवजी ने पार्वती से कहा कि हेप्रिये, आपके भक्त सब नरक में जाते हैं और मेरे दो प्रकार के भक्त हैं तिनमें मेरे जो भक्त हैं और रामजी के द्रोही हैं सो तो नरकमें जाते हैं और मेरी भक्ति केवल रामजी के वास्ते करते हैं तिनको मैं परमपद देता हूं यथा प्रमाण शिवसंहितायाम्—

नहि सर्वेऽपि मद्भक्तास्तामसानष्टचेतसः।भ्रंश्यन्ते पुरुषार्थाच्च तवभक्ताइवाम्बिके॥७९॥ रामदेवं परब्रह्म भगवन्तं पुरुषोत्तमम्। राममेव परं प्राप्य मत्वानः पुरुषास्तु ये॥८०॥ तद्भक्तिज्ञानदातारमुमे मां समुपाश्रिताः।आचार्य तेन सेवन्ते तेतरन्ति भवाम्बुधिम्॥८१ मामेवं परमत्वेन भजन्तेऽपि द्विषन्ति ये।न ते मुक्तिपदं यान्ति भूतयोनय एव ते॥८२॥

अर्थ—हे प्रिये, हमारे सब भक्त अचेत नष्ट तामसी नहीं होते हैं और तुम्हारे भक्त के समान पुरुषार्थ से भ्रष्ट होते नहीं जो श्री रामजी को सबसे परे मान के तिनके प्राप्ति के वास्ते हमको भजते हैं तिनको मैं भक्तिज्ञान देता हौं, और गुरु को जो नहीं सेवते हैं ते संसार में गोता खाते हैं और जो लोग मेरे ही को सबसे बड़ा मानि के भजते हैं और रामजी से द्वेष रखते हैं तिनको मोक्ष नहीं होता है भूत प्रेत योनियों में जाते हैं। इससे हे शिष्य, शिव भक्ति रामजी के भक्ति वास्ते करे तब तो ठीकही है नहीं तो नरक तो बने बनाया है। अब श्री जानकी जीं का आचार्य्यत्व सुनो सदा शिवसंहिता में लिखा है। यथा—

राजमार्गमिमं विद्धि रामोक्तं जानकीकृतम् ॥
यदृते चान्यमार्गोस्तु चौराणां विथिका यथा ॥८३॥
श्रीजानकीसम्प्रदायं रामराज्यसमन्वितम् ।
सृते केऽपि न यास्यन्ति वाञ्छितं फलमेव च ॥८४॥

अर्थ—श्रीरामजी की प्राप्ति के अर्थ श्रीरामजी का कहा भया और श्रीजानकी जी का किया यह राजमार्ग है याने श्रीरामजी के समीप पहुंचने के वास्ते सदर पक्की सड़क है जो चाहे सो चला जावे और इसके सिवाय जो विमुख-मार्ग है सो सब चोरों के मार्गसमान है। भाव भगवतद्भक्ति को छोड़ के जो दूसरे मार्ग में चलता है सो दण्ड का भागी होता है हमारे राम जी का भजन मार्ग सर्वोपरि है और सब धोखा मात्र है। श्रीजानकीजी के सम्प्रदाय बिना जो दूसरा कोई श्रीराम जी के रहस्यमंडल में जाना चाहे तो नहीं जा सकते हैं यह निश्चय है और इसके विना दूसरा मनवांछित फल को भी नहीं दे सकता है। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण हैं इस से श्री जानकी जी भी प्रधान आचार्य्य हैं। भाव-शिवजी महाराज श्री राम जी के समीप पहुंचानेवाले ऊपर के आचार्य्य हैं और श्री जानकी जी महारानी जो हैं सो रहस्यमण्डल की प्राप्ति कराने वाली भीतर का आचार्य्य हैं इसी प्रकार से दोनों आचार्य्य हैं इससे इस श्लोक में रामनाम के जापक दोऊको कहा इससे यह दिखाया कि दोनों आचार्य्यों के राम नाम ही आधार है काहेसे कि राम नाम से परे तत्व कुछ नहीं है यह सब वेद, शास्त्र, पुराण का सिद्धान्त है ताते सब छोड़के राम

नाम जपो। हेशिष्य, गोस्वामी जी के सब ग्रन्थों में भी रामनाम ही सार है सो आप गोस्वामीजीने श्रीरामजी की शपथ करके कहा है। यथा (कवितावली) रामनाम मातु पितु स्वामी समरथ हितु आस रामनाम को भरोसो रामनाम को॥ प्रेमरामनाम ही सौं नेम रामनामही को जानी न परमपद दाहिनों न वाम को॥ स्वारथ सकल परमारथ को रामनाम रामनामहीन तुलसी न काहू काम को॥ रामकी सपथ सरबस मेरे रामनाम कामधेनु काम तरु मोसे छीन छाम को इत्यादि कहा है॥ इससे गोस्वामीजी का सिद्धान्त केवल श्रीरामनाम है दूसरा कुछ नहीं है यह तुम निश्चय करके जानो यद्यपि करके रामजी के नाम रूप लीला धाम चारों परब्रह्म हैं तौ भी श्रीरामनाम सबसे श्रेष्ठ है इसमें सन्देह नहीं है काहेसे कि रूप लीला धाम सबको सुलभ नहीं है और सर्वदेश में भी नहीं है और रामनाम ऊँच नीच राजा रंक सबको सुलभ है और सर्वदेशमें है। यथा—(रामनाम भूविख्यातमिति श्रुतिः) और विस्तारसे गोस्वामीजीने विनय में कहा है। यथा—(नीचहूँको ऊँचहूको रंकहू को रायहूको सुलभ सुखद आपनो सो घरु है) इत्यादि कहा है इससे रामनाम सर्वोपरि है और श्रीरामजी के सौ कोटि रामायण में भी सार श्रीरामनामही है सो गोस्वामीजी ने रामायणहीमें कहा है। यथा—(रामचरित सतकोटि महँ लिये महेश जिय जानि) इत्यादि और विनय में भी कहा है। यथा—राम रावरो नाम मेरो मातु पितु हैं। सुजन सनेही गुरु साहिब सखा सुहृद रामनाम प्रेमपन अविचल वितु है॥ सतकोटि चरित अपार दधिनिधि मथिलियो काढि वाम देवनाम घृतुहै॥ नाम को भरोसो बल चारिहु फलको फल सुमिरिये छोड़ि छल भलो कृतु है॥ स्वारथ साधकु परमारथ दायकु नाम रामनाम सारिखोन और हितु है॥ तुलसी सुभाय कही सांचीये परैगी सही सीतानाथ नाथ चितहूंको चितु है इत्यादि कहा है॥ इससे श्रीराम नाम सर्वोपरि है। हे शिष्य, गोस्वामीजीके सब ग्रन्थों में रामनामहीं सार है। यथा—(बरवारामायणे कलि नहिं ज्ञान विरागन योग समाधि॥ रामनाम जपु तुलसी निरुपाधि॥ रामनाम दुई आखर हिय हितु जानि॥ रामलषन सम तुलसी सिखवन आना माय बाप गुरू स्वामी रामकर नाम तुलसी जेहिन सुहाय ताहि विधि बाम रामनाम जपु तुलसी होइ बिशोक। लोक सकल कल्यान नीक परलोक॥ तप तीरथ मखदान नेम उपवास॥ सबते अधिक राम जपु तुलसीदास॥ पुनः

वैराग्य संदीपिनी) तुलसी जाके बदनते धोख्यो निकसत राम॥ ताके पग की पगतरी मेरे तनके चाम॥ पुनः रामाज्ञा (रामनाम कलिकाम तरु सकल सुमंगल कन्दु। सुमिरत करतल सिद्धि जग पग पग परमानन्दु॥ रामनाम पर रामते प्रीतिप्रतीति भरोस॥ सो तुलसी सुमिरत सकल सगुन सुमंगल कोस (दोहावली) कलि पाषंड प्रचार प्रबल पोप पाँवर पतित॥ तुलसी उभय अधार रामनाम सुरसरि सलिल॥ रामनाम अवलंब बिनु परमारथ की आस॥ बरषत वारिद बून्द गहि चाहत चढन अकास॥ इत्यादि बहुत कहा है कहां तक लिखें सब ग्रन्थों के प्रमाण देने से पुस्तक विस्तार होजायगी। ताते थोरेही में जान लेव श्रीरामनाम सबका सार है इससे परे कुछ नहीं है रामतापनी-योपनिषद् में कहाहै कि (ज्ञानमार्गश्च नामतः) अर्थात् ज्ञान मार्गका उपदेशक श्रीरामनाम है इससे सर्ववेदार्थका तत्त्वहै श्रीराम नाम काहेसे कि वेदका सिद्धान्त है कि (ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः नान्यः पन्था विद्यते) अथात् बिना ज्ञान मोक्ष नहीं और इसके सिवाय मुक्तिके प्राप्तिके वास्ते दूसरा मार्गभी नहीं कहा है पुनः (ज्ञानादेव तु कैवल्यमिति श्रुतिः) अर्थात् ज्ञानका साधन केवल रामनाम है इसके विना अन्यसाधन वृथा हैं विना रामनामके जपे जीवका कल्याण होना दुर्लभ है रामनामका जपनाही ज्ञानहै और सब तो कथनमात्र ज्ञान है। हे शिष्य, जो अहंब्रह्माऽस्मि को ज्ञान कहते हैं सो मिथ्या ज्ञानी हैं उन्होंने वेदार्थ नहीं जाना है इसीसे अपने को ब्रह्म ानते हैं ताते सब खटका छोड़के रामनाम जपो। हे शिष्य, (सदा शिवसंहिता) में लिखा है कि एक समय में सब ऋषि मुनि लोगोंने आपसमें वाद बिवाद किया और वेद शास्त्र पुराणोंके प्रमाण देदे कोई कहै कि मेरामत ठीकहै कोई कहै कि नहीं मेरा ही मत सर्वोपर है इसी प्रकार से बड़ा भारी शास्त्रार्थ भया परन्तु यह निर्णय न भया कि सबका सार क्या है तब सब मिलके बेदसे बूझा कि सबके सार सिद्धान्त क्या है सो बेद् भी सब मत प्रामाणिक देख के चुप हो गया तब सबने बेदबक्ता ब्रह्मा जी से बूझा तो ब्रह्माजी भी सब मत प्रामाणिक जानके घबड़ा गये निर्णय नहीं करसके तब सबने यथार्थ सिद्धान्त जानने के वास्ते भगवन् का ध्यान किया तो आकाशबाणी भई कि आप सब शेष भगवान् के पास जाओ और शेष जी जो कहैं वही सर्वोपरि जानना यह सुन के सबने शेष जी से बूझा तब सब जीवों के आचार्य्य जो हैं शेष जी सो सब ऋषियों मुनियों के सहित वेद से कहा। यथा सदा शिवसंहितायां विंशतमोऽध्याये शेष उवाच वेदान्प्रति।

रामनाम्नोऽथमुख्यार्थं भगवत्वे प्रतिष्ठितम् ।
विस्मृतं कण्ठमणिवद्वेदा शृणुत तत्त्वतः ॥ ८५ ॥
तात्पर्य्यवृत्या विज्ञेयो बोधयामि विभागतः ।
रामनाम्नि शुचिर्ज्ञेयाः षण्मात्राःतत्वबोधकाः ॥८६॥
रामनाम्नि स्थितो रेफो जानकी तेन कथ्यते।
रकारेण तु विज्ञेयः श्रीरामः पुरुषोत्तमः ॥८७॥
अकारेणतथा ज्ञेयो भरतो विश्वपालकः ।
व्यंजनेन मकारेण लक्ष्मणोत्र निगद्यते ॥८७॥
ह्रस्वाकारेण निगमा शत्रुघ्नः समुदा तः ।
मकारार्थो द्विधा ज्ञेयः सानुनासिकभेदतः॥०६॥
प्रोच्यते तेन हंसा वैं जीवाः चैतन्यविग्रहाः ।
संसारसागरोत्तीर्णाः पुनरावृत्तिवर्जिताः ॥६०॥
दास्याधिकारिणः सर्वे श्रीरामस्य महात्मनः ।
एतत्तात्पर्य्यमुख्यार्थादन्योर्थो योनुभूयते ॥६१॥
सोनर्थ इति विज्ञेयः संसारप्राप्तिहेतुकः ।

अर्थ —शेषजी बोले कि श्रीरामनाम के जो मुख्य अर्थ है उसी में भगवत्त्व प्रतिष्ठित है अर्थात् भगवान् शब्द का यथार्थ अर्थ रामनाम ही में घटता है काहे से कि सद्गुण करिके जो युक्त होय उसको भगवान् कहते हैं।

यथा विष्णु पुराणे।

ऐश्वर्य्यस्यसमग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः।
ज्ञानवैराग्ययोश्चैवषण्णांभगइतीरिणा ॥
उत्पत्तिं प्रलयंचैव भूतानामगतिंगतिम् ।

वेत्तिविद्या मविद्यांचसवाच्योभगवानिति ॥

अर्थात्—संपूर्ण ऐश्वर्य १ वीर्य २ यश ३ श्री ४ ज्ञान ५ वैराग्य इन छवों को भग कहते हैं । उत्पत्ति १ प्रलय २ भूतों की गति ३ अगति ४ विद्या ५ अविद्या इन छवों को जो जाने वह भगवान वाचक है। और श्रीरामनाम में भी षडक्षर हैं ताते छवो गुण केवल रामनाम ही के छवों अक्षर में विराजमान हैं इससे यथार्थ भगवान् एक रामनाम ही हैं दूसरा भगवान् नहीं है सोई शेषजी कहते हैं कि राम नाम ही में भगवत्त्व प्रतिष्ठित है भाव रामनाम बड़े समर्थ हैं हे वेद आपको रामनाम विस्मरण हो गया है जैसा कि मणि कंठही में है और खोजकरे भूल से अन्यत्र तैसेही आप करते हैं अर्थात् रामनाम का यथार्थ अर्थ आपही में है सो आप भूलगये हैं ताते आप तत्त्व को सुनो हम कहते हैं ॥१॥ सो तात्पर्य करके जानने योग्य हैं सो हम तत्वबोधार्थ के वास्ते विभाग करके कहते हैं श्रीरामनाम में तत्त्व के बोध करने वाली पवित्र छ मात्रायँ हैं ऐसा जानना ॥२॥ तिसमें रामनाम में जो रेफ हैं सोई तो श्री जानकी जी के स्वरूप कहते हैं और स्वयं रकार श्रीराम पुरुषोत्तम का स्वरूप जानो ॥३॥ और मध्याकार अर्थात् रकार मकार के बीच में जो अकार है सो जैसे श्रीराम पुरुषोत्तम हैं तैसे ही श्रीभरत जी के स्वरूप जानो जो सम्पूर्ण संसार के पालन पोषण करनेवाले हैं और व्यंजन याने मकार के अनुस्वार सोई तो यहां पै स्पष्ट श्री लक्ष्मणजी के स्वरूप जानो ॥ और हे वेद, ह्रस्वाकार अर्थात् मकार के अकार सो सम्पूर्ण शत्रुओं के नाश करने वाले श्रीशत्रुघ्न जी के स्वरूप उदाहरण याने प्रमाण जानो और मकार का दो प्रकार का अर्थ जानना एक तो निरनुनासिक भेदसे दूसरा सानुनासिक भेदसे यही तो ब्रह्मासे चीटी पर्य्यन्त सब हंसस्वरूप जीव हैं और सबही चैतन्यस्वरूप हैं ऐसा कहा है जो जीव संसाररूप समुद्र से पार हो जाते हैं सो पुनर्जन्ममरणसे रहित होजाते हैं। पूर्वोक्त ब्रह्मा से चीटी पर्य्यन्त जितने जीव हैं तिन सबको दासत्व अधिकार है याने श्रीरामजीपरमात्म की सेवकाई करना यह मुख्याधिकार है। हेवेद, श्रीरामनामके इतनेही तात्पर्य्य मुख्यार्थ है और अन्य अर्थ जो हैं अथवा करते हैं सो सब अनर्थ हैं ऐसा निश्चय करके जानना और दूसरा अर्थ जो है सो संसार का देने वाला है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, सब जीवोंको दासत्व अधिकार कहा और शास्त्रमें दास शूद्रको कहा है सो कैसा है कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, शास्त्रकारने तीनों वर्णोंकी सेवकाई

करने से शूद्रको दास कहा है इससे सेवक को दास कहते हैं इसीप्रकार से परमात्मा का सेवक जो हो सो भगवद्दास है और जीव जो हैं सो सब ईश्वर के दास हैं इससे दास कहने में कोई दोष नहीं है दास तो स्वयं ब्रह्माजी हैं तो दूसरे की क्या कथा। यथा—(ब्रह्मदासो ब्रह्माहमेति कितवाः) इत्यादि श्रुतिमें ब्रह्माजी से कहाहै और मंत्रभाष्य में भी कहा है। (अकारवाच्यस्य श्रीनारायणस्य मकारवाच्यात्मा दासइति कथ्यते) अर्थात् अकारवाच्य श्रीनारायण का मकारवाच्य जीवात्मा दास है और श्री बाल्मीकीयरामायण में हनुमान्जी ने कहा है कि (दासोहं कोशलेन्द्रस्य) इत्यादि। इससे हे शिष्य, जीव सदा भगवद्दास है ताते जो जीव रामजीके शरण में आजावे उनका रामदास कृष्णदास नारायणदास, वासुदेवदास, इत्यादि नाम धरना चाहिए मत्स्यदास, कूर्मदास, बाराहदास, कल्किदास, बौद्धदास इत्यादि आवेशावतारकनाम न धरे और न शिवदास, शंकरदास, दुर्गादास, कालीदास, देवीदास, गणेशदास धरे काहेसे कि जीव जो है सो रामजी का है इससे उन्हीके नाम संबंध का नाम धरे और देवतांतरका नाम पूर्वक न धरना चाहिये। यथा हारितस्मृतिः—(शक्त्याऽवेषावाराणां बर्जयेन्नाम वैष्णवः) अर्थात् शक्ति देवि दुर्गादिक और आवेषावतार मत्स्य कूर्म बाराहादि के नाम वैष्णव छोड़के नाम धरे इत्यादि कहाहै इससे दास कहा और रामनामके दो अर्थ हैं एकतो श्रीसीतारामजी के प्राप्ति वास्ते सो तो यही अर्थ है जोकिकही आये हैं और दूसरा अर्थ यह है कि रामनामसे ॐकार भया ॐकार से त्रिधा अहंकार भया अहंकार से ब्रह्मा विष्णु शिव हुए तिनसे संपूर्ण संसार हुआ यह अर्थ जो है सो अनर्थ है और संसार का देने वाला है इससे हेशिष्य, जो कोई रामजीसे मिलना चाहै सो पूर्वोक्त अर्थका विचार करे और छहो अक्षर मेंछवो स्वरूप के ध्यान करे अर्थात् ऊर्ध्व रकार में श्री जानकीजी का ध्यान करे और रकार में श्रीरामजीका मध्याकार में श्री भरतजीका और मकार के अनुस्वारमें याने बिन्दु में श्रीलक्ष्मणजी का मकार के अकार में शत्रुघ्नजी का ध्यान करे और सानुनासिक जो मकार है तिसमें अपना शुद्ध स्वरुप का ध्यान करे कि मैं नित्यहूं निर्विकारहूं भगवद्दासहूं शुद्ध चैतन्यरूप हूं इत्यादि ध्यान को धारण करके सर्वोपरि श्रीरामनाम को स्मरण करै वह जीव भगवद्रुप है यह निश्चय है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, श्रीरामनाम क्या वस्तु है और किसको राम कहते हैं सो कृपाकर कहिये (उत्तर) हे शिष्य, "रमुक्रीडा" धातु से राम शब्द भया

है इससे सब में जो रमे नाम क्रीड़ा करे उसको राम कहते हैं और श्रुति में भी प्रमाण है कि योगी लोग जिसमें रमे उसको राम कहिये। यथा—प्रमाण रामतापनीयोपनिषद् ॥

रमन्ते योगिनोन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि।
राम इति पदे नासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥

अर्थात् जिस सच्चिदानन्द अनन्त में बड़े २ योगी लोग रमण करते हैं सो यह श्री राम पद वाक्य परब्रह्म कहते हैं। भाव श्री रामनाम हीं परब्रह्म हैं और जितने नाम हैं सो सब ईश्वर के नाम हैं ब्रह्म वाचक नहीं हैं। और नाम रूप में अभेद है यथा वृहद्ब्रह्मसंहितायां।

न भेदोनामरूपाणां नामात्परतरं नहि।
तस्मान्निरंन्तरं देविनाम संस्मरणंचरेत् ॥

अर्थात—शिवजी बोले कि हे देवि नाम रूप में भेद नहीं है परन्तु साधनावस्था में नाम श्रेष्ठ है उससे निरंन्तर श्री राम नाम को जपना चाहिए। इस प्रसंग को श्री गोस्वामी जी ने श्री नाम वन्दना में खूब वर्णन किया है।

हे शिष्य, अथर्वणवेद की श्रुति से चारो भाई रामनाम ही से अवतार लेते हैं। यथा प्रमाण—

अकाराक्षरसम्भूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः।
उपकाराक्षरसम्भूतः शत्रुघ्नस्तैजसात्मकः ॥
प्राज्ञात्मकस्तु भरतो मकाराक्षरसम्भवः ॥
अर्द्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानन्दैकविग्रहः ॥६४॥

अर्थ—याज्ञवल्क्यजी बोले कि अकार अक्षर से श्री लक्ष्मण जी भये हैं जो विश्वभावन अर्थात विश्वात्मक अभिमानी हैं और उकार अक्षर से श्री शत्रुघ्न जी भये हैं जो तैजसात्मक अभिमानी हैं और प्रज्ञात्मक अभिमानी जो श्री भरत जी हैं सो मकार अक्षरसे प्रकट भये हैं और अर्द्धमात्रा जो रेफ है तिससे प्रत्यगात्मा श्री सीतारामजी भये हैं जो सच्चिदानन्द के स्वरूप हैं इत्यादि

कहा है। हे शिष्य, इहां अर्धमात्रा में श्री सीता जी के स्वरूप जानना काहेसे कि युगल स्वरूप एकही हैं यथा (अर्धमात्रे स्थितौ श्रीमत्सीतारामौ परात्परौ) इत्यादि पद्मपुराण में कहा है इससे अर्द्धमात्रा में सीतारामजी दूनों स्थित हैं इससे श्रीरामनाम सर्वोपरि है। पुनः स्कन्दवचन—

सर्वेऽवताराः श्रीरामनामशक्तिसमुद्भवाः ।
सत्यं वदामि देवेशि नाम माहात्म्यमद्भुतम् ॥६५॥

अर्थ—स्कन्दपुराण में श्री शिवजी ने पार्वती जी से कहा है कि हे देवेशि, सब अवतार श्रीरामनाम की शक्ति से उत्पन्न होते हैं हम सत्य कहते हैं काहे से कि रामनाम का माहात्म्य आश्चर्य्य है पुनः वायुपुराणे—

सर्वेषामवताराणां कारणं परमाद्भुतम् ।
श्रीमद्रामेति नामैव कथ्यते सद्भिरन्वहम् ॥६६॥

अर्थ-वायुपुराण में शिवजी ने नारदजीसे कहा है कि सब अवतारोंका परम कारण आश्चर्य्यमय श्रीरामनाम ही कहा है यह मत सबको सब दिन से सिद्ध है। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण हैं श्रीरामनाम सर्वोपरि और सब अवतार का आदिकारण है रामनाम ही से कोटि २ ब्रह्माण्ड होते हैं और क्रियादि शक्तियां भी होती हैं। यथा—

रामनामांशतो जाता ब्रह्माण्डाः कोटिकोटिशः ।
रामनाम्नि परे धाम्नि संस्थिताः स्वामिभिस्सह॥६७॥
स्वाभाविकी तथा ज्ञानक्रियाद्याः शक्तयः शुभाः ।
रामनामांशतो जाताः सर्वलोकेषु पूजिताः ॥६८॥

अर्थ-पद्मपुराण में वेदव्यास जीने सब विप्रों से कहाहै कि श्रीरामनामही के अंशसे कोटि २ ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं और परमतेज मय श्रीरामनामही में स्वामी के सहित अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महादेव के सहित कोटि कोटि ब्रह्माण्ड स्थित हैं ॥ ११ ॥ तैसे ही श्रीराम नामही से स्वाभाविक ज्ञानशक्ति क्रियाभक्ति उपसनाशक्ति आदि लेके जितनी शक्तियां शुभदायक हैं सो सब उत्पन्न भई हैं

और सब लोक में सुपूजित हो रही हैं। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण हैं। श्री रामनाम के समान दूसरा कुछ नहीं है रामनाम सबका कारण है। यथा—

रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः।
रकाराज्जायते शम्भू रकारात्सर्वशक्तयः ॥ ९९ ॥
आदावन्ते तथा मध्ये रकारेषु व्यवस्थितम्।
विश्वं चराचरं सर्वमवकाशेन नित्यशः ॥ १०० ॥
रकाराज्जायते वायू रकाराच्छब्द उच्यते।
वाक्तत्त्वंच मकारेण रामएवैति वै श्रुतिः ॥ १०१ ॥
रकाराच्छेषलोकश्च अकारे मर्त्यसम्भवः।
मकाराच्छून्यलोकश्च त्रयो लोका निरामयाः ॥१०२॥
रामेण अक्षरा जाताः स्वरो रामेण जायते।
वेदवेदांगयोर्भेदो रामेण जायते ध्रुवम् ॥१०३॥
रामशब्देन वर्णाश्च विजानीयात्प्रयत्नतः।
रकाराद्ब्राह्मणा जाता अकारेण नृपास्तथा ॥१०४॥
मकारेण विशः प्रोक्ता अकारेणा धमास्मृताः।
अनुस्वारेण ब्रह्माण्डाः सर्वे रामेण संयुताः ॥ १०५ ॥

अर्थ—(पुलस्त्य संहिता में) लिखा है कि रकार से ब्रह्मा जी भये हैं रकार से विष्णु भगवान् भये हैं रकार से शिवजी भये हैं और रकार से ही देवि दुर्गादि शक्ति भई हैं॥ आदि अन्त तथाहि मध्य सब रकार ही में स्थित हैं और जितने विश्व में चराचर जीव हैं सो सब नित्यप्रति रकार ही में विचरते हैं रकार से पवन भये हैं रकार से शब्द भये हैं और वाक् नाम बाणी का तत्व मकार है। भाव मकार से वाणी भई है इसी को राम ऐसा वेद कहते हैं। हे शिष्य, इसका भाव यह है कि "सोहं" शब्द रामनाम ही से भया है रकार से शेषलोक याने पाताल लोक भया है और अकार से मृत्यु लोक भया है

और मकार से शून्य याने स्वर्ग लोक भया है इसी से तीनों लोक निरामय हैं रामनाम ही से सम्पूर्ण अक्षर भये हैं और सप्त स्वर भी रामनाम ही से भये है और वेद वेद के षडंग सब रामनामही से भये हैं यह निश्चय है । और रामही शब्द में चारोंवर्ण भी प्रयत्न से जानना चाहिये जैसे कि रकार से ब्राह्मण भया है अकार से नृप जो राजा है याने क्षत्रिय भया है ॥ और मकार से वैश्य भये हैं मकार के अकार में अधम जो शूद्र है सो भये हैं और अनुस्वार जो विन्दु है तिसमें सब ब्रह्माण्ड स्थित हैं ॥ इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे रामनाम सर्वोपरि है हे शिष्य, रामनाम ही से सब भये हैं ऐसे ही और भी कहा है। यथा—

असंख्यकोटिलोकानामुपादानं परात्परम् ।
तथैव सर्ववेदानां कारणं नाम उच्यते ॥१०६॥
रामनामांशतो जातास्सुमंत्राश्चाप्यनन्तकाः ।
अबुधानैव जानन्ति नाममाहात्म्यमुज्ज्वलम् ॥१०७॥
एकतः सकला मन्त्रा एकतो ज्ञानकोटयः ।
एकतो रामनामस्यात्तदपि स्यान्न वै समम् ॥१०८॥

अर्थ--श्री रामनाम असंख्यकोटि लोकों के कारण हैं और तैसे ही सर्व वेदों का कारण है । रामनाम ही के अंश से मोहन, मारण उच्चाटन बशीकरणादि सब मंत्र भये हैं इस बात को मूर्ख लोग नहीं जानते हैं कि रामनाम का बड़ा माहात्म्य है ॥ एक तरफ सब मंत्र एक तरफ कोटि २ ज्ञान और एक तरफ श्री रामनाम हो तो भी बराबर नहीं हो सकता है ऐसा रामनाम सर्वोपरि है यह बचन "भुशुण्डिरामायण" का है ॥ पुनः (केदारखण्डे)

अन्यानि यानि नामानि तानि सर्वाणि पार्वति ।
कार्य्यार्थेसंभवानीह रामनामादितः प्रिये ॥१०९॥
मार्कण्डेयोऽपि श्रीरामनाम संस्मृत्य सादरम् ।
मृत्युं तीर्त्वाऽविलंबेन रामनाम परं बलम् ॥११०॥
तथैव नारदो योगीभक्तो भूयास्तथापरे ।

मृत्योर्महाऽर्णवं तीर्त्वा संनिमग्नः सुधां बुधौ ॥१११॥
लम्बोदरोपि श्रीरामनाममाहात्म्यमुज्ज्वलम् ।
श्रुत्वा च धारितं चित्ते ततः पूज्यः सुरासुरैः ॥११२॥
एवं नामप्रसादेन ऋषयो देवतास्तथा।
मनुष्याः किन्नरा नागा यक्षविद्याधरास्तथा ॥११३॥
सर्वे कृतार्था अभवन् तस्मिंस्तस्मिन् युगेयुगे ॥

अर्थ—शिवजी बोले कि हे प्रिये पार्बति, अन्य जितने भगवत् के नाम हैं सो सब कार्य्यार्थ याने लोगों के कार्य्यार्थ प्रकट भये हैं और श्री रामनाम अनादि है सब नामों के आदि कारण है। श्री मार्कण्डेयजी ने भी श्री रामनाम को आदर पूर्वक स्मरण कर के रामनाम के श्रेष्ठ बल से बिना अवलम्ब ही मृत्यु को पार होके रामधाम को चले गये। तैसे ही सब भक्तों के राजा श्री नारद जी योगिराज और भी दूसरे बहुत से मृत्युरूप महासमुद्र को तरिके सुखरूप समुद्र में मगन भये ऐसा रामनाम है। पुनः गणेश जी ने भी श्री रामनाम के उज्ज्वल माहात्म्य को नारद जी के द्वारा सुन के चित्त में धारण किया और इसी से सुरासुर करके प्रथम पूजित भये। ऐसे श्रीराम नाम की कृपा करके संपूर्ण ऋषि, मुनि, देवता, मनुष्य, किन्नर, यक्ष, गंधर्व सर्प, विद्याधर, सब युग युगमें कृतार्थ भये हैं इसी से श्रीरामनाम सब का सार कहा है।

रामनामप्रभावेण स्वयम्भूः सृजते जगत्।
विभर्ति सकलं विष्णुः शिवः संहरते पुनः ॥११४॥
वाङ्मनो गोचरातीतः सत्यलोकेश ईश्वरः।
तस्य नामादिकं सर्वं रामनाम्नाप्रकाशते ॥११५॥
यस्य प्रसादाद्देवेशि ममसामर्थ्यमीदृशम्।
संहरामि क्षमादेव त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥११६॥

धाता सृजति भूतानि विष्णुर्धारयते जगत् ।
तथा इन्द्रादयः सर्वे रामनाम्नाभिवर्द्धिताः ॥११७।

अर्थ—(महाशंभु संहिता में) कहा है कि रामनाम ही के प्रभाव कर के ब्रह्मा सृष्टि करते हैं विष्णु भगवान् पालन करते हैं शिवजी संहार करते हैं॥ तहैंपर शिवजी ने कहा है कि मन वचन इन्द्रियसे परे जो हैं साकेतलोकाधिपति ईश्वर तिनके नाम रूपादिक सब श्रीरामनाम करके प्रकाशित हैं। हे प्रिये, जिन रामनामकी कृपाकरके मेरी ऐसी सामर्थ्य भई है कि तीनों लोकसहित चराचरको मैं क्षणमात्रमें संहार करताहूँ। पुनः—जिन रामनामकी कृपा से ब्रह्मा जी प्राणी सृजते हैं विष्णुजी धारण करते हैं तथा इन्द्रादिक सब देवता सिद्धित्व को प्राप्त भये हैं। हे शिष्य, श्रीरामनाम का बड़ा भारी प्रताप है इसके समान कुछ नहीं है यह सिद्धान्त निश्चय करके जानना और सब वृथा है हमारे वचन को सत्य मानोपुनः। पद्मपुराणे—

विष्णुनारायणादीनि नामानि चामितान्यपि ।
तानि सर्वाणि देवर्षे जातानि रामनामतः ॥ ११८ ॥
सर्वेषां हरिनाम्नां वै वैभवं रामनामतः ।
ज्ञातं मया विशेषेण तस्माच्छ्रीनामसंजप ॥ ११६ ॥

अर्थ—ब्रह्माजीने कहा है कि विष्णु नारायणादिक जितने नाम हैं सो सब नाम हे देवर्षि नारद, श्रीरामनाम से भये हैं। और सब हरि के नामों में श्रीराम नाम का वैभव विशेष है यह मैंने अच्छे प्रकार से जाना है। तिससे हे नारद ! श्रीरामनामका जप कर । पुनः विष्णुपुराण में ब्रह्माजी ने मरीचि से कहा है।

अहं च शंकरो विष्णुस्तथा सर्वे दिवौकसः ।
रामनामप्रभावेण संप्राप्ताः सिद्धिमुत्तमाम् ॥ १२०॥
निर्वर्णं रामनामेदं वर्णानां कारणं परम् ।

अर्थ ब्रह्माजी बोले कि मैं और शिवजी तथा विष्णुभगवान् और सम्पूर्ण

देवता लोग श्रीरामनाम के ही प्रभाव करके उत्तमसिद्धि को प्राप्त भये हैं, रामनाम निर्वर्ण है और सब अक्षरोंका कारण है सबसे परे है। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण हैं कहांतक लिखें रामनामका महात्म्य शिव शेष शारदादिक नहीं कहसकते हैं तो हम कहाँतक कहें।

सावित्री ब्रह्मणा सार्द्धं लक्ष्मीनारायणेन च ॥
शंभुना राम रामेति पार्वती जपतिस्फुटम् ॥ १२१ ॥
रामनामप्रभावेण स्वयंभूः सृजते जगत् ॥
तथैव सर्वदेवाश्च सैवैऽश्वर्यसमन्विताः ॥ १२२ ॥
गवामयुतकोटिनां कन्यानामयुतायुतैः ॥
तीर्थकोटिसहस्राणां फलं श्रीनामकीर्तनम् ॥ १२३ ॥
रामनामसमं चान्यंसाधनं प्रवदन्ति ये।
ते चाण्डालसमाः सर्वे सदा रौरववासिनः ॥ १२४ ॥

अर्थ—सावित्री के सहित ब्रह्माजी, लक्ष्मी के सहित नारायणजी शिवजी पार्वति के सहित श्रीरामराम ऐसा स्पष्ट जपते हैं। रामनाम के प्रभाव करके ब्रह्माजी सृष्टि करते हैं तथा सर्व देवता लोग भी रामनाम ही के प्रभाव से संपूर्ण ऐश्वर्य्ययुक्त भये हैं। कोटिन गोदान के समान, असंख्यकोटि कन्यादान के समान, कोटिन तीर्थों के समान फल श्रीरामनाम के कीर्त्तन करने से होता है। जो कोई श्रीरामनाम के समान दूसरा साधन कहता है सो चाण्डाल के समान है सदा रौरवनरक में निवास करेगा इसमें संदेह नहीं है। यह वचन पुलस्त्य संहिता का है। हे शिष्य, देखो ईश्वर नारायणादिक श्रीरामनाम को जपते हैं तो दूसरे की का कथा है इससे श्रीराम नाम सर्वोपरि है और सबके अधार है और भी सुन।

नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि।
सम्यग् भगवतस्तेषु रामनामप्रकाशकम् ॥ १२५ ॥

नारायणादीनिनामानि साकारैश्वर्य्यमुत्तमम् ।
नित्यं ब्रह्म निराकामैश्वर्य्यं वैविभातिच ॥ १२६ ॥
उभयैश्वर्य्यमान् नित्यो रामो दशरथात्मजः ।
साकेते नित्यमाधुर्य्ये धाम्नि संराजते सदा ॥ १२७ ॥
यत्र यत्र समुद्धारो दृश्यते श्रूयतेऽथवा ।
तत्सर्वं रामनाम्नैव सत्यं सत्यं बचो मम ॥ १२८ ॥

अर्थ—शिवसंहिता में शिवजीने कहा है कि जितने विष्णु नारायणादि के नाम शास्त्रमें कहे हैं सबके श्रीरामनाम प्रकाशक हैं ॥ श्रीनारायणादिक जितने नाम हैं सो सब साकार ऐश्वर्य्य करके युक्त हैं और नित्य निराकार ब्रह्म निर्गुण ऐश्वर्य्य करके युक्त हैं और दाशरथी रामका जो नाम है सो सगुण निर्गुण दनौं ऐश्वर्य्ययुक्त हैं और दूनों ऐश्वर्य्य के देनेवाले हैं जो श्रीरामजी साकेतपुरी में नित्य माधुर्य्य स्वरूप हो विराजते हैं ॥ जहां जहां जिस किसीका उद्धार सुना है अथवा देखा है वह सब राम नामही के प्रताप से भया है यह बचन हमारा सत्य २ है । हे शिष्य, यह सिद्धांत वचन कैसाहै इसको अच्छे प्रकारसे विचार करके देखो ॥

विष्णोर्नामानि विप्रेन्द्र सर्ववेदाधिकानि वै । तेषां मध्ये तु तत्त्वज्ञैः रामनाम परंस्मृतम् ॥ १२९ ॥ नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि । आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनामप्रकाशकम् ॥ १३० ॥

अर्थ— क्रिया योगसार में शिवजी ने कहा है कि हे विप्रेन्द्र, विष्णु भगवान् के सब नाम वेदमें अधिक कहा है तिनके मध्य में तत्त्व का प्रबोधकारक सर्वोपर श्रीरामनाम है ऐसा तत्वज्ञ लोगों ने कहा है। पुनः महारामायणमें ऐसे ही शिवजी ने कहा है कि नारायणादिक नाम शास्त्र में बहुत कहे हैं परन्तु तिन सब नामों के मध्य में श्रीरामनाम प्रकाशक आत्मा है । हे शिष्य, देखो श्रीरामनाम सब नामका आत्मा है यह वचन क्या विलक्षण है इससे

श्रीरामनाम के समान दूसरा कोई नाम नहीं है और न कोई दूसरा सिद्धांत ही है इससे सब छोड़के श्रीरामनाम जपो। पुनः विचित्रनाटके—

प्रभावतो यस्यहि कुम्भजन्मा प्रशोषितः सिंधुमपारपारणम्।
तथैव बिन्ध्याचलरोधितोद्भुतं मुनीन्द्रराजेन प्रभाकरेण॥१३१॥
यद्दिक्षणाच्छम्भुसुतोगणाधिपः सुरासुरैः प्राथमिकः प्रपूज्यः।
प्रदक्षिणा यस्य कृते समस्ता क्षमावतीस्यात्परितःप्रदक्षिणा १३२
सहस्रास्येन शेषोपि रामनाम स्मरेत्यलम्।
तत्प्रभावेण ब्रह्माण्डं धृत्वा क्लेशं विना द्विज॥१३३॥

अर्थ—कुंभजन्मा अगस्त्यजीने जिस रामनाम के प्रभाव से अपार से भी अपार अर्थात् चार लाख कोश वाले समुद्र को शोषगये और तैसेही चारलाख कोश ऊँचा विन्ध्याचल पर्वत को रोकलिया ऐसा रामनामका प्रभाव भारी है। पुनः उसी रामनामको नारदजी के द्वारा सुनके सम्पूर्ण क्षमावती पृथिवी की महादेवजी के पुत्र गणेशजीने लिख करके प्रदक्षिणा की भाव नाम को लिखके प्रदक्षिणा करने से संपूर्ण पृथिवी की प्रक्षिणा होगई ऐसा रामनाम है। यह कथा गणेश पुराण में है, पुनः—हे द्विज, जिस श्रीरामनाम को सहस्रमुख से शेषजी भी जपते हैं और वही रामनाम के प्रभाव करिके ब्रह्मांड को कलेश विना धारण करते हैं हे शिष्य, रामनाम के प्रभाव बड़ा भारी है कौन कहने वाला है केवल तुम्हारे जानने के वास्ते थोड़ा कहा है श्रीरामनाम ही तत्व है।

नान्यो मंत्रः परो राम मंत्रादष्टाक्षरादिकः।
सूर्य्यशक्तिशिवादीनां मंत्राहीनतरास्फुटम्॥
नारायणः स्वयंभूश्च शिवश्चेन्द्रादयस्तथा।
सनकाद्या मुनीन्द्राश्च नारदाद्या महर्षयः॥
सिद्धाः शेषादयश्चैव लोमशाद्या मुनीश्वराः।
लक्ष्म्यादिशक्तयः सर्वा नित्यमुक्ताश्च सर्वदा॥

मुमुक्षवश्च मुक्ताश्च सूरयश्च शुकादयः ॥
तत्प्रभावं परं ज्ञात्वा मन्त्रराजमुपासते ॥

अर्थ—वशिष्ठ संहिता में बशिष्ठजी ने कहा है कि श्रीराममंत्र षडक्षर से दूसरा अष्टाक्षरादिक नारायणमंत्र कोई भी श्रेष्ठ नहीं है और सूर्य्यमंत्र, देवि दुर्गादि के मंत्र, गणेशमंत्र, शिवपंचाक्षरी मंत्रादि की क्या कथा है राम बिना सर्वमंत्र शक्तिहीन हैं, यह निश्चय जानना । श्रीमन्नारायण, ब्रह्मा शिवजी इन्द्रादि देवता और सनकादिक चारों भाई मुनियों में श्रेष्ठ और नारदादिक जो अट्ठासी सहस्र महर्षि लोग हैं और संपूर्ण सिद्ध लोग और शेषादिक जितने सर्पगण लोमशादिक जितने मुनीश्वर हैं और लक्ष्मी आदिक लेके जितनी शक्तियां हैं और नित्यमुक्त जितने हैं सो सब सर्वदा और जितने मुमुक्षु लोग हैं मोक्ष की कांक्षा करने वाले सो सब और जितने मुक्त लोग हैं वामदेवादिक और ज्ञानी लोग जो हैं शुकदेवादिक लेके सो सब कोई उस महामंत्रराज षडक्षर के परमप्रभाव को जानिके राममंत्र की उपासना करते हैं अर्थात् पूर्वोक्त सब कोई राममंत्र को जपते है । हे शिष्य, ऐसा रामनाम का प्रभाव है । (प्रश्न—) हे स्वामी जी, रामनाम से और राममंत्र षडक्षर से कुछ भेद भी है कि एक ही । (उत्तर) हेशिष्य, कुछ भी भेद नहीं है दूनों एक ही है ऐसा मत्स्यपुराण में लिखा है । यथा—

सर्वेषां राममंत्राणां श्रेष्ठं श्रीतारकं परम् ।
षडक्षरमनुं साक्षात्तथायुग्माक्षरं वरम् ॥

अर्थ—श्रीरामजी के सब मंत्रों में श्रेष्ठ श्रीरामतारक मंत्र साक्षात्कार है तथाहि श्रीरामनाम दोऊ वर्ण श्रेष्ठ हैं, देखो राममंत्र ऐसा श्रेष्ठ है जिसको नारायणादिक जपते हैं तो दूसरे की क्या कथा है इससे जो कोइ सब मंत्रको छोड़के राममंत्र को नहीं जपते हैं और राममंत्रको नहीं लेते हैं तिनको धिक् है इसीसे शिवजी इस मंत्र राजको काशीमें जपते हैं सो आगे कहेंगे । (प्रश्न) हेस्वामीजी; ॐकार भी रामनाम ही से भया है कि स्वतः है सो कहिये । (उत्तर) हे शिष्य, ॐकार भी रामनामही से भया है ऐसा पुलस्त्य-संहिता में प्रमाण है । यथा—

रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः॥
यथा च प्रणवो ज्ञेयो बीजं तद्वर्णसम्भवम्॥
सशब्देन हकारेण सोहमुक्तं तथैव च।
इत्यादयो महामन्त्रा वर्तन्ते सप्तकोटयः।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनाम्ना प्रकाशते॥

अर्थ--श्रीरामनाम ही से प्रणव जो ॐकार है सो उत्पन्न भया है जो प्रणव मोक्षका देने वाला है और यह (तत्त्वमसि) जो महावाक्य है सामवेद का जोकि सम्पूर्ण वेदतत्त्वाधिकारी के लिये मुख्योपदेश है सो भी रामनाम ही से प्रकट भया है। हे शिष्य, रामनाम में तीन अक्षर हैं। रकार १, अकार २, मकार ३, और प्रणव में भी (अ, उ, म,) यह तीन अक्षर हैं और तत्त्वमसि में भी (तत् त्वं असि) यह तीन अक्षर हैं सो क्रमशः रामनाम ही से भये हैं और जैसे प्रणवको जानना वह भी बीज अर्थात (रां) से प्रकट भया है उसी बीज से सोहं शब्द भया है अर्थात् रामनाम ही शब्द से सोहं याने रकार से सकार और विन्दु से हकार भया है। ॐ सोहं इत्यादि लेके महामन्त्र सात-कोटि भया है यह सब नाम ही से भये हैं। सबका आत्मा श्रीरामनाम ही है। हे शिष्य, श्रीरामनाम से कुछ भी परे नहीं है सबका सिद्धांततत्त्व एक राम नाम ही है और सब वृथा है यह सत्य करके जानना॥

अंशांशैः रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि।
बीजमोंकारसोहं च सूत्रमुक्तमिति श्रुतिः॥

अर्थ--श्रीरामनाम हीके अंशांश से तीनों सिद्ध होते हैं। बीज (रां) और ॐकार-सोई यह शिवसूत्र व्याकरण से जानना, और बेदका सिद्धांत तो हुई है। श्रीरामनाम ही से वेदपुराण शास्त्रसंहिता तंत्र रहस्य नाटक स्मृति सब भये हैं और रामनाम से परे कुछ नहीं है।

रामनाम्नः परं किंचित्तत्त्वं वेदेस्मृतिष्वपि।

संहितासु पुराणेषु नैव तंत्रेषु विद्यते ॥
कारणं प्रणवस्यापि रामनाम जगद्गुरुम्।
तस्माद्धेयं सदा चित्ते यतिभिः शुद्धमानसैः।
रामनाम परंतत्त्वं सर्ववेदेषु प्रस्फुटम् ॥
यस्य नामप्रभावेण सर्वज्ञोहं वरानने ॥

अर्थ--श्रीसुश्रुतिसंहिता में शिवजी ने कहा है कि श्रीरामनाम से परे वेद शास्त्र पुराण संहिता तंत्र रहस्य नाटक में तत्व कुछ नहीं है। ॐकार का भी कारणजगद्गुरु श्रीरामनाम ही है जिसको शुद्धचित्त होकर संन्यासी लोग ध्यान करते हैं ऐसा नाम है ॥ ऐसा श्रीरामनाम परत्व सब वेदों में उत्कृष्ट है हे प्रिये पार्वति, जिस रामनाम के प्रभाव करके हम सर्वज्ञ हैं ऐसा रामनाम सर्वोपरि श्रेष्ठ है ॥ और भी शिवसंहिता पंचमपटल में शिव जीने कहा है—

आसीनन्तमयोध्यायां सहस्रस्तम्भमण्डिते।
मण्डपे रत्नसंज्ञे च जानक्या सह राघवम् ॥
मत्स्यकूर्म्मकिर्य्यनेको नारसिंहोप्यनेकधा।
बैकुण्ठोपि हयग्रीवो हरिः केशववामनौ ॥
यज्ञो नारायणो धर्मपुत्रो नरवरोपि च।
देवकीनन्दनः कृष्णो वासुदेवो बलोपि च।
पृश्निगर्भो मधून्माथी गोविन्दो माधवोपि च।
वासुदेवो परोनन्तः संकर्षण इरापतिः ॥
प्रद्युम्नोप्यनिरुद्धश्च व्यूहास्सर्वेऽपि सर्वदा।
रामसदोपतिष्ठन्ते रामादेशाव्यवस्थिताः ॥
एतैरन्यैश्च संसेव्यो रामोनाम महेश्वरः ॥

अर्थ—श्रीअयोध्याजीमें सहस्त्रोंमणि खंभ करके भूषित स्वर्ण के मण्डपमें श्रीजानकीजी के सहित श्रीराघवजी आसीनहैं तहांपै मत्स्य कूर्म, वाराह, नृसिंह, अनेकरूप वैकुण्ठ भगवान् भी, हयग्रीव भगवान्, हरिभगवान्, नारायणभगवान्, वामनजी, यज्ञभगवान्, धर्म के पुत्र अर्थात् नरनारायणावतारजो हैं, देवकीपुत्र कृष्णजी, वासुदेव भगवान् बलरामजी भी निश्चयकरके पृश्निकेगर्भ में निवास करनेवाले जोभगवान् मधुनामा दैत्य के बलको मन्थन करनेवाले मधुसूदनभगवान् और गोविन्दभगवान् माधवभगवान् संकर्षण भगवान्। लक्ष्मी पति भगवान् प्रद्युम्नजी अनुरुद्धजी भी और चतुर्व्यूहादिक जो हैं सो सब सर्वदा श्रीरामजी के समीप आज्ञा में उपस्थित हैं। इतना जो कहिआये हैं और भी दूसरे सब श्रीरामनाम महाईश्वरकी सेवा उपासना करते हैं। हे शिष्य, देखो यह सिद्धांत कैसा है इसीसे श्रीरामनाम सर्वोपरि है नामके समान दूसरा कुछ नहीं है इसी प्रकार से शुकदेव संहिता में, व्याससंहितामें, पाराशरसंहितामें, शिवसंहितामें, सदाशिवसंहितामें, महाशंभु संहितामें, सनत्कुमार संहिता में, अमरसंहिता में. पद्म संहिता में, ब्रह्म संहिता में, पातंजलिसंहिता में, वैखानससंहिता में, हनुमत्संहिता में, अगस्त्यसंहिता में विश्वामित्रसंहिता में, कपिलगीता में, ब्रह्मयामल में, रुद्रयामल में तथा और भी सर्वत्र कहा है मैं कहांतक कहूँ। हे शिष्य, रामनाम के समान कुछ नहीं है इसीसे श्रुति में कहा है कि (ज्ञानमार्गं च नामतः) अर्थात् ज्ञानमार्ग का उपदेशक रामनाम है पुनः वृहदारण्यक उपनिषद् में लिखा है।

नतस्य प्रतिमाऽस्ति यस्यनाम महद्यशः।

अर्थात् जिस ब्रह्म के नाम का महान् यश है उस के समान दूसरा कोई भी नहीं है। हे शिष्य इसी श्रुति की स्पष्ट रूप से व्याख्या सात्विक पद्मपुराण में किया है यथा—

रुद्रो दिशतियन्मंत्रं यस्यनाम महद्यशः।
तस्य नास्त्युपमा क्वापि तं रामं राघवंभजे॥

अर्थात् श्री शिवजी काशीपुरी में जिस षडक्षर महामंत्र को मरण काल में सबको उपदेश करते हैं। वेद भगवान् कहते हैं कि "यस्यनाम महद्यशः" अर्थात् जिसके नामका महान् यश है। " नतस्य पतिमाऽस्ति " अर्थात् उस ब्रह्म की

प्रतिमा (उपमा) कहीं भी नहीं है उस श्रीरामराघव को मैं भजता हूँ। इत्यादि कहा है। इससे वेद में भी श्रीरामनामही का माहात्म्य लिखा है। पुनः (अथर्वणे)

जपात्तेनैव देवता दर्शनं करोति।
कलौ नान्येषां भवतीति श्रुतिः ॥ १ ॥
रामनामजपादेव मुक्तिर्भवतीति श्रुतिः ॥ २ ॥
सर्वाणि नामानि यमाविशंतीति श्रुतिः ॥ ३ ॥
यश्चाण्डालोपि रामेति वाचं वदेत् तेन सहसं वदेत्-
तेन सहसं वसेत् तेन सहसं भुञ्जीयात्।

अर्थ--श्रीरामनाम ही के जपने से देवता रामजी का दर्शन करते हैं कलियुग में रामनाम विना अन्य गति नहीं है। पुनः—दूसरी श्रीरामनाम ही से गति होती है। सब जितने भगवत् के नाम हैं सो सब रामनाम में अंत समय प्रवेश करते हैं। अथर्वण श्रुति है कि जाति का चाण्डाल भी श्रीराम राम ऐसा कहै तो तिनके साथ बसे तिनके साथ मैं बोले तिनके साथ में भोजन करना हे शिष्य, देखो रामनाम के जपनेवाला नीच भी हो तो भी साथ में खाना पीना चाहिये यह वेदका सिद्धांत है इससे रामनाम सर्वोपरि है श्रीराम-नामके समान योग, यज्ञ, जप, तीर्थ, व्रत, कर्म, धर्म, पाठ, पूजा, संध्योपासनादिक कुछ नहीं है श्रीरामनाम ही को सब कोई ने सिद्धांत किया है और जो जो महात्मा लोग भये हैं तिन सब के मत से भी रामनाम ही सार देखा जाता है सो तुम सुनकर धारण करो। हे शिष्य, शास्त्र के प्रमाण से तो श्रीसीता रामनाम का सिद्धांत कहा अब कलियुग में जो जो महात्मा लोग भये हैं तिन सब के भी सिद्धांत से रामनाम सर्वोपरि कहते हैं सुनो। श्रीकबीर जी का वचन—राम को नाम चौ मुक्ति का मूल है निगम निच्चोर रस तत्व छानी। राम को नाम षट् शास्त्र में मथ लिया राम को नाम षट् दर्श में है कहानी॥ राम को नाम लै ध्यान ब्रह्मा किया ररंकारै धुनि सुनि मानी। कहैं कब्बीर अब गाह लीला बड़ी राम को नाम निर्वाण बानी॥ राम को नाम लै विष्णु पूजा करैं राम को नामशिव

योग ध्यानी। राम को नाम ले सिद्ध साधक जियो जियो सनकादिक नारद हूँ ज्ञानी। राम को नाम लै राम दिक्षा लियो गुरु वशिष्ठ मिलि मंत्र दानी। राम ओ नाम लै कृष्णगीता कथो पथी पारथ नहिं मर्म जानी। इत्यादि बहुत कहा है। इससे हे शिष्य, कवोरजी का भी रामनामहीं सिद्धान्त है पाखण्डियों को नहीं जान पड़ता है। श्री गुरु नानकजी का वचन—हरि नाम सुखमनि ग्रंथ का राम नाम जो करैं बिचार। ते धनवंत गुनी संसार॥ नामसंग जिनका मनमान। नानक तिन्हैं निरंजन जान॥ अलख अभेद पुरुष परताप। आप जपाये तो नानक जाप॥ नाम के धारे सकले जेता। नाम के धारे खंड ब्रह्मांड॥ नाम के धारे सुस्मृति वेद पुरान। नाम के धारे शून्य ज्ञान ध्यान॥ नाम के धारे आकाश पाताल। नामके धारे सकल अकार। नाम के धारे पूरिय सब भुवन नाम के संग उधरे सुनि श्रवन। करि कृपा जिस अपने नाम लाए नानक चौथे पद महि सो गति पाये इत्यादि बहुत कहा है। इससे नानकजी का भी एक रामनामही सिद्धान्त है। सूरदास जी का वचन—बड़ी है रामनाम की ओट शरणगये प्रभू काढि हेत नहिं करत कृपाके कोट बैठत सभा सब हरिजूकी कौन बड़ो को छोट सूरदास पारसके परसे मिटतलोह के खोट इत्यादि कहा है। दादूजी का बचन—दरिया यह संसार है रामनाम निज नाव दादू ढील न कीजिये यह औसर यह दाव॥ इत्यादि बहुत कहा है उनका भी नाम ही सिद्धांत है। संतदास। ध्यावत हैं वा राम को ब्रह्मा विष्णु महेश। नर क्यौं चूके संतदास गुजरत है यह बेस॥ राम नाम परतत्व है परमतत्व कोइ नाहिं। शिव सनकादिक शेष लगि सबै संत इहिमाहिं॥ दूलम दासका। रामराम दुइ आखर रटै निरंतर कोय। दूलम दीपक बरि उठै प्रीति परतीति जो होय। पलटू दास का वचन। रामनाम धोखेउ निकसे तामुखदेउं कपूर। पलटूताके नफरके हौ पनही की धूर। इत्यादि बहुत कहे हैं। इससे रामनाम सर्वोपर है। और सब का सिद्धांत है। अयोध्यावासी महात्मन का बचन, श्रीरामचरण दासजी का वचन—रामनाम ते होत सब सो काहू ते नाहिं। पक्षपात हठ छोड़ि के समुझि लेव मनमाहिं॥ राम नाम चर अचर में रम्यो गगन पथनीर। जो यहि विधि लखिगहि रहै राम उपासक धीर॥ जप तप दान अचार व्रत योग ज्ञान विज्ञान। रामचरण साधन सकल नाम अधीन प्रमान। इत्यादिक नाम शतक में बहुत कहे हैं। श्रीस्वामी परमहंस शील मणिजी का वचन—रसना रामनाम रस-

माती आठ पहर जक जाके हैं। शीघ्र शरित सावन की जैसी तैसी लगन लगाके हैं॥ साधन और नज़र नहिं लावें तुच्छ सबै ममता के हैं। नाम से फरहिं शीलमणि दृग अवध शहर के वाके हैं। इत्यादि बहुत कहे हैं। इससे नामही सार है। श्रीस्वामी रघुनाथदास जी का बचन—सत को मथि काढ़ि लीन्हीं है गरल पान कीन्हीं है कहो सो नाम ऐसे कौन नामी को। नाम बल शोष्यो सिन्धु अबौ काशिहूँ में मरत करत जीवन जहां लौ जौन मुक्ति अनुगामी को॥ औरौ शिवसती तन त्याग के समै सो मानो प्रकट दिखायो भाव सेव्य स्वामी को। साईं उर आनि रघुनाथ जन जानि कै निरंतर निष्काम करत रामहिं नमामि को॥ मरामरा कहत मुनीश पारब्रह्म भयो रामनाम कहत को मानै कौन पद्द है। यमन हराम के कहत राम धाम पायो प्रकट प्रभाव भल पोथिन में गद्द है॥ काशिहू मरत उपदेशत महेश जाहि जानिन परत ताहि मनमोह मद्द है॥ ऐसेहू समुझि सीताराम नाम जाने भजे जन रघुनाथ कहै तासों फिर हद्द है। इत्यादि बहुत कहे हैं इससे नामही सबका सार है। श्री स्वामी युगलानन्य शरण जी का बचन-रटे नहिं नाम ताके मुख मांझ थूकिये। न शंक रंक रावको समान मानि तानि बैन बना लक्ष चालतन थूकिये॥ मान अपमान दिशि देखियन भूलि कहूँ प्रबल प्रताप उपदेशहीन मूकिये। नाम महाराज साज राज सुख दैन गुन देव नर नाग कौन बिस्त बीच कूकिये॥ श्रीयुगल अनन्य जौन संतसत गुरु कहैं रटे नहिं नाम ताके मुख मांझ थूकिये। रटे नहिं नामसो विशेष बीट कीट है जीवत मृतक ताते जानी न परत पीर अन्त सदन जाय अंत शिर पीटि है॥ कहे हम पंडित प्रवीन सभा जीते बहु रटे बिना नाम पढ़े पाथर अरु ईंट हैं। दान अभिमान सो तो अति ही नदानपन मृग के समान नृपहानी गिरगीट है। श्रीयुगल अनन्य सब फोकट धरम लखु रटे नहिं नाम सो विशेष बीट कीट है॥ रटे नहिं नाम ताके मुखही में नर्क है। सुनिये न बात घात कठिन विचारि चित्त महाम्लेच्छ मूढ निशिचर से न फर्क है॥ नाना मत बाद व्योम सुमनसुगन्ध मांझ मोहि रहैं मूढ़ कैसे नाम अर्क है। सीताराम लोक अभिराम पास शठ जात सकुचात रैन ऐन गेह गर्क है॥ श्रीयुगल अनन्य बात विदित पुराण विच रटे नहिं नाम ताके मुख ही में नर्क है॥३॥ इत्यादि बहुत कहे हैं। हे शिष्य, सबका सिद्धांत एक राम नाम ही है दूसरा सब वृथा है यह सत्य

सत्य करके जानना, पुनः श्रीगोस्वामी जी का सिद्धांत वचन विनयपत्रिका भरोसो जाहि दुसरो सो करो। मोको तो रामको नाम काम तरु कलि कल्यान फरो॥ कर्म उपासन ज्ञान वेदमत सों सब भांति खरो। मोहि तो सावन के अंधेहि ज्यों सूझत रंगहरो॥ चाटत तो पातरी श्वान ज्यों कतहुँन उदर भरो। सोहौं सुधरत नाम सुधारस पेखत परसि धरो॥ स्वारथहू परमारथहू को नहिं कुंजरो नरो। सुनियत सेतु पयोधि पषानन करि कपि कटक तरो॥ प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ ताको काज सरो। मेरे माय बाप दोउ आखर हौं शिशु अरनि अरो॥ शंकर साखि जो राखि कहौं कछु तो जरि जीभगरो। अपनो भलो रामनाम हिते तुलसिहि समुझि परो॥ इत्यादि शिवजी की सौगंध करके कहा है इससे रामनाम ही सर्वोपरि है यही सिद्धांत गोस्वामी जी का भी है। हे शिष्य, रामनाम के समान कुछ नहीं है तुम सब छोड़ के रामनाम ही जपो श्रौर सब वृथा है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, गोस्वामी श्री तुलसीदासजी के रामायण में क्या सार है सो कृपा करके कहिये। क्योंकि, आप सार सिद्धांत को अच्छे प्रकार से जानते हैं ताते कहने योग्य हैं। (उत्तर) हे शिष्य, श्रीरामायण में भी श्रीरामनाम ही सार है श्रीगोस्वामीजी ने रामायण में स्वयं कहा है। यथा प्रमाण बालकांड।

दोहा-भनिति मोरि सब गुन रहित, बिस्व बिदित गुनएक।
सो बिचारि सुनहहिं सुमति, जिन्हके बिमल बिबेक॥

अर्थ—श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि भणित जो मेरा काव्य है रामायण सो सबगुण करके रहित है, भाव जितने काव्यके गुण पिङ्गल में लिखे हैं तिनसब गुण करके रहित है परन्तु विश्व जो संसार है तिसमें एकगुण विदित नाम विख्यात है अर्थात् ऐसाको है जो उस गुणको नहीं जानता है। यथा— "रामनाम भुविख्यात मभिरामेण वा पुनः" इत्यथर्वणे श्रुतिः। (प्रश्न-) हे स्वामीजी, इहांपै भुविख्यात कहने का भाव क्या है सो कहिये (उत्तर-) हे शिष्य, विश्वविदित कहने का भाव है कि श्रीरामजी के रूप, लीला, और जो हैं सो सबको विदित नहीं है काहे से कि सब देशमें नहीं है और सबको मालूम भी नहीं है केवल ज्ञाता लोग जानते हैं श्रौर श्रीरामनाम जो है सो ऊँच नीच राजा रंक सब को विदित है सो आगे कहेंगे इससे विश्वविदित कहा। (प्रश्न--) हे स्वामीजी इहां पै कोई २ ऐसा अर्थ करते हैं कि

श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि भणित जो मेरा काव्य है सो सब विषय गुण से रहित है और संसार में विदित होगा यह एक गुण है ऐसा कहते हैं सो कैसा है । (उत्तर--) हे शिष्य, यह अर्थ करना सर्बथा प्रसंग से बिरुद्ध है काहे से कि इहां पै सर्वोपरि श्रीरामनाम की विशेषता दिखाते हैं सो आगे स्पष्ट करके कहते हैं इससे पूर्वोक्त ही अर्थ ठीक जानना । श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि, वह विश्वविदित गुण श्रीरामनाम को मेरे काव्य में विचार के सुनिहहिं को सुनिहहिं कि जिनके सुमति नाम सुष्ठु बुद्धि है और विमल नाम निर्मल विवेक नाम विचार है भाव दुर्बुद्धिवाले और पाप पदार्थ का विचार करनेवाला दुष्ट क्या सुनेगा काहे सेकि वह तो रामजो से विमुख है इससे सुमति और निर्मल विचारवाले को श्रोता कहा इससें यह दिखाया कि श्रीरामनाम का श्रोता वक्ता बुद्धिमान् और निर्मल विचारवाला होना चाहिये। हे शिष्य, विवेक हंस के समान होना चाहिये । यथा "संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार। अस बिवेक जब देइ बिधाता। तब तजि दोष गुनहिं मनुराता " इत्यादि कहा है । इससे विवेक का स्वरूप हंसके समान होना चहिये । तब दोष को छोड़के गुणमें मन लगता है इहां पै गुणहिं मनुराता कहा है इससे गुणका अर्थ रामनाम ही जानना । पुनः—भरत हंस रवि वंस तडागा । जनमि कीन्ह गुन दोष विभागा ।। गहि गुन पय तजि अवगुन वारी । निज जस जगत कीन्ह उजियारी ।। इत्यादि विवेक का स्वरूप कहा है और इहां भी गुणका अर्थ रामनाम ही है इससे विश्वविदित गुण रामनाम को कहा इससे रामनाम सर्वोपरि है सो आगे कहते हैं ।।

मूल-एहि महँु रघुपति नामउदारा । अति पावन पुरान श्रुतिसारा ।।

अर्थ—अब गोस्वामीजी वह पूर्वोक्त विश्वविदित गुणको अंगुल्या निर्देश करके दिखाते हैं कि एहि महँु नाम इस रामायण में भी रघुपति जो श्रीरामजी हैं तिनका राम ऐसा नाम उदार है। हे शिष्य; एहि महँु कहनेका भाव यह है कि बेद पुराण शास्त्र में तो श्रीरामनाम उदार अतिपावन पुराण श्रुति के सार हई है परंतु इस रामायण में भी रामनाम ही सार है दूसरा कुछ नहीं इससे एहि महँु कहा। (प्रश्न) हे स्वामीजी, एहि महुं रघुपति नाम उदार कहने का भाव क्या है (उत्तर।) हे शिष्य, इस रामायण में श्रीरामजो के नाम, रूप, लीला, धाम, शिव व्याह, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, योग, जप, तप, तीर्थ, व्रत, पूजन सब कहा है बन सब साधनों से रामनाम उदार नाम श्रेष्ठ है

इससे पेहि महुं कहा और उदार का स्वरूप। यथा--जहँ तहँ पियहिं विविध मृग नीरा। जनु उदार गृह जाचक भीरा। इत्यादि उदार का स्वरूप कहा है। भाव-जैसे उदार के पास चाहे जैसा गरीब जावे और जो जो पदार्थ मांगे सो सब पासकता है नहिं नहीं होसकता है तैसे ही श्रीरामनाम के शरण चाहै जैसा पापी जावै सबको अंगीकार कर सकते हैं किसी पापी के वास्ते नहीं नहीं है और जो मन इच्छित फल चाहै सो सब मिलता हे ऐसा रामनाम उदार है। उदारताका स्वरूप गोस्वामीजी ने विनयपत्रिका में खूब कहाहै। यथा—सुमिरु सनेह सो तू नाम राम रायको संवल निसंवलको सखा असहायको भागहै अभागही को गुनगुनहीन को गाहक गरीब को दयाल दानी दीनको॥ कुल अकुलीनको सुनो है वेदसाषी है पांगुरेके हाथ पांय आंधरेकि आंखि है॥ माय बाप भूखे को अधार निराधारको सेतु भवसागरको हेतु सुखसारको॥ पतितपावन रामनामसे न दुसरो सुमिरे सुभूमि भयो तुलसी सो ऊसरो॥ १॥ भलो भलि भांति हैं जो मेरे कहे लागि हैं मन रामनाम सुभाव अनुरागिहैं। रामनामको प्रभाव जानि जूडी आगि हैं। सहित सहाइ कलिकाल भीरु भागि हैं॥ रामनाम सो विराग जोग जागि हैं। बाम बिधि भालहू न कर्म दाग दागि हैं। रामनाम मोदक सुधा सनेह पागि हैं। पाइ परतोष तून द्वार द्वार वागिहैं॥ रामनाम काम तरु जोई जोई मांगि हैं। तुलसीदास स्वारथ परमारथौ न खागि ह। इत्यादि बहुत कहा है। इससे हे शिष्य, श्रीरामनाम के समान दूसरा उदार कोई भी नहीं है जिसके वास्ते कोई प्रायश्चित्त नहीं है और न कोई अंगीकारही करसकते हैं ऐसे पापी को भी श्रीरामनाम गति है इस से रामनाम के समान कुछ नहीं हैर औ रामनाम की यथार्थ उदारता बृहन्नारदीय पुराण में कहा है सो कहते हैं।

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च स्तेयी विश्वासघातकः।
दुहितासंगमी दुष्टो भ्रातृपत्नीरतस्तथा॥ १३४॥
विप्रदाररतो यस्तु विप्रवित्तापहारकः।
परापवादकारी च बालघाती च वृद्धहा॥ १३५॥
स्त्रीजनानांसंघाती हिंसकः सर्वदेहिनाम्।
मातृगामी गुरुद्रोही रामनाम्ना विशुद्ध्यति॥ १३६॥

महाचिन्तातुरो यस्तु महाधिव्याधिव्याकुलः।
ज्वरापस्मारकुष्ठादि महारोगैः प्रपीडितः॥ १३७॥
महोत्पातमहारिष्टमहाक्रूरग्रहार्दितः।
महाशोकाग्निसंतप्तस्सर्वलोकैस्तिरस्कृतः॥ १३८॥
महानिन्द्यो निरालंबो महादुर्भाग्य दुःखितः।
महादरिद्री सँतापी सुखीस्याद्रामकीर्तनात्॥ १३९॥
कामक्रोधातुरः पापी लोभमोहमहोद्धतः।
रागद्वेषादिभिर्दग्धो महादुर्वासनावृतः॥ ४०॥
षडूर्मिरुर्मिभिराक्रान्तः षड् दिकारैर्विखिद्यते।
मनोराजकषायाद्यैर्व्याकुलः समुपद्रवैः॥ १४१॥
अन्यैश्च विविधोत्पातैर्दारुणैरातिदुःखितः!
रामनामानुभावेन परानन्दमवाप्नुयात्॥ १४२॥

अर्थ—मित्रका द्रोही हो, कृतघ्नी हो, चोर हो, विश्वासघाती हो, पुत्रीगामी हो, दुष्ट हो, भाई की स्त्री से भोग किया हो, ब्राह्मण की स्त्री के साथ भोग किया हो, ब्राह्मण का धन लेने वाला हो, दूसरे की निन्दाकारक हो, बालक की हत्या की हो, वृद्धों को मारा हो, स्त्रियों को मारा हो, सब जीव की हिंसा की हो, माता के साथ भोग किया हो, गुरु का द्रोही हो वह पुरुष भी श्रीरामनाम से शुद्ध हो जाते हैं। महाचिंता करके युक्त हो, महा आधिव्याधि करके व्याकुल हो. ज्वर, मृगी करके युक्त हो, कुष्ठी हो, महामहा रोग करके पीड़ित हो, महाउत्पात करके पीड़ित हो, महाअरिष्ट युक्त हो, महाक्रूर हो, नवग्रह करके पीड़ित हो, महाशोकाग्नि करके संतप्त हो, सर्वलोक करके निरादर किये हो, महानिन्दनीय हो, निरालम्बीहो. जिनको कोई अवलम्ब न हो, महाभाग्यहीन हो, दुःखित हो महादरिद्री हो, संतापी हो, श्रीरामनामके जपने से सुखी हो जाते हैं। काम क्रोध करके व्याकुल हो, महापापी हो; लोभ मोह युक्त हो, राग द्वेषादि करके दग्ध हो, महा दुर्वासनायुक्त हो, क्षुधा. तृष्णा, शोक, मोह, जरा, मृत्यु, इति षड् ऊर्मि

करके ताड़ित हो, षड्विकार काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर करके क्लेशित हो, नाना मनोरथयुक्त हो, महामलीन हो, तथा सम्पूर्ण उपद्रव करके युक्त हो, सो भी श्रीरामनाम के प्रताप से सब दोषोंसे रहित होके परमानन्द को प्राप्त होते हैं। हे शिष्य, ऐसा श्रीरामनाम उदार है इसीसे विश्वविदित गुण कहा काहे से नाम के समान दूसरा कुछ नहीं है यह सब शास्त्र का सिद्धान्त है इहां पै सहस्रों प्रमाण हैं देने से ग्रन्थ विस्तार हो जायगा इससे थोरासा कहा है (प्रश्न-) हेस्वामी जी, उदारता का स्वरूप तो सुना और उदार कहने का भाव भी जाना अब आप रघुपति कहने का भाव कहिये। (उत्तर—) हे शिष्य, रघुपति कहने का भाव आगे नाम वंदना में कहूँगा। पुनः श्रीस्वामीजी कहते हैं कि वह रघुपति का नाम उदार कैसा है कि अति पावन है और वेदपुराण का सार नाम तत्त्व है अतिपावन कहने का भाव यह है कि और जितने योग, वैराग्य, तीर्थ, व्रतादिक हैं सो सब साधन पावन हैं तिनको भी श्रीरामनाम पवित्र करनेवाला है इससे अतिपावन कहा। यथा—(कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानामिति हनुमत्संहितायाम्) अर्थात् सम्पूर्ण कल्याण का स्थान कलिमलका मंथन करने वाला पावन को भी पावन करनेवाला रामनाम है, अथवा पावन जो ज्ञान है, यथा (नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते इति गीतायाम्) ज्ञानके सदृश पवित्र इस लोक में कुछ नहीं है तिस ज्ञान को भी पवित्र करनेवाला रामनाम है इससे अतिपावन कहा है और वेद पुराण का सार रामनाम ही है काहे से कि रामनाम के समान दूसरा कुछ नहीं है सो ऊपर ही कह आये हैं। अथवा दूसरा अर्थ यह है कि अतिपावन जो वेद पुराण है यानी उपासनाकाण्ड तेहि का सार श्रीरामनाम है (प्रश्न—) हे स्वामीजी उपासनाकाण्ड का पावनत्व क्या है सो कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, उपासनाकाण्ड को पावन गोस्वामी जी ने ऐसा कहा है। यथा—पावन पर्वत वेदपुराना। रामकथा रुचिरा कर नाना॥ पुनः—(वेद पुरान उदधि घन साधू॥ वर्षहि राम सुजस वर वारी। मधुर मनोहर मंगलकारी। इत्यादि कहा है। इससे उपासनाकाण्ड सर्वदा पावन है। भाव कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड पावन है और उपासनाकाण्ड अतिपावन है तेहि उपासनाकाण्ड का सार नाम है काहे से कि उपासनाकाण्ड में ही रामनाम का वर्णन है और कर्मकाण्ड में ज्ञानकाण्ड में तो भक्ति का और

रामनाम रूप लीला धाम का अभाव है इससे पावन है, अति पावन नहीं है और उपासनाकाण्ड अति पवित्र है तेहिका सार श्रीरामनाम है । हे शिष्य, पूर्व में जो कह आये हैं कि (ब्रह्मांभोधिसमुद्भवम्) इत्यादि सोई इहां पै भी वेद पुराण का सार नाम को कहा । भाव मुख्य यह है कि श्रीरामनाम सबका सार है नाम से परे तत्त्व कुछ नहीं है । यथा केदारखण्डे-शिवउवाच 'राम नामसमं तत्त्वं नास्ति वेदांतगोचरे' पुनः (रामनामसमं तत्त्वं न भूतो न भविष्यतीति निर्वाणखण्डे) शिववचन पुनः (नामैव वेद सारांशं सिद्धातं सर्वदा शवमिति आदि पुराणे श्रीकृष्ण वचनम्) इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे रामनाम सम्पूर्ण वेदार्थ का सार सिद्धान्त है इसमें सन्देह करने का काम कुछ नहीं है नाम ऐसा ही है ।

मूल—मंगलभवन अमंगलहारी । उमासहित जेहि जपत पुरारी ॥

अर्थ—पुनः वह श्रीरामनाम कैसा है कि मंगल जो ज्ञान वैराग्यादि हैं तेहिका भवन नाम घर है । (प्रश्न—) हे स्वामीजी, भवन कहने का क्या भाव है (उत्तर—) हे शिष्य, भवन कहने का भाव यह है कि अपना घर सबको प्रिय है चाहे जैसा हो और अपने घरको छोड़के अन्यत्र ठिकाना भी नहीं है इसी प्रकार से मंगल को रामनाम बहुत प्रिय है और रामनाम छोड़के मंगल कहीनहीं जाते हैं इससे मंगल जो चाहैसो रामनाम को जपे नहीं तो रामनाम विना मंगल होना दुर्लभ है इससे मंगल का भवन कहा । पुनः वह रामनाम कैसा है कि अमंगल जो काम, क्रोध, लोभादि हैं तिनके हारीनाम हरण करने वाले हैं भाव बिना रामनाम को जपे अमंगल का नाशहोना दुर्लभ है इससे राम नाम जपनाही सब का मूल है । पुनः वह श्रीरामनाम कैसाहै जेहिको उमा जो पार्वतीजी हैं तिनके सहित पुरारी जो शिवजी हैं सो जपते हैं भाव शिवजी ईश्वर हैं और पार्वतीजी आदिशक्ति हैं सोभी जिस रामनाम को जपत नाम आज पर्य्यन्त जपरहे हैं तो दूसरे की क्याबात है भाव श्रीरामनाम उदार न होते अतिपावन पुराण श्रुति के सार न होते तो साक्षात ईश्वर शिव पार्वती काहे को जपते इससे रामनाम सर्वोपरि है । (प्रश्न—) हे स्वामीजी, इहांपे सब जापकों को छोड़के शिव पार्वती ही को क्यों कहा सो कृपा करके कहिये । (उत्तर) हे शिष्य, इसका अभिप्राय यह है कि शिव और

पार्वती दोनों मुख्य नाम जापक हैं इन दोनोंसे विशेष रामतत्त्व के ज्ञाता दूसरा कोई भी नहीं है है यह सिद्धांत सर्वत्र प्रसिद्ध है। यथा—

रामनामप्रभावोऽयं सर्ववेदैः प्रपूजितः।
महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥१४३॥

अर्थ–क्रियायोगसार में कहा है कि यह रामनाम का प्रभाव सब वेद में प्रपूजित है इसको केवल शिवजी जानते हैं दूसरे कोई भी नहीं जानते हैं। इत्यादि बहुत कहा है। इससे हेशिष्य, शिवजी बड़े ज्ञाता हैं उनके द्वारा नाम का माहात्म्य दिखाया इससे शिव पार्वती को प्रथम कहा और जहां २ नाम का माहात्म्य कहा है तहां २ प्रथम ही शिवजी को कहा है सो नाम बन्दना में भी प्रसिद्ध है इससे प्रथम कहा। दूसरा आशय यह है कि जो जो गुण इहां पै ग्रन्थकार स्वामीजी ने नाम में कहे हैं सो सो सब गुण शिवजी में हैं जैसा कि स्वामीजी ने प्रथम रामनाम को उदार कहा सो शिवजी में भी उदारगुण प्रसिद्ध है काहे से कि रामनामही के प्रताप से पांच कोश पर्यन्त काशीजी में मोक्ष के सदाव्रत देते हैं यह बड़ी आश्चर्य्य उदारता है काहे से कि मोक्ष होना बड़े २ योगियों को भी दुर्लभ है सो शिवजी काशीमें कोटिन जीवों को मोक्षदेतेहैं यह उदारता श्रीरामनामही की कृपासे शिवजी को मिलीहै इसीसे दानी शिरोमणि शिव का नामहै। यथा—दानी कोउ शंकर से नाहीं इत्यादि कहा इससे शिवजीभी रामनाम के प्रताप से बड़े उदार हैं। पुनः श्रीरामनाम को अतिपावन कहा सो शिवजीभी नामके बलसे पावन हैं और रामनाम को पुराण श्रुति का सार कहाहै सो शिवजी वेद पुराण के सारग्रही हैं। यथा (नामैव वेदसारांशं सिद्धान्तं सर्वदा शिवम्) इत्यादि कहा है। पुनः (राम चरित सतकोटि महं लिय महेश जिय जानि) इत्यादि कहा है। इसीसे शिवजी सारग्राही भी हैं। पुनः श्रीरामनाम को मंगलभवन कहा और अमंगलहारी सो शिवजी भी मंगल के भवन और अमंगल के हारी हैं। यथा—नाम प्रसाद शंभु अविनाशी साज अमंगल मंगलरासी इत्यादि कहा है।। इससे सब जापकोंको छोड़कर प्रथम शिवजी को कहा ॥ २ ॥

मूल—भनितिविचित्र सुकबि कृत जोऊ। रामनाम विनुसोहन सोऊ॥

अर्थ—अब श्रीगोस्वामीजी रामनाम से जो रहित काव्य है तिनकी अशोभित्व दिखाते हैं कि भनित जो काव्य है सो विचित्र नाम

अद्भुत हो, अर्थात् छन्द प्रबंध करके युक्त हो, अथवा विचित्र नाम संस्कृत हो, और सुकवि नाम अच्छे बिद्वान् कविकृतहो जोऊ नाम जौंन भी काव्य, परन्तु श्रीरामनाम न हो तो सोहन सोऊ वह भी विचित्र काव्य शोभा नहीं देती है। जोऊ कहनेका भाव यह है कि दूसरे काव्य की क्या कथा है बड़े २ विद्वान्की भी बनाई पोथी रामनाम विना शोभा नहीं देती है इससे जोऊ कहा। भाव इसीसे हमने इसमें रघुपति के उदार नाम कहे हैं ॥

मूल—विधुवदनी सब भांति सवारी। सोहन वसन विना वरनारी ॥

अर्थ—कैसे शोभा नहीं देती है वह पूर्वोक्त काव्य कि जैसे विधुवदनी अर्थात् चन्द्रमुखी सब भांति से सँवारी नाम सजी हो परन्तु एक वसन नाम वस्त्र नहीं हो तो वर नाम श्रेष्ठ नारी अथवा उत्तम कुलोत्पन्ना स्त्री शोभा नहीं देती है। भाव—वहां तो सुकवि और इहां विधुवदनी वहांपे भणित जो काव्य है सो संस्कृत और इहां वर नाम श्रेष्ठ नारी यानी उत्तम कुलोत्पन्ना वहां विचित्र यानी सर्वकाव्यालंकार करके युक्त और इहां सब भांति सँवारी अर्थात् पन्द्रह शृंगार करके युक्त वहां श्रीरामनाम विनु सोहन सोऊ यहां वसन विना शोभा नहीं देती है। (प्रश्न) हे स्वामीजी इहांपै गोस्वामीजीने नग्नस्त्री की उपमा क्यों दी है सो कृपा करके कहिये। [उत्तर] हे शिष्य, नग्न स्त्री की उपमा देने का कारण यह है कि शास्त्र में नग्न स्त्री को देखना दोष है। यथा प्रमाण—

नांजयन्तीं स्वके नेत्रे नचाभ्यक्तामनावृताम् ॥
न पश्येत्प्रसूवन्तीं च तेजस्कामो द्विजोत्तमः ॥१४४॥

अर्थ—मनुस्मृति के चौथे अध्यायमें कहाहै कि अपने तेजकी इच्छा वाला ब्राह्मण, अपने नेत्रमें काजल लगाती हुई को, तैल लगाती को, नग्न स्त्री को, पुत्रोत्पत्ति करती को नहीं देखे इत्यादि कहा है। पुनः भागवते—

तन्माता कोठरा नाम नग्नामुक्ताशिरोरुहा ।
पुरोऽवतस्थे कृष्णस्य पुत्रप्राणारिरक्षया ॥ १४५ ॥
ततस्तिर्यङ्मुखोनग्नामनिरीक्षन्गजाग्रजः ॥
वाणश्च तावद्विरथश्छिन्नधन्वा विशत्पुरः ॥

अर्थ—जिस समय में शोणितपुरमें श्रीकृष्ण भगवान् का और बाणासुर का संग्राम होता रहा उसी समय में तौन वाणासुरकी माता जो कोटरा नाम करके रही सो नग्न होकर और केश खोले हुये प्रथमही श्रीकृष्णजीके सन्मुख पुत्रकी प्राणरक्षार्थ खड़ी होगई। तदनन्तर शास्त्र में नग्न स्त्री को देखना दोष जानके भगवान् ने मुख नीचे कर लिया इतने ही में तब तक वाणासुर रथ और धनुष से रहित होकर शोणितपुर में घुसगया इत्यादि कहा है। इससे इहां पै मुख्याभिप्राय यह है कि, जैसे नग्न स्त्रीको देखने में दोष है तैसेही चाहे जैसा काव्य हो और रामनाम न होवे तो देखना दोष है। इससे हे शिष्य, श्रीरामनाम के विना कैसाभी काव्य हो तो भूलके नहीं देखना दोष है। यह सिद्धांत है। भाव-विना रामनाम के काव्य कैसा भी हो तो नग्न स्त्रीके समान वेलज्ज है, देखै तो पापका भागीहो। बल, वीर्य, बुद्धि, तेजहीनहो, लोक परलोक से हीनहो, यानी सब प्रकारसे नष्ट हो इससे नग्न स्त्री की उपमा दी है। हे शिष्य, देखो यह कैसा शिद्धांत है यह वचन रामायण भरे मैं अपूर्व विलक्षण है इसको पक्षपात छोड़ के समझना चाहिये। इस वचन से यह सिद्ध भया कि रामायण में भी सार एक रामनाम ही है इसीसे एहिमहुँ रघुपति नाम उदारा कहा है। काहे से कि रामनाम के बिना काव्य वृथा है। और हे शिष्य सद्ग्रंथ की पहिचान होने के वास्ते यही एक बड़ी भारी युक्ति और कुंजी है काहे से कि पूर्वाचार्य्यों के जितने छोटे बड़े ग्रंथ हैं तिन सबमें भगवन्नाम अबश्य होगा और पाखण्डियों के जो बनाये ग्रंथ हैं तिनमें नाम का माहात्म्य नहीं होगा और जिस पूर्वाचार्य्य के ग्रंथ में और आज कलके वनाये काव्यमें रामनाम नहीं हो अर्थात् राममाम का महत्त्व वर्णन नही हो सो सब पाखण्डियोंका मत जानना जैसे कि योगवाशिष्ठादि ग्रंथ हैं। (प्रश्न, हेस्वामीजी, योग वाशिष्ठ) ग्रन्थ जोहै सोतो कहते हैं कि वशिष्ठ जीकी बनाई महारामायण है और कोई २ कहते हैं कि श्रीवाल्मीकि की बनाई है सो क्या वात है कहिये, (उत्तर) हे शिष्य, योगबाशिष्ठ जो ग्रन्थहै सोई पाखण्ड मत का मुख्य ग्रंथ है और नास्तिक अद्वैतवादी का बनाया है और वशिष्ठादि का नाम धर दिया है काहेसे कि वशिष्ठ का नाम नहीं रखनेसे कौन मानेगा और नाम धरनेसे सब मूर्ख लोग जानते हैं कि वशिष्ठजी का बनाया है इससे पढते हैं और देखते हं यह नहीं जानते है कि कल्पित है और नास्तिक

का बनाया है देखने योग्य नहीं है उसमें तो रामजी को अज्ञानी जीव सिद्ध कियाहै और वशिष्ठजीको अद्वैतवादी गुरु बनाया है तिन के द्वारा रामजी को ब्रह्मज्ञान का उपदेश किया है और ज्ञान से रामजी को शान्ति भई ऐसी २ मूर्खता की बातें कही हैं । हे शिष्य, योग बशिष्ठ का सब पोल खोलरक कहैं तो ग्रन्थ विस्तार होजायगा इस से थोरेही में जानलेना योगवाशिष्ठ को जो देखेगा और देखता हैं सो महामूर्ख है, और रामजी का द्रोही है । इससे हे शिष्य, कभी भूल से भी नहीं पढ़ना सुनना महानिन्दनीय ग्रन्थ है तुम को देखना हो तो भागवत, वाल्मीकीयरामायण गीता, और भी बहुत से ग्रन्थ हैं, (योग वाशिष्ठ) में क्या है और हे शिष्य, रामायण तो उसको कहते हैं कि जो रामजी के घरहो जिसमें सातो काण्ड होवें और पृथक् २ सब में रामजी की लीला वर्णन हो और योगवाशिष्ठ में तो सब नास्तिकपने की बातें कही है उसको रामायण कैसे कहना चाहिये और महा रामायण में तो लक्षश्लोक हैं उसमेंशिवजीने अखंड रामतत्त्व पार्वतीजी कोसुनाया है वह तो बड़ा अपूर्व ग्रंथ है और वाल्मीकीयरामायण तो (गायत्री वेद मातरं) इत्यादि शास्त्रके प्रमाणसे वेदकी माता गायत्री चौवीसाक्षररूपे चौविस सहस्र (श्लोक) व्याख्यारूप बनाई है, इससे वाल्मीकीयरामायण में साक्षात् वेद है तिनसे और नास्तिक कथित योगवाशिष्ठ से कैसे समता हो सकती है और वाल्मीकि जी बड़े सत्यवक्ता ऋषि हैं उनके मुखसे पाखण्ड वचन कैसे निकल सकता है इससे जो कोई वाल्मीकिजीकी बनाई (योगवाशिष्ठ) को कहते हैं अथवा वशिष्ठजीकी बनाई कहते हैं सोमूर्ख है और भगवद्रोही है, नास्तिकहै, पशुहै, गँवार है, सत्शास्त्रसे विमुख है । हे शिष्य योगवाशिष्ठ, अध्यात्मरामायण, अद्भुतरामायण इत्यादि नहीं देखना चाहिये काहेसे कि बीचके कल्पित ग्रंथ हैं पूर्वाचार्य कृत नहीं हैं, और हेशिष्य जिस काव्यमें रामनाम नहीं हो सो पाखण्डी मतका जानना ऐसा शास्त्रका सिद्धान्त है । यथा ब्रह्म संहितायाम्—

कलि प्रभावतो नष्टाः सद्ग्रन्थानां कथाः शुभाः ॥
पाखण्डैर्निर्मितं नानामतं श्रीनामवर्जितम् ॥ १४७ ॥
अपरं साधनानीह बभूवुः कोटिशो नृणाम् ।
मुनीनां मतभेदेन येष्वायासो महान्भवेत् ॥ १४८ ॥

अर्थ—शिवजी ने ब्रह्माजी से कहा है कि कलियुग के प्रभाव से शद्ग्रन्थ अर्थात् वैष्णव शास्त्रकी जो भगवत् कथा है सो सब नष्ट होजायगी और पाखण्डी के बनाये ग्रन्थनाना मतके श्रीरामनामसे रहित ग्रन्थ प्रकट होंगे और मुनि लोगोंने भी मत भेद करके कोटिन प्रकार के साधन मनुष्यों के लिये प्रगट किये हैं सो सब बहुत परिश्रम का देनेवाला है और रामनाम सर्वोपरि है इसी प्रकारसे बहुत कहा है इससे रामनाम विना काव्य वृथा है और भी (कौशल-खंड) में सूतजीने ऋषयों से ऐसा कहा है।

न तत्पुराणं नहि यत्र रामो यस्यां न रामो नहि संहिता सा॥
स नेतिहासो नहि यत्र रामःकाव्यं न तत्स्यान्नहि यत्र रामः१४९
शास्त्रं न तत्स्यान्नहि यत्र रामस्तीर्थं न तद्यत्र न रामचन्द्रः॥
यागः सयागो नहि यत्र रामो योगः स रोगो नहि यत्र रामः१५०
न सा सभा यत्र न रामचन्द्रःकालोप्यकालः कलिरेव सोस्ति॥
संकीर्त्यते यत्र न रामदेवो विद्याप्यविद्यारहिताह्यनेन॥१५२॥
स्थानं भयस्थानमरामकीर्ती रामेतिनामामृतशून्यमस्य॥
सर्पालयं प्रेतगृहं गृहं तद्यत्रार्चतेनैव महेश पूज्यः॥ १५३॥
उक्तेन किं स्याद्बहुनातविश्वं सर्वं मृषा स्याद्यदि रामशून्यम्।
एतच्च कृष्णुः पुनराहनोसौ स्पृष्ट्वोपवीतं जयमालिकाञ्च॥

अर्थ-श्रीसूतजी सौनकादि से बोले कि, वह पुराण नहीं है जहां राम नाम नहीं है, जिसमें रामजी नहीं हैं वह संहिता नहीं है, वह इतिहास नहीं जहाँ रामनाम नहीं वह काव्य नहीं जिसमें रामजी नहीं, वह शास्त्र नहीं जिसमें रामजी नहीं वह तीर्थ नहीं जहाँ रामजी नहीं, वह यज्ञ नहीं आग है अर्थात् अग्नि है जहां श्रीरामजी नहीं वह योग नहीं रोग है जिसमें श्रीरामजी नहीं वह सभा नही जहां रामनाम नहीं वह काल नाम समय नहीं कालरूप है जहां रामचन्द्र जी नहीं कलह रूप है रामजी जहां नहीं विद्या भी अविद्या है नाशरूप है जहां श्रीरामदेवका भजन स्मरण नहीं, करते वह स्थान भयदायक स्थान है जहां रामकीर्ति नहीं श्रीरामनामामृत करके शून्य है सो सब

शून्य ही है, वह सर्प के बिल समान घर है प्रेतों के घर समान है जिस घरमें महेशपूज्य श्रीरामजी का पूजन नहीं है। सूतजी बोले कि बहुत कहने का काम नहीं है सम्पूर्ण संसार श्रीरामनाम बिना झूठा है। यह सिद्धांत हमको पूर्व में गंगाजी में प्रवेश करके जनेऊ माला हाथ में लेके भाव सौगन्ध खाके कृष्ण द्वैपायन वेदव्यासजी ने कहा है। हे शिष्य, इसी प्रकार से बहुत प्रमाण हैं देखो व्यास जी ने सौगन्ध करके कहा है कि रामनाम बिना सब वृथा है इससे रामनाम बिना काव्य वृथा है इससे गोस्वामीजी ने नग्न स्त्री की उपमा दी है ऐसे ही बचन हनुमान्‌जी ने रावण से कहा है। यथा। रामनाम बिनु गिरा न सोहा। देखु विचारि त्याग मदमोहा ॥ वसन हीन नहीं सोह सुरारी। सब भूषन भूषित वरनारी ॥ इत्यादि इससे रामनाम से रहित वाणी नग्न स्त्री के समान बेलज्य है उसके सुनने में दोष है चाहै जैसी वाणी हो सुनने का धर्म नहीं है ॥ ४ ॥

मूल–सब गुन रहित कुकविकृत बानी।
रामनाम जस अंकित जानी ॥

अर्थ–और सब गुण अर्थात् सब काव्यालंकार गुण से रहित हो और कुकबि नाम मूर्ख कविकृत वाणी हो भाव भदेश वाणी हो संस्कृत नहीं हो, परन्तु रामनाम यश करके अंकित हो। (प्रश्न-) हे स्वामी जी, रामनाम का यश क्या है सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, रामनाम का यश यह है कि जिन जिन महात्मा की रामनाम से गति भई है तिन २ की कथा इतिहास दृष्टान्त वर्णन हो उसको रामनाम यश करके अंकित नाम चिन्हित हो सो जानिके ॥५॥

सादर कहहिं सुनहिं बुधताही। मधुकर सरिस संतगुन ग्राही ॥६॥

अर्थ उसको सादर नाम आदर के सहित बुध जो पंडित लोग हैं अथवा ज्ञानी लोग संतलोग कहहिं नाम कहते हैं और सुनहिं नाम दूसरे के मुख से सुनते हैं काहे से कि संतलोग मधुकर नाम भौंरा के सरिस गुण के ग्राही नाम ग्रहण करने वाले होते हैं। भाव जैसे भँवरा पुष्प का विचार नहीं करता है कि काहेका पुष्प है केवल सुगन्ध का प्रयोजन रखता है और बिना गंधका पुष्प त्याग देता है तैसेही संत महात्मा लोग काव्य का विचार नहीं करते हैं कि संस्कृत है कि भाषा अथवा सर्वगुणसम्पन्न है कि सर्वगुण रहित

कुकविकृत है कि सुकविकृत यह कुछ नहीं देखते हैं केवल श्रीरामनाम से काम रखते हैं और रामनाम से रहित जो काव्य है तिनके पास जाते भी नहीं देखिये इहाँ भी गुणही कहा इससे विश्वविदित गुण रामनाम ही है। हे शिष्य देख इस गोस्वामीजी के अपूर्व वचन से रामायण में भी एक श्रीराम नामही सार सिद्धान्त है इसी रामनामकी वन्दना रामायण में गोस्वामी जी ने नव दोहा पर्य्यन्त की है और विधिपूर्वक रामनाम को वर्णन किया है सो सब आगे कहैंगे। (प्रश्न-) हे स्वामी जी, रामनाम की बन्दना नवदोहा क्यों की सो आप कृपा करके कहिये। क्योंकि आप रामायण के तत्त्वज्ञाता हैं इससे कहिने योग्य हैं। (उत्तर-) हे शिष्य, तुम बड़े रामजी के कृपापात्र हो इससे कहने योग्य हो सावधान होके श्रवण करो। इहाँ नवदोहा वंदना करने का भाव यह है कि गोस्वामी जो ने (दोहावली) में कहा है कि। नामरामको अंक है सब साधन है सून। अङ्क गये कुछ हाथ नहिं अंक रहे दसगून। अर्थात् रामनाम अंक है अंक का प्रमाण नव तक है इसी से नव दोहातक नाम बंदना की है और जितने रामायण में अथवा और सब ग्रन्थों में साधन हैं सोई तो शून्य है रामनाम को छोड़के साधन करेगा तो कुछभी हाथ नही लगैगा और रामनाम को धारण करके सब साधन करेगा तो दशगुणा होगा जैसे कि एक अङ्क है शुन्य देनेसे दशगुण होते हैं और अंक को निकाल लेने से शुन्य ही रह जाता है तैसे ही रामनाम विना सब वृथा है इसले नव दोहा तक बन्दना की है। दूसरा अभिप्राय यह है कि नवधा भक्तिका सार रामनाम है इससे नव दोहा तक वन्दना की है। तीसरा हेतु नाम वन्दना में कहेगे। हेशिष्य, इसी से नवौ दोहाका महात्म्य गोस्वामीजी ने उत्तरकाण्ड की समाप्ति में कहा है कि। सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरे। दारुन अविद्या पंच जनित विकार श्रीरघुवर हरे। इत्यादि कहा है। सो इसका अभिप्राय विस्तारपूर्वक ग्रन्थसमाप्ति में कहूँगा। हे शिष्य, श्रीरामनाम सबका सार है इससे परे सिद्धान्त कुछ नहीं है यह तुम निश्चय करके जानलो और सब साधनों को छोड़ के एक अखंड निर्वाणदायक रामनाम को जपो विना नाम जपे संसार से उद्धार होना दुर्लभ है इस बातको सत्य २ करके जानो। और हे शिष्य, जो तुमको श्रीरामनाम का यथार्थ माहात्म्य और स्वरूप जानना हो तो श्रीगोस्वामी तुलसीदासजीकी वनाई (श्रीरामनाम कलामणि कोषमंजूषा) को एकांत में सावधानी से वैठकर

विचार करो काहेसे कि यह ग्रन्थ गोस्वामीजी का खास निज सिद्धान्त है ऐसा कोई भी ग्रन्थ मेरे समझ में नहीं है । इससे देखने योग्य है और गोस्वामी जी ने इसी सिद्धांत ग्रन्थ में सौगंध किया है कि रामनाम से विमुख जो है तिनको नहीं देना । और रामनाम के जो रसिक हैं तिनके लिये सजीवन बूँटी है यथा (दोहा—तुलसी पर प्रस्थानमों मारुति दीन्हे मोहि । परको नाहीं दीजिये आन हमारो जोहि ॥ रामनाम के रसिकजे तिनको जीवन मूरि । अर्द्ध इन्दु अरु विन्दुमों तुलसी रेफहिपूरि ॥ इत्यादि बहुत कहा है इससे अवश्य करके देखना । हेशिष्य, इस ग्रन्थ में (एक छत्र एक मुकुट मनि सब बरननि पर जोउ । तुलसी रघुबर नामके बरन विराजित दोउ ॥) इसी दोहा का सिद्धांत वर्णन किया है सो देखनेहीसे मालूम होगा (प्रश्न) हेस्वामीजी, बहुतेरेलोग कहते हैं कि रामनाम कलामणिकोषमंजूषा गोस्वामीजी कृत नहीं है कोई और हीने बनाकर गोस्वामीजी का नाम धरदिया है सो कैसा है कृपा करके कहिये (उत्तर—) हे शिष्य, यह कहना सर्वथा अयोग्य है काहे कि यह तो निश्चयहै नहीं है कि गोस्वामीजी के अमुक २ इतने ग्रन्थ हैं और न इस बातको कहीं गोस्वामीजीने लिखी है हां जोतो कहीं गोस्वामीजीने लिखा होतो तो ठीक है दूसरे का कहा नहीं माना जायगा काहे से कि जिनको जितने ग्रन्थ मिले हैं उन्होंने उतनाही लिखाहै इससे उनका कहा अप्रमाण है और जो कहो कि कथन बहुत कठिनहै दूसरे गोस्वामीजी के किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है तो यह भी कहना ठीक नहीं काहे से कि श्रीरामनामभी तो बहुत कठिन है विनय में गोस्वामीजी ने कहा है । कि (रघुपति भगति करत कठिनाई । कहत सुगम करनी अपार जाने सोइ जेहि बनि आई ॥) इत्यादि कहा है कि भक्ति करने में कठिन है और कहने में सुगम है, परन्तु करनी बड़ी अपार है जिन से करनी वनि आई हैं वे जाने हैं । हे शिष्य, ऐसे ही श्रीरामनाम तो कहने में सुगम है परन्तु रामनाम का साधन करना बहुत ही कठिन है । सोई श्रीगोस्वामीजी ने (रामनाम कलामणि कोषमंजूषा में कहा है इससे अवश्य देखना चाहिये और यह तो निश्चय है कि तत्व पदार्थ महात्मा लोग कहीं २ समय पाकर कहते हैं वार २ नहीं कहते हैं यह तुम सत्य करके जानना देखो जैसा कि राम नाम का माहात्म्य सर्वत्र सब ग्रन्थों में महात्मा लोगों ने कहा है परंच दशनामा-पराध कहीं किसी ग्रन्थ में कहा है और विना दशापराध को छोड़े नाम का

गुण असरभी नहीं होताहै यह निश्चय करके जानना। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, दशनामापराध कौन कौन है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर—) हे शिष्य, दशनामापराध को (शिवसंहिता) में हनुमान्‌जी ने महर्षि अगस्त्यजी से ऐसा कहा है। यथा—

सन्निन्दा शतनामवैभवकथाश्रीशेशयोर्भेदधीः,
अश्रद्धाश्रुतिशास्त्रदैशिकगिरा नामार्थवादभ्रमः॥
नामास्तिक्यनिषिद्धवृत्तिविहितत्यागौ च धर्मान्तरैः,
साम्यं नाम च शंकरस्य च हरेर्नामापराधादशेति॥१५५॥

अर्थ—नाम जापक जनकी निन्दा॥१॥ दूसरा अपराध यह है कि शतनाम अर्थात् भगवतके जितने सब नाम हैं तिन सब नामका वैभव नाम ऐश्वर्य्य को एक कथा अर्थात् प्रशंसा जानना॥२॥ पुनः तीसरा अपराध यह है कि श्रीश जो हैं लक्ष्मीपति भगबान् और ईश जो हैं शिवजी तिन में भेद बुद्धि करना॥३॥ और चोथा अपराध यह है कि वेदवाक्य में श्रद्धा नहीं निंदा करना कुतर्क करना॥४॥ शास्त्र में भी अश्रद्धा होना॥५॥ छठवां अपराध यह है कि दैशिक जो आचार्य्य हैं अर्थात् गुरु स्वामी तिनकी गिरा नाम बचन में श्रद्धा न रखना भाव आज्ञा न मानना॥६॥ सातवां अपराध यह है कि भगवत् के नामार्थ में वादाविवाद करना और भ्रम करना॥७॥ और आठवां अपराध यह है कि नामास्तिक्य अर्थात् रामनाम में आस्तिक्य रहना और नाम के बलसे पाप करना महाअपराध है॥८॥ और नवम अपराध यह है कि शास्त्रोक्त जो कर्म धर्मादिक हैं तिनको त्याग देना कि हम तो नाम जपते हैं हमको कर्म धर्म से क्या काम है सो नहीं करना। भाव लोगों के उपदेशार्थ तो भी करना न करने से अपराध है॥९॥ और दशवां अपराध यह है कि शिवजी और विष्णु भगवान् के नाम को बराबर जानना। भाव जैसे रामनाम है तैसे ही शिव नाम जानना अपराध है॥१०॥ इत्यादि कहा है। इसको विचार पूर्वक त्यागकर रामनाम जपो। हे शिष्य, पद्मपुराण में भी नामापराध कहा है। यथा पद्मपुराणे सनत्कुमार उवाच नारदं प्रति—

सतां निन्दा नाम्नः प्रथममपराधं वितनुते।
यतः ख्यातिं यातां कथमुपसहते तद्विगर्हिताम्॥

शिवस्य श्रीविष्णोर्य्यदिह गुणनामादिसकलम् ।
धियाभिन्नं पश्येत् स खलुः हरिनामाऽहितकरः ॥ १५६ ॥
गुरोरवज्ञा श्रुतिशास्त्रनिन्दनं तथार्थवादो हरिनाम्नि कल्पनम् ।
नाम्नो बलाद्यस्य हि पापबुद्धिर्न्न विद्यते तस्य यमैर्हि शुद्धिः १५७
धर्मव्रतत्यागहुतादिसर्वशुभाक्रिया साम्यमपि प्रमादः ।
अश्रद्दधानेप्यमुखेप्य शृण्वति यश्चोपदेशं स नामापराधः १५८
श्रुत्वापि नाम माहात्म्यं यः प्रीतिरहितोधम ।
अहममादि परमो नाम्नि सोप्यपराधकृत् ॥ १५९ ॥
अपराधविनिर्मुक्तो पखं नाम्नि समाचर ।
नाम्नैव तव देवर्षे सर्वं सेत्स्यति नान्यतः ॥ १६० ॥

अर्थ—संतनकी निंदा करना प्रथम अपराध असाध्यरोग सम जानना काहे से कि रामनाम विना संत कैसे विख्यात होगा और कहां से को जाने इससे संतकी निन्दा रामजी नहीं सह सकते हैं ॥ १ ॥ दूसरा अपराध यह है कि शिवजी के नाम गुणादि को संपूर्ण विष्णुभगवान् से भिन्न मानना सो भी निश्चय करके नामापराध है ॥ २ ॥ गुरुकी आज्ञा न मानना तीसरा अपराध है ॥ ३ ॥ चौथा अपराध यह है कि वेदशास्त्र की निन्दा करना ॥ ४ ॥ भगवत् के नाम में अर्थ वाद करना मिथ्याबुद्धि करना ॥ ५ ॥ नाम के बलसे पापकर्म्म करना उसके पापको यमराज भी शुद्ध नहीं कर सकते हैं यह बड़ा भारी पाप है और धर्मव्रत त्याग अग्निहोत्रादि यज्ञ को रामनाम के बराबर प्रमाद से जानना ॥ ७ ॥ श्रद्धा हीन को लालचवश होके राननाम का माहात्म्य कहना वह भी अपराध है ॥ ८ ॥ नामका माहात्म्य सुनके प्रीति नहीं करना यह भी अपराध है ॥ ९ ॥ और अहंकारादि को न त्यागना नाम के माहात्म्य में मिथ्या बुद्धि करना दशवां अपराध है । सनत्कुमार जी बोले कि, हे नारद, नामापराध से रहित होके नाम जपो । (जो रामनाम से होते हैं सो काहू ते नाहिं रामनाम सर्वोपरि है । हे शिष्य, इसी प्रकार से नामापराध शास्त्रमें कहा है इस अपराधको त्यागकर श्रीरामनाम को जपनाही परमोत्तम है इसीप्रकार से सिद्धान्त वचन महात्मा लोग कहीं २ कहते हैं,इससे (रामनाम कलामणि कोष-

मंजूषा) स्वयं श्रीगोस्वामीजी की बनाई है इसमें संदेह करना वृथा है। हे शिष्य, रामनाम का साधन और स्वरूप जैसा इस ग्रन्थ में है तैसा और किसी ग्रंथ में नहीं है यह सत्य २ करके जानना और हनुमान्‌जी के उपदेश से परम पद जाने के समय में इस ग्रन्थ को श्रीगोस्वामीजी ने बनाया है इससे सिद्धांत ग्रन्थ हैं देखने ही से मालूम होगा। हे शिष्य, गोस्वामीजी के दो ग्रन्थ सर्वोपरि है एक तो एहि जो कि कहा। दूसरा विनयपत्रिका यह दो ग्रन्थ बहुत ही अच्छे हैं और जो जिज्ञासुजन श्रीरामजी से मिलने चाहै सो इसी ग्रंथ को एकांत में बैठ के बिचारें। (प्रश्न—) हेस्वामीजी, अब आप कृपाकर सतपञ्च चौपाई मनोहर कहिये वह कहां है और कौनसी है सो विस्तारपूर्वक वर्णन करिये। (उत्तर—) हे शिष्य, अब तुम सावधान होके श्रवण करो हम वर्णन करते हैं।

तत्रादौ मंगलाचरणम्।

कालेयान् कुटिलान् जनान् बहुबिधान्यापीयसा मग्रगान्।
वेदाचार वहिर्गतान् भवभयाद्भीतांस्तुसरं द्वितुम्॥
बाल्मीकेरपरापरा प्रतिकृतिर्भाषाधुरीणो महान्।
दासान्तस्तुलसी वभूव कविराट् तस्मै नमः सर्वदा॥ १॥

❀ अथ सतपंच चौपाई मनोहर

वैभवप्रकाशिकाटीका

प्रारम्भः।

गिरा अर्थ जल बीचि सम कहियत भिन्नन भिन्न।
बन्दौं सीताशमपद जिनहिं परम प्रिय खिन्न॥ १॥

अर्थ-प्रथम तो श्रीगोस्वामीजीने सबको क्रमशः पृथक् २ बन्दना की पुनः तत्पश्चात् श्रीयुगलस्वरूप की बन्दना की। यथा—(जनकसुता जगजननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनिधान की॥ ताके जुग पद कमल मनावौं। जासु कृपा निर्मल मति पावौं॥ पुनः—पुनि मन बचन करम रघुनायक। चरन कमल बंदौ सब लायक॥ राजिवनयन धरे धनु सायक। भगतविपति भञ्जन सुखदायक॥ इत्यादिभिन्न २ श्रीसीतारामजी की बन्दना करके अब श्री गोस्वामीजी इस दोहे में श्रीयुगल स्वरूप को एकत्र करके बन्दना करते हैं। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, प्रथम भिन्न २ बंदना करके अब एकत्र बंदना क्यों करते हैं इसका हेतु क्या है? (उत्तर-) हे शिष्य, साथ में वन्दना करने का कारण यह है कि आगे गोस्वामीजी सर्वोपरि श्रीरामनाम की वंदना करेंगे उसमें ऐसा कहैंगे कि (बन्दौंनामराम रघुवरको इत्यादि—) कहैंगे तिनमें ऐसा कोई उपासकलोग न जाने कि गोस्वामीजी श्रीसीतारामजी के उपासक नहीं थे केवल श्रीरामही उपासक थे जो कदापि युगलोपासक होते तो दोऊ नाम की बंदना करते इस भेद बुद्धिको मिटाने के लिये श्रीगोस्वामीजी श्रीसीतारामजी को एकत्त्व करके बन्दना करते हैं। (प्रश्न-) हेस्वामीजी, प्रथम ही क्यों नहीं एकत्त्व करके बन्दना की जो अब नाम बन्दना के लिये एकत्र करके बन्दना करते हैं इसका हेतु क्या है? (उत्तर—) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि नाम जो है सो गोस्वामीजी का इष्ट है और निज सिद्धान्त है इसी से नवदोहा पर्य्यन्त वंदना करेंगे और सर्वोपरि श्रीरामनाम ही को कहेंगे इसीसे युगल स्वरूपों को एकता करके बन्दना करते हैं और यह दिखाते है कि हमको युगल स्वरूप और नाम की एकता है एक की नही इससे एकत्व करके बन्दना करते

है। श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि सीतारामजी के जो पद है यानी चरणकमल तिनकोबन्दौं नाम बन्दना करता हूँ वह श्रीसीतारामजी कैसे हैं कि जिनको खिन्न जो गरीब है सो परम नाम अत्यन्त करके प्रिय है। हेशिष्य, इहांपै अन्न वस्त्रादि करके हीन खिन्न नहीं जानना, किंतु जिन्होंने नाना प्रकार के अर्थात् "सुगन्ध वनिता वस्त्रं गीतं ताम्बूलं बहुविधि भोजनं भूषणं वाहनं इत्यादिनां परित्यज्य साधुरूपेण सबसे निचानुसंधानरूप गरीबी वृत्तिको धारण किया है ऐसा जो जन नाम दास है सो जिनको परमप्रिय है इसीसे गरीबनिवाज रामजीका नामही प्रसिद्ध है वह श्रीसीतारामजी गरीबनिवाज कैसे हैं कि कहियत नाम कहनेही मात्र भिन्न नाम न्यारे हैं परञ्च भिन्न नहीं हैं कैसे भिन्न नहीं हैं सो दिखाते हैं कि जैसे गिरा जो वाणी है तिससे अर्थ कहियत मात्र भिन्न है तैसेही श्रीसीतारामजी दूनों नामरूप करके कहियत मात्र भिन्न हैं वास्तव्यामें भिन्न नहीं हैं पुनः कैसे भिन्न नहीं हैं कि जैसे जल से वोचि नाम तरंग कहियत मात्र भिन्न है परंतु भिन्न नहीं है तैसेही श्रीसीतारामजी युगलस्वरूप नामरूप करके तथा वस्त्रवभूषणादि करके कहियतमात्र भिन्न हैं कि श्रीरामजी पुरुष हैं श्यामस्वरूप हैं क्रीट मुकुटादि को धारण किये हैं और श्रीजानकी जी स्त्रीरूप हैं, गौरांगी हैं चन्द्रिकादि को धारण किये हैं इत्यादि नामरूपकरके दोनों स्वरूप कहने ही मात्र भिन्न हैं परंतु तत्त्व करके एकही हैं। (प्रश्न-) हे स्वामी जी, यहां पै गोस्वामीजी ने जो दो दृष्टान्त दिया है सो केवल युगल स्वरूप को तत्त्व करके एकत्व दिखाने ही के लिये है तो एकत्व तो एकही दृष्टान्तसे होजाता है दूसरा दृष्टान्त देने का क्या प्रयोजन है? सो कृपा करके कहिये। (उत्तर—) हेशिष्य, एकत्व तो एकही दृष्टान्त से होता है, परंतु कारण कार्य्यका विचार करने से बड़ा विरुद्ध होतो है इससे दो दृष्टान्त दिया है देखो एक दृष्टान्त से तो यह विरुद्ध होता है कि गिरा है कारण और अर्थ है कार्य्य। पुनः गिरा जो वाणी है सो स्त्रीलिंग है और अर्थ पुलिंग है इससे यह विरुद्धहोता है कि श्रीजानकीजी गिरास्थाने कारणरूप हैं और अर्थ स्थाने श्रीरामजी कार्य्यरूप हैं। भाव जानकीजी से श्रीरामजी भये हैं यह सिद्ध भया ताते शक्ति प्रधान है ब्रह्मशक्ति के पुत्र हैं ऐसा मत सिद्ध भया जैसा कि देवि भागवतादि पाषण्डग्रन्थों में शक्ति से ब्रह्मा, विष्णु, शिव भये हैं ऐसा लिखा है इससे वाममार्ग सिद्ध भया यह बड़ा विरुद्ध भया और दूसरे

दृष्टान्त से यह विरुद्ध भया कि जल है कारण और बीचि है उपाधिरूप कार्य्य। पुनः जल नपुंसक है और बीचि स्त्रीलिंग है इससे यह सिद्ध भया कि श्रीरामजी जलस्थाने कारणरूप हैं और बीचिस्थाने श्रीजानकीजी कार्य्य रूपा हैं अर्थात् रामजी से श्रीजानकीजी भई हैं कार्य्यार्थे, परन्तु सर्वोपरि अद्वितीय एक ब्रह्म ही है और सब उपाधि है यह अद्वैतमत श्रीशंकराचार्य्य का सिद्ध भया इसमें भी बड़ी हानि हुई कि श्रीजानकीजी कुछ नहीं हैं। हे शिष्य, एक दृष्टान्त से शक्ति सिद्ध हुआ दूसरे दृष्टान्त से ब्रह्म सिद्ध हुआ यद्यपि यह बात सर्वथा विरुद्ध है और बड़ी हंसी की बात है काहे से कि भगवत् के दोनों स्वरूप अनादि हैं भगवत् के स्वरूपमें कारण कार्य्यका बिचार करना असम्भव है,परन्तु लोकमें मूर्खों के वास्ते कहनेको हो जाती,कि शक्तिसे ब्रह्महै अथवा ब्रह्मसे शक्ति है इस महामूर्खताको मिटानेके लिये गोस्वामीजीने दो दृष्टान्त दियाहै। (प्रश्न-) हे स्वामीजी, दो दृष्टान्तोंसे क्या सिद्ध भयासो कहिये ।(उत्तर-)हे शिष्य, इहांपै मुख्याभिप्राय यह है कि न तो रामजीसे सीता हैं और न सीता से राम हैं दोनों स्वरूप अनादि हैं और दो दृष्टान्तजो दिया है सो तो केवल नामरूपके ऊपरदिया है कुछ कारण कार्य्यके लिए नहीं दियाहै इस दृष्टान्त के भाव इतनेही हैं कि जैसे वाणी और अर्थ दोनों नामरूप करके अनादि है कथन करकें भिन्न हैं और तत्त्व करके एकही हैं। पुनः जैसे जल और बीचि दोनों नामरूप करके अनादिहैं कथन करिके भिन्नहैं और तत्त्व करके एकही हैं तैसेही श्रीसीतारामजी दोनों स्वरूप नामरूप करके अनादि हैं कथन करके भिन्न हैं और तत्त्व करके एक ही हैं। इहां पै कारण कार्य्य का विचार करने का काम नहीं है केवल तत्त्व व नामरूप का विचार करना चाहिये काहे से कि दोनों स्वरूप अनादि हैं और तत्त्व करके एक ही हैं। यथा-(तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एकमन मोरा ॥) इत्यादि-गोस्वामीजीने कहा है। पुनः-(सएवात्मानं द्वेधा पातयत्ततः पतिश्च पत्नी चाभवतामिति बृहदारण्यके श्रुतिः-) अर्थात् वह परमात्मा अपनी आत्मा को दो भाग करता हुआ तिससे पति और पत्नी अर्थात् स्त्री पुरुष दो स्वरूप होते भये। हे शिष्य, देखो जैसा इस श्रुति में सिद्धान्त है तैसे ही इहां पै गोस्वामीजी ने कहा है इससे श्रीसीतारामजी दोनों एकात्मा हैं, परन्तु स्त्री पुरुषरूप करके और सीताराम नाम करके कहियत मात्र भिन्न हैं, परञ्च भिन्न नहीं है। पुनः (रामः सीता जानकी रामचन्द्रो नित्याखण्डे ये पश्यन्ति धीरा इत्यथर्वणे श्रुति,) अर्थ-श्रीरामजी जो हैं सो सीता हैं जानकीजी

रामचन्द्र हैं दोऊ अखण्ड हैं नित्य हैं ऐसे धीर अर्थात् ज्ञानी लोग सब देखते हैं। हे शिष्य, यह भी श्रुति रूप नाम करके भिन्न कहती है और तत्त्व करके एक ही कहती है यहि सिद्धान्त गोस्वामीजी का है इससे दोनों स्वरूप एकही हैं और यहि सिद्धान्त सब शास्त्रों का है। यथा (पद्मपुराणे अर्द्धमात्रे स्थितौ श्रीमत्सीतारामौ परात्परौ) अर्थात् अर्द्धमात्रा में परात्पर श्रीसीतारामजी दोनों स्थित हैं। पुनः राममन्त्रे स्थिता सीता सीता मन्त्रे रघुत्तमः) अर्थ— राममन्त्र में सीता स्थित हैं सीतामन्त्र में रघूत्तम हैं इत्यादि बहुत कहा है इहां विशेष प्रमाण देने से ग्रन्थ विस्तार हो जायगा इससे थोरा कहा है हे शिष्य, इहां गोस्वामीजी ने केवल नाम बन्दना की विरुद्धता मिटाने ही के लिये युगलस्वरूपों को एकत्त्व किया है। भाव रामही नाम में सीता नाम है और सीताही नाम में रामनाम है यह युगलोपासकों का सर्वदा सिद्धान्त है काहे से कि राम बिना सीता नहीं सीता बिना राम नहीं। यथा

सीतां बिना भजेद्रामं सीतारामं बिना भजेत्।
कल्प कोटिसहस्रैस्तु लभेते न प्रसन्नताम् ॥ १६१ ॥
सीतारामात्मकं ध्यानं सीतारामात्मकार्चनम्।
सीतारामात्मकं नाम जपं परतरात्परम् ॥ १६२॥
स रामो न भवेद्या तु सीता यत्र न विद्यते।
सीता नैव भवेत्सा हि यत्र रामो न विद्यते ॥१६३॥
सीतारामं विना नैव रामः सीतां विना नहि।
श्रीसीतारामयोरेव सम्बन्ध शाश्वतो मतः ॥१६४॥

अर्थ—श्रीजानकीविलास नाटक में कहा है कि जो कोई सीता बिना रामजी को भजे अथवा राम बिना सीता को भजे भाव रामनाम कहे सीता नहीं कहे, अथवा सीता सीता कहे राम नहीं कहे सो कोटिकल्प में भी प्रसन्नता को नहीं प्राप्त हो सकते हैं, इससे श्रीसीतारामात्मक ध्यान पूजन को करना चाहिए, सीतारामात्मक ही परात्पर नाम को भी जपना चाहिये। वह राम नहीं हैं जहां सीता जी नहीं हैं और जहां राम जी नहीं हैं वह सीता जी नहीं हैं राम जो सीता बिना नहीं सीताजी राम बिना नहीं। श्रीसीतारामजी का

नित्य एकत्व सम्बन्ध है यह सर्बदा सनातन मत है। हे शिष्य, इसी प्रकार के बहुत ही प्रमाण हैं, इससे सीतारामजी दोनौं सनातन हैं। (प्रश्न) हे स्वामी जी, सीताराम जी दोनों एकही हैं तो आगे सीता ही नाम की बन्दना गोस्वामी जी करते उसी में रामनाम आजाता। पुनः सीता नाम को छोड़के रामनाम ही की बन्दना क्यों की इसका क्या हेतु है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि यद्यपि सीतारामजी एकही हैं परन्तु प्रधान श्रीरामजी ही कहे जायगे काहे से कि रामजी पुरुष हैं रामजी को छोड़के स्त्री को प्रधान कहना यह लोकन्याय में भी ठीक नहीं है परलोक में कहां ठीक है इससे रामजी के नामको प्रधान करिके बन्दना की और जहां २ प्रधान कहा है तहां २ राम जी ही को कहा है। यथा—(प्रभु करुनामय परम विवेकी। तनु तजि रहति छांह किमि छेकी॥ प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई॥ इत्यादि-) श्रीजानकीजी ने कहा है इससे प्रधान श्रीरामजी हीं को कहना योग्य है इसी रामनाम के अन्तर्गत श्रीसीतानाम की बंदना जानना एक सीताही नामहीकी नहीं भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्नादि सबके नामकी बन्दना जानना काहे से कि रामनाम में सबही हैं अब इहां से नवदोहा पर्य्यन्त नाम बन्दना गोस्वामी जी करेंगे तिसमें श्रीसीतानाम कहीं नहीं कहेंगे इसका हेतु इतनाही है कि एकबार इस दोहे में एकत्र करके कह दिया अब कहने का काम नहीं है परन्तु इतनी बात अवश्यमेव जानना चाहिये कि जो जो व्यवस्था श्रीरामनामकी वर्णन करेंगे सो सो व्यवस्था श्रीसीतानामकी भी जानना चाहिये सो थोरा बहुत बीच बीच में कहते जायंगे॥ १११॥

(मूल) बंदौं नाम राम रघुबरको। हेतु कृसानु भानु हिमकरको॥

अर्थ—हे शिष्य, अभी तक तो श्रीगोस्वामी जी ने रूप का पृथक २ बन्दना की पुनः एकत्व करके बन्दना की अब श्रीगोस्वामीजी निज सिद्धांत जो सर्वोपरि श्रीरामनाम है तिनका बन्दना करते हैं और रामनाम को तीन अक्षर करके दिखाते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि बंदौं नाम को न नाम तो राम रघुवर को जो नाम है तिनको बंदौं नाम वन्दना करता हौं। (प्रश्न) हे स्वामी जी, इहां राम रघुवर को कहने का अभिप्राय का है सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, राम रघुवर कहने का भाव यह है कि राम तीन हैं एक तो

प्रथम भृगुवर राम हैं दूसरा राम रघुबर तीसरा यदुवर राम हैं यानी बलरामजो जिसको कहते हैं । (प्रश्न) हे स्वामीजी, यदुवर राम बलराम जी कैसे हैं सो कहिये। उत्तरः हे शिष्य, इसमें शंका करने का काम नहीं है काहे से कि जो यदुकुलमें जन्म लेवे उसको यदुवर कहना चाहिये यह शास्त्र में सिद्ध है दूसरे श्री गोस्वामीजीने अपनी रामायण में यदुकुलही को प्रधान कहा है। यथा—जब जदुवंस कृष्ण अवतारा। होइ हहिं हरन महामहि भारा) इत्यादि कहा है इससे यदुकुल में होने से यदुवर राम कहना सिद्ध है दूसरा भृगुकुल में होनेसे भृगु वर राम परशुराम हैं तीसरा रघुकुल में होवे उसको रघुवर राम कहना चाहिये सोई गोस्वामी जी कहते हैं कि न तो हम भृगुवर रामके नामको बंदौं न मैं यदुवर रामको नाम बंदौं मैं तो रघुवर राम के नाम जो हैं तिनकी बंदना करता हूँ इससे रघुबर राम कहा (प्रश्न-) हे स्वामीजी, रघुबर राम का कौन नाम है जिनकी बंदना करते हैं काहे से कि रघुवर राम के तो सहस्रों नाम हैं (उत्तर—) हे शिष्य, नाम तो बहुत हैं परंतु जो नाम मुख्य है और नामकरण में गुरु वशिष्ठजी ने कहा है सोई नाम प्रधान हैं तातें उसी नामकी बंदना करते हैं वह कौन नाम है सो सुनो। यथा (इन्हके नाम अनेक अनूपा। मैं नृप कहव स्वमति अनुरूपा॥ जो आनंद सिंधु सुखरासी। सीकरते त्रैलोक सुपासी॥ सो सुखधाम राम अस नामा) इत्यादि कहा है इससे राम रघुवर का जो राम ऐसा नाम मुख्य है तेहि की बंदना करते हैं देखिये जो रामजी के राम ऐसा नाम मुख्य नहीं होते तो इन्हके नाम अनेक हैं अनूप हैं ऐसा कहके पुनः राम अस नाम क्यों कहते इससे जान पड़ता है कि रामनाम ही भगवत् का प्रधान नाम है इसमें संदेह करना वृथा है इसी प्रकार से (पंपासर) पर नारदजी ने कहा है। यथा—(जद्यपि प्रभु के नाम अनेका) श्रुति कह अधिक एकते एका॥ राम सकल नामन्ह ते अधिका) इत्यादि कहा है इससे राम रघुबर का रामनाम ही मुख्य है और सब नामसे बड़ा है। पुनः (इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनः श्रुतः) इत्यादि बाल्मीकीयरामायण में भी राम ही नाम प्रसिद्ध कहा है इससे राम रघुवरका जो मुख्य रामनाम है उसी की बंदना गोस्वामी जी करते हैं दूसरे नामकी बंदना नहीं करते हैं। (प्रश्न) हेस्वामी जी, सब नामको छोड करके बलराम नामही की बंदना क्यों की उत्तर) हे शिष्य,

इसका हेतु तो हमने पूर्वही में कहा कि रामनाम के समान दूसरा नाम कोई नहीं है रामनाम सब नाम का आत्मा है सब नाम का कारण है सर्व नाम का प्रकाशक है प्रधान एक रामनाम है इससे मुख्य जानिके बंदना की मुख्यकी वंदनासे सबकी वंदना पूजन होजाती है जैसाकि गोस्वामीजी ने कहा है कि एक साधे सब सधे सब साधे सब जाइ ॥ जो कोई सींचे मूलको डारपात हरिआइ इत्यादि कहा है इससे रामनाम के जपने से सबका जाप होचुका रामजीके पूजन से सबका पूजन होगया रामानामकी वंदना करने से सबकी वंदना जान लेना इससे रामनामकी वंदनाकी (प्रश्न) हेस्वामीजी, राम रघुवर कहनेका और भी कुछ आशय हो तो कहिये (उत्तर—) हे शिष्य, दूसरा हेतु यह है कि श्रीगोस्वामी जी तो बाल्मीकि जी के अवतार हैं सो प्रथमही में कहि आये हैं सो जैसे वाल्मीकि जी ने रामायण में सर्वत्र दशरथात्मजरघुवर रघुनाथ इक्ष्वाकूनन्दन महाबाहु धर्मात्मा नरश्रेष्ठ पुरुषोत्तम इत्यादि कहके रामजी को वर्णन किया है सोई अभिप्राय यहां गोस्वामी जी का है । हे शिष्य, वाल्मीकीयरामायण के युद्धकाण्ड में जब रामजी ने श्रीजानकीजी को कुबाक्य कहा तब महारानीजी अग्नि में प्रवेश करने लगीं उससमय में इन्द्र, वरुण, कुवेर, लोकपाल, यमराज, महादेवजी इत्यादि सबको साथ में लेके सम्पूर्ण लोकों के कर्त्ता वेदवक्ताओं में श्रेष्ठ ब्रह्माजी आये और श्रीरामजी के आश्चर्य्य लीला को देखिके ब्रह्माजी बोले कि आप तो सब लोकों के कर्ता हैं ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं अष्ठवसुमें ऋतधामा आपही हैं रुद्रों में आठवां रुद्र आप ही हैं चन्द्र सूर्य आपके नेत्र हैं सबके आदि अंत आपही हैं आप प्राकृत मनुष्य के समान क्यों जानकीजी को त्यागते हैं जो जानकीजी अग्नि में गिरती हैं यह वचन सुनके रामजीने विचार किया कि जिस ऐश्वर्य को मैंने आज पर्य्यंत छिपाके मनुष्य लीला की और कर रहा हूँ उसी ऐश्वर्य्य को बेदवक्ता ब्रह्माजी प्रकट करते हैं सो ठीक नहीं ऐसा विचारिके अपने ऐश्वर्य्य को छिपाने के लिये रामजी बीच ही में बोले यथा—

आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ।
योहं यस्य यतश्चाहं भगवांस्तद्ब्रवीतुमे ॥ १५ ॥

अर्थ—श्रीरामजी बोले कि मैं अपने आत्माको मनुष्य करके मानता हूँ तब ब्रह्माजी बोले कि मनुष्यमें कौन रूपकी आत्माको मानते हैं आप आप के मनुष्य अवतार बहुत हैं तिनमें कौन आत्मा को आप मानते हैं तो रामजी बोले कि (रामं) अर्थात् रामरूप मनुष्यात्मा को मानता हूँ। तव पुनः—ब्रह्माजी बोले कि राम रूप में भी तो आपके तीन रूप हैं अर्थात् परशुराम, राम, बलराम तिनमें कौन हैं तब रामजी बोले कि (दशरथात्मजम्) अर्थात् दशरथ के पुत्र रामरूप मनुष्यात्मको मैं मानता हूँ तब ब्रह्माजी बोले कि जब आप अपनी आत्माको मनुष्यकरके मानते हैं तो हम अब आपको क्या कहैं तब रामजी बोले कि मैं जो हौं जहां से जिस वास्ते आया हूँ। वह आप कहिये तब ब्रह्माजी की आज्ञा पाके स्तुति की। हेशिष्य, यह बचन रामायणमें बड़ा विलक्षण है इसी सब बचन के अनुकूल गोस्वामीजी ने कहा है अर्थात् वहां वाल्मीकीय रामायण में (आत्मानं मानुषं मन्ये) इहां गोस्वामीजी (वन्दौं नाम) वहां (रामं) इहां (राम) वहां (दशरथात्मजम्) इहां (रघुवर को इस प्रकार का सिद्धांत है इससे राम रघुवर कहां केवल राम नहीं कहा काहे से कि केवल राम कहने में दो बातका भ्रम होता एक तो यह भ्रम होता है कि तीन राम में कौन राम के नामकी वंदना की है दूसरा यह भ्रम होता कि दशरथात्मज ही रामके नाम वंदे कि और कोई दूसरा राम नाम है इन दोनों भ्रमों को मिटानेके वास्ते रघुबर कहा। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, तीन राम तो प्रसिद्ध ही हैं चौथा राम कौन हैं जो भ्रम होता सो कृपा करके कहिये (उत्तर—) हेशिष्य, चौथा राम कोई भी नहीं हैं केवल रामनाम को कबीरादिक ने भिन्न माना है उनके मत से राम दूसरा है ऐसा कबीरजी ने अपने ग्रन्थ में सर्वत्र कहा है और भी सबका मत है कि रामनामही निर्गुण है नाम ही ज्योतिरूप है नाम ही निराकार है नाम ही परब्रह्म है नाम ही सबका आदि मध्यांत है नाम ही सर्व व्यापक हैं नाम ही से सब संसार होते हैं नाम ही में प्रवेश करते हैं नाम ही से वेदपुराण शास्त्र सब भये हैं नाम ही को ब्रह्मा, विष्णु, शिव जपते हैं नाम ही को चौबीसावतार जपते हैं नाम ही सगुण निर्गुण हैं नाम ही से विष्णुनारायण विराटादिक हैं नाम ही से सर्वावतार होते हैं नाम ही सबका आदिकारण है नाम ही से देवि दुर्गादि सर्वशक्तियां भई हैं नाम ही को देवि, दुर्गा, काली, सरस्वती, पार्वती. सब शक्तियां जपती हैं नाम ही से चन्द्र, सूर्य, अग्नि इत्यादि

भये हैं नाम ही से ज्ञान, वैराग्य, योग, यज्ञ, जप, जप, व्रत, नेम, संयम, कर्म, धर्म्मादिक सब भये हैं नाम ही अव्यक्त अनिर्वचनीय हैं नाम ही दृश्यादृश्य सब का कारण है हेशिष्य, कहाँ तक कहैं जो कुछ है सो सब नाम ही है यहि सिद्धांत सबका है सो प्रथम ही में कह आये हैं और यहि सिद्धांत गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी का है सो एहि नाम बंदना की नवो दोहा में विस्तार से कहा है परंतु एहि रघुवर ही रामका नाम है दूसरे का नहीं काहेसे कि गोस्वामीजी वाल्मीकिजी के अवतार हैं इस से अवतार पक्ष नहीं छोड़ते हैं और दूसरे गोस्वामीजी के मत से दूसरा रामजी नहीं हैं सो यह बात पार्वतीजी के प्रश्न ही में प्रसिद्ध है। यथा (राम सो अवध नृपति सुत सोई। की अज अगुन अलख गति कोई) इत्यादि कहा सो शिव जीको अच्छी नहीं लगी और बोले कि (एक बात नहिं मोहिं सोहानी। जदपि मोह बस कहेहु भवानी ॥ तुम्ह जो कहा राम कोउ आना। जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना ॥ कहहिं सुनहिं अस अधम नर ग्रसे जे मोह पिशाच। पाखंडी हरिपद विमुख जानहिं झूठ न साँच इत्यादि) बहुत कहा है इससे दूसरा राम हैं ऐसा जो कहे सो पाखण्डी है भगवत् से विमुख है इससे रघुवर कहा भाव वह निर्गुण निराकार नामराम ही रघुवर का नाम है इसीसे गोस्वामीजी जहां २ ऐश्वर्य्य निर्गुण कहते हैं तहां २ रघुवर दशरथ सुत अवश्य कहते हैं। यथा (रामसच्चिदानंद दिनेशा। नहिं-तहँ मोह निशा लवलेशा ॥ सहज प्रकाश रूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि विज्ञान विहाना ॥ हरष विषाद ज्ञान अज्ञाना। जीव धरम अहमिति अभिमाना ॥ राम ब्रह्म व्यापक जगजाना। परमानन्द परेश पुराना ॥

दोहा—पुरुष प्रसिद्ध प्रकाशनिधि प्रकट परावर नाम।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ कहि शिव नायेउ माथ॥

इति रघुकुल मणि मम स्वामिसोइ, पुनः--आदि अन्त कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा ॥ बिनु पद चलै सुनै बिनु काना। कर बिनु करम करै विधि नाना ॥ आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी बक्ता बड़ जोगी ॥ तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहै घ्रान बिनु वास अशेषा ॥ अस सब भांति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥

दोहा—जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।

सोइ दशरथसुत भगत हित, कोशलपति भगवान॥

इति सोई दशरथसुत कोशलपति भगवान् इत्यादि बहुत कहा है इससे रघुबर कहा और दूसरा अभिप्राय नहीं है इसी बात को गोस्वामीजी ने पूर्व में भी कहा है कि (एहि महुँ रघुपति नाम उदारा इत्यादि ॥) सो एहि रघुपति के उदार नाम हैं दूसरा नहीं इसीसे वहां भी रघुपति कहा है अब इहां से अति उदार के स्वरूप कहते हैं और अति पावन पुराण श्रुति के सार कहते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि वह रघुवर रामकानाम कैसा है कि कृशानु जो अग्नि है और भानु जो सूर्य्य हैं और हिमकर जो चन्द्रमा है तेहि को हेतु नामकारण है अर्थात् रकार कृशानु बीज है और मध्याकार भानु बीज है और मकार चन्द्रमा का बीज है। यथा प्रमाण—

रकारोनलबीजं स्याद्ये सर्वे वडवादयः।
कृत्वा मनोमलं सर्वं भस्मकर्मशुभाशुभम् ॥ १६६ ॥
अकारो भानुबीजं स्याद्वेदशास्त्रप्रकाशकः।
नाशयत्येव सा दीप्त्या या विद्या हृदयेतमः ॥१७५॥
मकारश्चन्द्रवीजञ्च पीयूषपरिपूर्णकम्।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥१७८॥
रकारहेतुर्वैराग्यं परमं यच्च कथ्यवे।
अकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुकम् ॥१६६॥
रकारो योगिनां ध्येयो गच्छन्ति परमं पदम्।
अकारो ज्ञानिनां ध्येयस्ते सर्वे मोक्षरूपिणः॥१७०॥
पूर्णं नाममुदादासा ध्यायन्त्यचलमानसाः।
प्राप्नुवन्ति परां भक्तिं श्रीरामस्य समीपकम् ॥१७१

अर्थ-महारामायण में शिवजीने पार्ववतीजी से कहा है कि जितनी बडवाऽनलादिक अग्नि हैं सबका बीज (र) है जो सम्पूर्ण मनोमल को और शुभाशुभ

कर्म को भस्म करिके निर्मल कर देता है॥ और अकार जो है अर्थात् (ा) यह अकार सूर्य्य का बीज है जो सम्पूर्ण अविद्यारूपी अंधकार हृदय का नाश करके बेद शास्त्र रूप ज्ञान को प्रकाश करदेता है इसी से सूर्य्य भगवान् बड़े द्विवान् हैं इसीसे हनुमानजी को विद्या पढाया है सो बाल्मीकीय में प्रसिद्ध है और मकार चन्द्रमा का बीज है जो अमृत करके परिपूर्ण है जो मकार दैहिक दैविक भौतिक तीनों तापों को हर लेते हैं और नित्य शांति रूप शीतलता को करते हैं॥ रकार परमवैराग्यका कारण कहा है और अकार ज्ञान का कारण है मकार भक्ति का कारण कहा है। रकार को योगी लोग ध्यान करके परम पद जाते हैं और अकारको ज्ञानी लोग ध्यान करते हैं ते सर्व मोक्षरूप होजाते हैं॥ पूर्ण रामनाम को दास लोग ध्यान जप करते हैं और रामजी के परा प्रेमाभक्ति और रामसमीपता को प्राप्त होते हैं इत्यादि बहुत कहा है। हे शिष्य, यह प्रमाण महारामायण का है। देखो ! श्रीमहारामायण कैसा अपूर्व ग्रन्थ है इसी प्रकार के लक्ष (श्लोक हैं भला कहो तो कहां महारामायण अपूर्व ग्रन्थ और पाखंडी कृत [योगवाशिष्ठ] को महारामायण कहते हैं । हे शिष्य, इससे रामनाम अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा तीनों के बीज हैं और जैसे रामनाम में तीन अक्षर हैं अर्थात् [र, ा, म] वैसे ही क्रमशः तीनों कार्य्य में भी हैं। यथा [कृ] में रकार है [भा] में अकार है [हिमकर] में मकार है इस प्रकार से तीनों अक्षर तीनों के हेतु हैं भाव विना रामनामके तीनों प्रकाशशक्ति करके हीन होजावें। हे शिष्य, इहां गोस्वामीजी प्रथम सृष्टिका का कारण करके रामनाम को वर्णन करते हैं काहेसे कि प्रथम संसारमें सृष्टिही मुख्य है पीछे मोक्षका हेतु कहैंगे। (प्रश्न) हे स्वामी जी, कृशानु भानु हिम करके हेतु रामनाम को कहने से सृष्टिका हेतु नाम कैसे भया। दूसरा कारण जो है सो कार्य्य में लीन होजाता है। पुनः रामनाम कैसेरहा सो कहिये। [उत्तर) हे शिष्य, तुम्हारा कहना बिलकुल शास्त्र से विरुद्ध है काहे से कि रामनाम समर्थ ईश्वर हैं रामनाम में बीज वृक्ष न्याय पारस लोह न्याय नहीं समझना चाहिये इसमें तो केवल इच्छानुकूल ही जानना चाहिये। यह गुण तो प्राकृत वस्तु में है कि कारण कार्य्य में लीन होजाता है सो नाममें नहीं है और सृष्टिका हेतु जो रामनाम को कहा सो इसप्रकार से है कि लोक वेदमें प्रधान यज्ञ है और यज्ञ में मुख्य अग्नि हैं अग्नि में हवन करने से सूर्य्य के पास पहुँचता है

सूर्य्य अपनी किरण से जलको शोषण करके पृथ्वीपर वर्षाते हैं और जलसे अन्न होता है अन्न से प्रजा होती हैं यथा प्रमाण—

मनुस्मृतिः।

अग्नौ प्रस्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठति।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥ ३७२॥

अर्थ-अग्निके सम्पूर्ण हवनजो हैं सो सूर्यके पास पहुंचते हैं आदित्यसे वृष्टि होती है तिससे प्रजा होतीहैं इत्यादि वेदशास्त्र का प्रमाणहै कि यह जीव कर्मवश होके परलोक का शुभाशुभ कर्म्म भोगकर प्रथम चन्द्र मण्डलमें आताहै। चन्द्रमा अपनो अमृत किरणसे जीव को अन्नादिमें बर्षाते हैं तिससे जीव सबहोते हैं इससे हेशिष्य, अग्नि सूर्य्य चंद्रमा तीनों सृष्टिके हेतुहैं और यही तीनों सर्वकर्म के साक्षी भीहैं विना इनतीनोंके कोई कर्म भी नहीं होसकता है यह बात सबको प्रसिद्ध है [प्रश्न] हे स्वामीजी, गोस्वामीजीने प्रथमही हेतु कृशानु भानु हिम करको क्यों कहा प्रथमतो विधि हरिहरमय वेद प्रान सो कहना रहाकाहेसे कि त्रिदेव और त्रिवेद यहतो सबकेआदिहैं और संसार की भी रचना इन्हीं तीनों ने की है तथा चन्द्र सूर्यादि की भी रचना की है इनको छोडके अग्नि सूर्य चन्द्रमा को प्रथम क्यों कहा सो कहिये। [उत्तर] हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि व्रह्मा, बिष्णु, शिव मुख्य हैं सही परंतु लोकमें प्रसिद्ध नहीं हैं केवल ज्ञाता लोग जानते हैं दूसरे इन सबका उत्पति पालन संहार कर्म भी सबको नहीं देखपरता है और न इन तीनों का प्रसिद्ध रूपही तेज देख परता है इससे प्रथम नहीं कहा ओर अग्नि सूर्य चन्द्रमा सबको प्रसिद्ध देख परते हैं और इन के तेज कर्म शक्तिभी सब सामान्य जीव को देखपड़ते हैं इससे प्रथम कहा अथवा रामनाम का तेज शक्ति महत्व दिखानेके लिये कहाकि जिसमें सब कोई जान लेवें कि जब अग्नि सूर्य चन्द्रमा में ऐसा प्रताप तेज शक्ति है तो राम नाम में न जानै कैसा तेज प्रताप शक्ति है इससे रामनाम सर्वोपरि है और भजने योग्य है इस विश्वास के लिये प्रथम कहा और कृशानु भानु के अंतमें जो हिमकर कहा इससे यह उपदेशार्थ दिखाया कि कृशानु भानु उष्ण हो चन्द्रमा शीतल है भाव रकार अग्नि के समान है अकार सूर्य्य के समान है

मकार चन्द्रमा के समान शीतलहै इससे केवल रकार अकार नहीं जपना चाहिये मकारभी जपना चाहिये भाव पूर्ण रामनामजपने ही से शांति होती है नहीं तो अग्नि सर्य के समान अन्तःकरण तपा करेगा और राम नाम के तीनों अक्षर क्रमशः कहे जैसे कि प्रथम रकार तब अकार पीछे मकार तैसेही प्रथम अग्नि भया है तब सूर्य्य भया है पीछे चंद्रमा भया है इससे क्रमसे कहा है दूसरा यह भी दिखाया कि राम रघुवर का जो रामनाम है सो तीन अक्षर का है और परशुरामजी का पंचाक्षरी नाम है। यथा [राममंत्र लघु नाम हमारा। परशुसहित बड़ नाम तुम्हारा] इत्यादि कहा है पुनः तैसेही बलरामजीका भी चार अक्षर का नाम है ताते यथार्थ रामनाम नहीं है नामधारी नाम है इससे जहां कहीं शास्त्र में रामनाम का माहात्म्य कहा है तहां रामही रघुवर का नाम जानना चाहिये परशुराम, बलराम नामका नहीं काहे से कि रामनाम अनादि है और सब नामधारी हैं इससे रघुवर कहा। हेशिष्य, कहां तक कहैं इन सब चौपाइयों का अभिप्राय अगाध है बिना गोस्वामीजी की कृपा भये जानना दुर्लभ है काहे से कि गोस्वामी जी ने मानसप्रसंग में कहा है कि (जे गावहिं यह चरित सँभारे॥ तेइ यहि ताल चतुर रखवारे) इत्यादि कहा है इससे रामायण को बहुत सँभारि के कहना चाहिए (प्रश्न) हे स्वामीजी, सँभारना क्या सो कहिए (उत्तर) हे शिष्य, संभारना दो बात है एक तो पाठ को पाठान्तर नहीं करना। दूसरा अर्थ का अनर्थ नहीं करना इस बात को जो बिचारि के गावे सो पूरा रामायणीय है और पाठ को बदल दिया अर्थ का अनर्थ किया अथवा ऊपर से बनाय के क्षेपक धर देना यह सब नरक में जाने वाले पुरुष हैं यह बात सत्य २ करके जानना हे शिष्य, जैसे राम रघुबर के नाम तीन अक्षरयुक्त तीनहू के कारण हैं तैसेही श्रीसीतानाम को भी जानना चाहिए काहे से कि युगलस्वरूप एक ही हैं ॥ १ ॥

2 मूल-विधि हरिहर मय वेद प्रानसो। अगुन अनूपम गुन निधानसो

अर्थ—पुनः वह राम रघुबर को सो रामनाम तीनों अक्षरयुक्त कैसा है कि विधि जो ब्रह्मा हैं और हरि जो बिष्णु भगवान् हैं और हर जो शिवजी हैं तिनमय हैं भाव तीनों अक्षर त्रिदेवमय हैं मय नाम परिपूर्ण मानों तीनों अक्षर ही स्वयं तीनों स्वरूपों को धारण किये हैं इससे मय कहा, अर्थात् अकार से

सत्वगुणधारी बिष्णु भगवान् भए हैं जो संपूर्ण संसार के पालन करते हैं और उकार से ब्रह्मा जी भए हैं जो रजोगुण को धारण करके संसारकी उत्पत्ति करते है और मकार से तमोगुणधारी शिवजी भए हैं जो सम्पूर्ण संसार का नाश करते हैं। हे शिष्य, इहां गोस्वामी जी ने रामनाम को प्रणवरूप करके त्रिदेवमय कहा है पुनः राम रघुबर का सो रामनाम तीनों अक्षरयुक्त कैसे हैं कि त्रिवेद का प्राण हैं। भाव अकार सामवेद का प्राण है उकार ऋग्वेद का प्राण है मकार यजुर्वेद का प्राण है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, वेद तोनही है कि चार (उत्तर) हे शिष्य, प्रधान तीनही वेद है। यथा (वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक् साम यजुरेवच) इत्यादि ओंकार को जानो जो ऋग्वेद सामवेद यजुर्वेद के प्राण हैं यह गीता में कहा है। पुनः (मनुस्मृति-दुदोह यज्ञसिद्धयर्थमृग्यजु साम लक्षणम्) जिस परमात्माने यज्ञ सिद्धि अर्थ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद प्रकट किया इत्यादि—सर्वत्र कहा है इससे तीनही वेद पढ़ने में है चौथा वेद अथर्वण है इससे वेदका प्राण रामनाम प्रणवरूप है। (प्रश्न) हेस्वामी जी, ओंकारकी सिद्धि नाम से कैसे होतो है सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, शास्त्र के प्रमाण से तो रामनाम से ओंकार हुआ है सो तो प्रथमही सुना दिया है। अब रामनाम से प्रणव की सिद्धि सुनो। यथा (राम ऐसा पद है तहां रकार और अकार को वर्ण विपर्य्यय भया तो अरम ऐसा पद भया (रो विसर्गः सकाररेफयोर्विसर्जनीया देशो भवति) अःम ऐसा भया है (अकारातपरस्य विसर्जनीयस्य उकारो भवति) ऐसा होने पर अ उ म ऐसा भया उ ओ अवर्ण उवर्णे परे सह ओ भवति ओम् ऐसा भया ("मोनुस्वारः"-मकारस्यानुस्वारो भवति ओं सिद्ध भया) हे शिष्य, इस प्रकार से रामनाम से ॐकार सिद्ध होता है एहि ओंकार सबका कारण है और एकाक्षर ब्रह्म कहा जाता है बिना इसके कुछ भी नहीं सिद्ध होता है इससे वेदका प्राण कहा प्राण कहने का भाव यह हैं कि बिना रामनाम का वेद मृत्यु तुल्य है वेद का भी जीवन नाम ही है इससे रामनाम सबका सार है इहां पूर्वोक्त वचन सिद्ध होगया (कि एहि महुँ रघुपति नाम उदारा। अतिपावन पुराणश्रुति सारा॥) इत्यादि कहा है एहि से वेद प्राण कहा (प्रश्न) हे स्वामी जी, कृशानु भानु हिमकर का हेतु क्यों कहा और त्रिदेवमय क्यों कहा और शास्त्रादि का प्राण क्यों नहीं कहा केवल वेद ही का प्राण क्यों कहा सो कृपा करके कहिए (उत्तर) हे शिष्य, त्रिदेव स्वयंभू हैं और भगवद्रूपही हैं इससे परिपूर्ण कहा

और अग्नि सूर्यादिक जो हैं सो स्वयंभू नहीं हैं इससे कारण मात्र कहा और वेदका प्राण इससे कहा कि वेद सब शास्त्रपुराणादि के मूल हैं इससे कहा है। हे शिष्य, इहां पर्य्यंत रामनाम को सृष्टि का कारण कहा और रामनाम को त्रिगुणमय कहा (प्रश्न) हेस्वामी जी, रामनाम को गुणमय कहा सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, त्रिगुणमय इस प्रकारसे कहा कि अग्नि सूर्य चंद्रमा यह तीनों त्रिगुणमय हैं और विधि हरिहर भी त्रिगुणमय हैं। यथा प्रमाण महा रामायणे शिव उवाच—

अकारः प्रणवे सत्त्वमुकारश्च रजोगुणः॥
तमो हल मकारः स्यात्त्रयोहंकारस्समुद्भवः॥ १७३॥
प्रिये भगवतो रूपे त्रिविधो जायतेऽपि च॥
विष्णुर्विधिरहं चैव त्रयो गुणविधारिणः॥ १७४॥

अर्थ—प्रणव के अकार से सतोगुण उत्पन्न होते हैं उकार से रजोगुण होते हैं हलन्त मकार से तमोगुण हैं इस प्रकार से तीनों अहंकार प्रकट भये हैं हे प्रिये, भगवत्रूप रामनाम से तीन प्रकारके उत्पन्न भये हैं विष्णु भगवान् ब्रह्माजी और मैं तीनों गुण के धारण करने वाले हैं इस प्रकार से बहुत कहा है इससे तीनों देव त्रिगुणात्मक हैं और वेद भी त्रिगुणात्मकही हैं यथा। (त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवाऽर्जुन इति गीतायाम्) अर्थात् ऋग्वेद रजोगुणी है इसके देवता ब्रह्माजी रजोगुणी हैं इसवेदके भूः नाम व्याहृति है गायत्री छन्द है अत्रि ऋषि हैं रक्तवर्ण है इस ऋग्वेद का फल स्वर्ग है इसमें प्रधान ब्रह्माजी हैं और रजोगुणी देवता अग्नि सूर्य्य चन्द्रमा इन्द्रादि का वर्णन है इस वेदमें ईश्वरको यज्ञरूप करके कहा है। इस वेदके विभाग विस्तार राजसी ६ पुराण हैं। यथा (पद्मपुराणे—)

ब्रह्माण्डं ब्रह्मवैवर्तं मार्कण्डेयं तथैव च।
भविष्यं वामनं ब्राह्मं राजसानि निबोध मे॥ १७५॥
मानवं याज्ञवल्क्यं च आत्रेयं दाक्ष्यमेव च॥
कात्यायनं वैष्णवं च राजसाः स्वर्गदाः शुभाः॥१७६॥

अर्थ—शिवजीने पार्वती से कहा है कि [ब्रह्माण्ड पुराण, ब्रह्मवैवर्त्त पुराण, मार्कण्डेयपुराण) तैसेही [भविष्यपुराण, वामन पुराण] यह ६ पुराण राजसी जानना और [मनुस्मृति १, याज्ञवल्क्यस्मृति २, अत्रिस्मृति ३, दक्षस्मृति ४, विष्णुस्मृति ५, कात्यायनस्मृति ६] यह छः स्मृति राजसी स्वर्ग की देने वाली हैं इसमें रजोगुणी देवता की बड़ाई है। हे शिष्य, ऋग्वेद के और पुराणस्मृति के अधिकारी क्षत्रिय हैं इसके अधिकारी स्वर्गलोक जाते हैं पीछे पुण्यक्षीण होने से संसार में गिरते हैं। और सामवेद सतोगुणी है इस वेदके देवता सतोगुणी श्रीविष्णु भगवान् हैं इस वेद में प्रधान सत्त्वगुण वर्णन है इसीसे भगवत्ने गीता में कहा है कि [वेदानां सामवेदोऽस्मि] अर्थात् वेदों में सामवेद मैं ही हूँ इत्यादि कहा है इससे इसमें केवल भगवत् को ही कहा है इस सामवेद के स्वः व्याहृति है जगती छन्द है कश्यप ऋषि गोत्र है शुद्ध शुक्लवर्ण है इस वेद के विस्तार विभाग ६ पुराण सात्विक हैं और ६ सात्विक स्मृतियां हैं यथा। पद्मपुराणे—

वैष्णवं नारदीयं च तथा भागवतं शुभम् ॥
गारुडं च तथा पद्मं वाराहं शुभदर्शने ॥ १७६ ॥
षडेतानि पुराणानि सात्त्विकानि मतानि मे ॥
वाशिष्ठं चैव हारीतं व्यासं पाराशरं तथा ॥ १७७ ॥
भारद्वाजं काश्यपं च सात्विका मोक्षदाः शुभाः ॥

अर्थ-शिवजी बोले कि [विष्णुपुराण १, नारदीयपुराण २, भागवत पुराण ३, गरुणपुराण ४, पद्मपुराणोत्तरखण्ड ५, वाराहपुराण ६] यह छः पुराण हे शुभदर्शने सात्विक मतमें जानना और (वाशिष्ठस्मृति १, हारीत-स्मृति २, व्यासस्मृति ३, पाराशरस्मृति ४, भारद्वाजस्मृति ५, कश्यपस्मृति ६) यह छः स्मृति सात्विक मतमें शुभदायक मोक्षकी देने वाली हैं और यजुर्वेद तमोगुणी है। इसके देवता श्रीशिवजी हैं इस वेद की भूवः व्याहृति है। श्रीभरद्वाजजी ऋषि और गोत्र हैं। त्रिष्टुप्छन्द है। पीतवर्ण है। इसबेद में तमोगुणी देवताशिव शक्ति गणेशादिकी प्रशंसा लिखी है। इस वेदके अधिकारी वैश्य है। इसके अधिकारी प्रायः अधो गति जाते हैं। इस वेद के विभाग तामसी छे पुराण और छेस्मृतियाँ हैं यथा पाद्मोत्तरे।

मात्स्यं कौर्म्मं तथा लैंगं शैवं स्कान्दं तथैवच।
आग्नेयंच षडेतानि तामसानि निबोधमे॥
तथैव स्मृतयः प्रोक्ता ऋषिभिस्त्रि गुणान्वितः।
गौतमं बार्हस्पत्यंच सांवर्तं च यमंस्मृतम्॥
सांख्यं चौशनसं देवि तामसानिरयः प्रदाः।
सात्विकामोक्षदाः प्रोक्ता राजसाः स्वर्गदाः शुभाः॥
तथैवतामसा देवि निरय प्राप्तिहेतवः॥

अर्थात् मत्स्य पुराण, कूर्मपुराण, स्कान्दपुराण, और शिवपुराण, अग्नि पुराण, यह छे पुराण तामसी मत के हैं। एवं स्मृति भी ऋषियों ने त्रिगुणत्मि का कहाँ है। उसमें गातमस्मृति, बृहस्पति स्मृति, सांवर्तस्मृति, यमस्मृति, सांख्यस्मृति, और उशनस्मृति यह छे स्मृतियाँ नरक के देनेवाली तामसी हैं।

सात्विक पुराण और स्मृति सब मोक्ष के देने वाली हैं। राजस पुराण स्मृति स्वर्ग के देने वाले हैं उसी प्रकार से तामसी पुराणादिक नरक के देने वाले हैं। इससे कल्याण चाहनेवाले को सात्विक ही स्वीकार करना चाहिए। जिन सज्जनों की सात्विक, राजस, और तामस का पूर्ण विचार देखना हो, सो "बैष्णव धर्मदिवाकर" देखें अथवा मत्स्य पुराण के अंतिमाध्याय देखें नहीं तो पाद्मोत्तर खण्ड देखें विस्तार से वर्णन है। ग्रंथ विस्तार होने के भय से नहीं लिखा है।

[प्रश्न] हे स्वामीजी श्रीरामनाम का माहात्म्य कुछ और कहिए क्यों कि सुनने की बड़ी इच्छा है।

(उत्तर) हे शिष्य श्रीरामनाम के समान भगवत्के कोई भी नाम नहीं हो सकते हैं इसमें संदेह करना वृथा है। यथा श्री प्रेम रामायणे श्री ब्रह्मो वाच नारदं प्रति।

असंख्य कोटिनामानि नैव साम्यं प्रयान्ति च।
खद्योतराशयो यान्ति रवेः सादृश्यतां कथम्॥१९०॥

अर्थ—असंख्यकोटि भगवन्नाम श्रीरामनाम की समता को कैसे पहुंच सकते हैं जैसे कि असंख्या जुगुनू सूर्य्य की समानता को नहीं प्राप्त हो सकते हैं इत्यादि कहा है। पुनः [राका रजनी भगति तव रामनाम सोइ सोम। अपर नाम उडुगन विमल बसहु भगत उर व्योम॥ पुनः (निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहै। जिमि कोटिसत खद्योत सम रवि कहत अति लघुता लहै॥ इत्यादि वहुत कहा है इससे रामनाम के समान रामही नाम है रामरूप के समान रामही रूप है, रामलीलाके समान राम ही लीला है, रामधाम के समान राम ही धाम है इन सबके समान दूसरा नाम रूप लीला धामकी उपमा देवे तो वह पुरुष मूर्ख है और तत्त्व से विमुख जानना, विशेष देखना हो तो विश्वंभर उपनिषत् देखो। पुनः वह रामनाम कैसा है कि गुणों का निधान नाम स्थान है। हे शिष्य, इहां मायाकृत गुण के स्थान नहीं जानना काहे से कि मायाकृत गुण से तो प्रथमही अगुण कहा है तो पुनः गुणनिधान कैसे कहेंगे इससे इहां भगवताश्रित दिव्यगुणों का स्थान जानना चाहिये। इहां पर्य्यन्त गोस्वामीजी ने रामनाम तीनों अक्षरोंको वर्णन किया और सृष्टि का हेतु दिखाकर अन्तमें अगुण अनूपम गुणनिधान कहिके तीनों अक्षरों का मैयत्री समाप्त की; और उपदेशार्थ यह दिखाया कि अग्निसे सूर्यसे चंद्रमासे ब्रह्मासे विष्णुसे शिवसे तीनों वेदसे रामनाम ही बड़ा है और सबका सार है इससे इन नवोंकी उपासना छोड़कर राम नामही जपना चाहिये (प्रश्न—) हे स्वामीजी, इहां गोस्वामी जीने सृष्टिको हेतु मुख्य नवही वस्तु कहा है। अर्थात् अग्नि १,भानु २,चन्द्रमा ३, ब्रह्मा ४, विष्णु ५, शिव ६, ऋग्वेद ७, सामवेद ८, यजुर्वेद ९, यह नौ वस्तु कहा है सो क्यों। इसका हेतु कृपाकरके कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, इसका अभिप्राय यह है, कि रामनाम नवो अङ्क हैं सो प्रथमही कह आये हैं इस कारण से नौ वस्तु का कारण रामनामको कहा और इसीसे नव दोहा पर्य्यन्तनामकी वंदना का है काहेसे कि संसार की स्थिति नवही करके है जैसे कि अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, न हो तो कोई भी कृत्य नहीं होसकता है और ब्रह्मा, विष्णु, शिव, न हों तो संसार की उत्पत्ति, पालन, संहार कौन करे और कल्पांत में श्रुति, स्मृति का निर्णय कौन करके धर्मस्थान करे और वेदत्रयी न हो तो वर्णाश्रम का धर्म कैसे हो इसमें नवही मुख्य संसार का हेतु है। हे शिष्य,

इससे नौ बस्तु का कारण रामनाम को कहा और रकार ब्रह्म है अर्थात् श्रीराम परब्रह्मका स्वरूप है इससे अगुण कहा और अकार श्रीसीताजी का रूप है इससे अनूपम कहा काहेसे कि महारानी श्रीजानकीजी अनूपही हैं और मकार लक्ष्मणजी का स्वरूप है इससे गुणनिधान कहा काहेसे कि संपूर्ण लक्षणों के धाम हों सो कहिये लक्ष्मण । ।यथा (लक्षण धाम रामप्रिय) इत्यादि नाम-कारण में कहा है हे शिष्य, रामनाम में जो तीन अक्षर है उसका अर्थ है, इसीसे अगुण अनूप गुणनिधान तीन विशेषण दिये और तीनों अक्षरों की मयत्री पूर्ण की ऐसेही श्रीसीतानाम जानना चाहिये ॥ २ ॥

3 **मूल–महामंत्र जोइ जपत महेसू । कासीं मुकुति हेतु उपदेसू ॥**

अर्थ—अब श्रीगोस्वामीजी श्रीरामनाम को षडक्षर महामंत्र करके वर्णन करते हैं और मोक्ष का भी हेतु वर्णन करते हैं और मुख्य २ जापकों के द्वारा नामका माहात्म्य भी कहते है कि जिसमें ऐसा कोई न जाने की रामनाम केवल सृष्टिही का हेतु है मोक्षके लिये नहीं सो मोक्षके कारण भी दिखाते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि जोइ रामरघुवर को रामनाम महामंत्र को महेश जो हैं श्रीशिवजी सो आज पर्यन्त जपते हैं जोइ कहने का भाव यह है कि दूसरा महामंत्र नहीं वही रामनाम जो पूर्वोक्त नव वस्तुवों का कारण है और अगुण अनूपम गुणनिधान हैं जोइ रामनाम महामंत्र अर्थात् षडक्षर रामतारक मंत्रको जपते हैं इससे जोइ कहा और महामंत्र कहिके षडक्षर सूचित कियाकि राम नाम ही षडक्षर है । यथा रेफ १, रकारका अकार २, दीर्घ अकार ३, यह तीन अक्षर (रा) में है और अनुस्वार १, हलमकार २, मकारका अकार ३, यह तीन अक्षर (म) में है इससे राम नाम ही षडक्षर महामंत्र है सो आगे विस्तार पूर्वक कहेंगे इससे महामंत्र कहा । दूसरा हेतु यह है कि और जितने मंत्र हैं सो सब चित्तको भ्रांतिकारक हैं और राम नाम जो है सो महामंत्र है सब से परे है । यथा—

सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रमकारकः ।
एष एव परो मंत्रः श्रीरामेत्यक्षरद्वयम् ॥१६१॥

अर्थ—वृद्धमनुस्मृति में शिवजीने कहा है कि मेरा कृत जो वशीकरण, उच्चाटन, मोहन, मारण सौ कोटि महामंत्र है सो चित्त को विभ्रम करनेवाला है और राम ऐसा दो अक्षर जो है सो सबसे परे मंत्र है इससे श्रेष्ठ मंत्र दूसरा नहीं है इससे महामंत्र कहा। भाव-और सब मंत्र है रामनाम महामंत्र है इससे महामंत्र कहा काहे से कि महामंत्र नहीं होता तो महेश जो सब देवन में महादेव शिवजी हैं सो क्यों जपते दूसरे ही मंत्र जपते इससे महामंत्र कहा। (प्रश्न—) हेस्वामी जी, महामंत्र कौनसा है और कैसे रामनाम से भया है सो विस्तार से कहिये। (उत्तर-) हेशिष्य, राममंत्रका विस्तार अथर्वण वेदोक्त रामरहस्य रामतारनीयोपनिषद्में वर्णन है। सो सुनो-

सहोवाच याज्ञवल्क्यो भरद्वाजं प्रति—अकारः प्रथमाक्षरो भवति १, उकारो द्वितीयाक्षरो भवति २, मकारस्तृतीयाक्षरो-भवति ३, अर्द्धमात्राश्चतुर्थाक्षरो भवति ४, विन्दुः पंचमा-क्षरो भवति ५, नादः षष्ठाक्षरो भवति ६. तारकत्वात्तारको-भवति तदेवं तारकं ब्रह्मत्वं विद्धि, तदेवोपास्यमिति ज्ञेयम्। गर्भजन्मजरामरणसंसारमहद्भयात्संतारयतीति तस्मादुच्यते तारकमिति। य एतत्तारकं ब्राह्मणो नित्यमधीते ससर्वं पाप्मानं तरति, समृत्युं तरति, स ब्रह्महत्यां तरति, स भ्रूणहत्यां तरति स वीरहत्यां तरति स सर्वहत्यां तरति, स संसारं तरति, स सर्वं तरति, सोविमुक्तमाश्रितो भवति, स महान्भवति, सो-मृतत्वञ्च गच्छतीति द्वितीयः खण्डः॥ १६२॥

अर्थ-अकार प्रथम अक्षर है उकार द्वितीय अक्षर है मकार तृतीय अक्षर है अर्द्धमात्रा चौथा अक्षर है रेफ पंचम अक्षर है नाद जो है स्वर सो षष्ठम अक्षर है संसार से सबको तारने से तारक होता है उसीको निश्चय करके तारक ब्रह्म तुम जानो और उसहीकी उपासना करना चाहिये जो गर्भ, जन्म--मरण, संसाररूप महाभय से तारता है तेहि से तारक मंत्र ऐसा कहते हैं। जो वेदाधिकारी ब्राह्मण षडक्षर ब्रह्मतारक मंत्र को नित्य अध्ययन अर्थात्

जपते हैं सो पापों को तरजाते हैं सो ब्रह्महत्या को तरजाते हैं सो गर्भहत्य को तरजाते हैं सोई वीरहत्या को तरजाते हैं सोई सब हत्याओं से तरजाते हैं सो संसारके दुःखको तरजातेहैं सो सब पांप हत्याको पार हो जाते हैं सो सर्वज्ञ प्रभुके परे लोक सांतानिक को प्राप्त होके सर्वज्ञ होते हैं सो महान् होजाते हैं सो अमरत्वको जाते हैं—पुनःसंसारमें नहीं लौटते हैं। हे शिष्य, इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे राममंत्र सर्वोपरि है और महामंत्र कहा जाता है इसी रामतारक मंत्रका दूसरारूप ॐकार है यह भी तारक १, दंडक २, कुण्डल ३, अर्द्धचन्द्र ४, विन्दु ५, नाद ६, अक्षरात्मक ब्रह्मस्वरूप है। पुनस्तत्रैव श्रुतिः—

य एवं मंत्रराजं श्रीरामचन्द्रस्य नित्यमधीते सोऽग्निना पूतो भवति, स वायुना पूतो भवति, सआदित्येन पूतो भवति, स सोमेन पुतो भवति, स ब्रह्मणा पूतो भवति, स विष्णुना पूतो भवति, स रुद्रेण पूतो भवति, स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति। तेनेतिहासपुराणानां रुद्राणां शतसहस्राणि जप्तानि भवन्ति—प्रणवानामयुतंकोटिजप्तानि भवंति गायत्रीं षष्ठिशत-सहस्राणिं जप्तानि भवंति-दशपुर्वान्दशपरान्पुनाति सह क्रियवान् भवति स महान्भवतीति॥ १९३॥

अर्थ—जो पुरुष ऐसे रामचन्द्र के मंत्रराज षडक्षर को नित्य जपता है सो अग्नि करके पवित्र होता है सो वायु करके पवित्र होता है सो सूर्य करके पवित्र होता है सो चन्द्रमा करके पवित्र होता है सो ब्रह्मा करके पवित्र होता है सो बिष्णु करके पवित्र होता है सो शिव करके पवित्र होता है सो पुरुष संपूर्ण देवताओं करके जाना हुवा होता है, सो इतिहास पुराणोंको तथा रुद्रों के सौ हजार जाप किये भये होता सो प्रणव ॐकार को दश हजार कोटि जाप किये हुये होता है। गायत्री को ६० सौ सहस्र जाप किये भये होता है वह पुरुष अपने दशपीढी पूर्वजन्म को दशपीढ़ी पीछे जन्म की पवित्र करता है सो राममंत्रका जापक क्रियावान् होता है, सो महान् होता है। इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे राममंत्र सर्वोपरि है और महामंत्र है विशेष देखना हो तो

श्रीराम मंत्र परम वैदिक सिद्धांत को देखो। और महेश कहनेका भाव यह है कि ऐसा रामनाम महामंत्र है कि जिसको महाईश्वर होके शिवजी जपते हैं तो दूसरे की क्या कथा है (प्रश्न-) हे स्वामीजी, इहां सब जापकों को छोड़ कर प्रथमही शिवजी को क्यों कहा। (उत्तर—) हे शिष्य, इसका हेतु तो हम तुमसे प्रथमही कहा कि शिवजी मुख्य जापक हैं जहां कहीं नाम माहात्म्य कहते हैं तहां प्रथमही शिवजी को कहते हैं। यथा-(मंगलभवन अमंगलहारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी) इत्यादि प्रथम कहा है दूसरा हेतु यह है कि शिवजी वैष्णव शिरोमणि हैं। यथा-(वैष्णवानां यथा शम्भुः) इत्यादि भागवत में कहा है इससे यह उपदेशार्थ दिखाया कि राममंत्र सर्वोपरि न होता तो वैष्णव शिरोमणि शिवजी क्यों जपते दूसरेही नाम अथवा मंत्र जपते इससे रामनाम सर्वोपरि है और सब वैष्णवों को पक्षपात छोड़ कर राम नाम जपना चाहिये। यथा—आदिपुराणे।

गायन्ति रामनामानि वैष्णवाश्च युगे युगे।
त्यक्त्वा च सर्वकर्माणि धर्माणि च कपिध्वज ॥१६४॥

अर्थ—श्रीकृष्णजी ने अर्जुन से कहा है कि हे कपिध्वज, सब कर्म धर्मों को त्यागि के वैष्णव सब युगयुग में रामनाम गाते हैं। इत्यादि बहुत कहा है, सो ग्रन्थ की समाप्ति में (स्तोत्र ही) सम्पूर्ण कहूँगा। हे शिष्य, इससे रामनाम सर्वोपरि है इससे महेश कहा, पुनः वह रामनाम षडक्षर महामंत्र कैसा है कि "काशी मुक्ति हेतु उपदेश" है उपदेश नाम शिक्षा देनेवाला गुरु है अथवा शिवजी काशी ही में मुक्ति उपदेशार्थ जपते हैं जिस रामनाम महामंत्र को मृत्यु-काल में सर्व प्राणीमात्र को दक्षिणकर्ण में सुना के शिवजी मोक्ष देते हैं ताते मुक्ति उपदेशार्थ उपदेश है। भाव केवल सृष्टिही का हेतु नहीं हैं मोक्ष के लिये भी है (प्रश्न—) हे स्वामीजी, मरण के समय क्यों राम मंत्र उपदेश करते हैं सो भेद कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि काशी जी में जितने शैव्य, शाक्त, गाणपत्य, शौर्य्य सन्यासी, जैन बौद्धादिक हैं सो सब प्रसिद्ध तो वैष्णव होते नहीं काहेसे कि वैष्णव के द्रोही होते हैं और बिन वैष्णव भये गति होना दुर्ल्लभ है यह सब सात्त्विक ग्रन्थ का सिद्धांत है काहेसे कि मोक्ष के अधिकारी विष्णुभगवान् हैं दूसरा देव नहीं इसी से शिव जी

कृपालु सबको मृत्युकाल में वैष्णवी मंत्रोपदेश करके अन्त में वैष्णव बना के गति देते हैं और मरणकाल में उपदेश देनेका हेतु यह है कि मरणकाल समय जीव परवश हो जाता है इससे मंत्रोपदेश करने में योग लग जाता है दूसरा कारण यह है कि (अन्ते या मतिः सा गतिः) इसदेवकी श्रुति अनुसार मरण समय में जो मति रहती है सोई गति होती है इससे मृत्युकाल से राममंत्र का उपदेश करते हैं। (प्रश्न--हे स्वामी जी, वैष्णवी मंत्र वैष्णव से लेना कि अवैष्णव से लेनाचाहिये (उत्तर-हे शिष्य, शिवजी परम वैष्णव हैं इससे इनको वैष्णवी मंत्र देनेका अधिकार है तबही शिवजी देते हैं और अवैष्णव को यह नहीं उचित है कि वैष्णवी मंत्र कोई को देना और अवैष्णव से वैष्णवी मंत्र लेना भी नहीं चाहिये जो लेवे तो नरक में जावे। ऐसा नारदपञ्चरात्र में कहा है। यथा-

अवैष्णवोपदिष्टेन मंत्रेण नरकं व्रजेत्।
अवैष्णवाहृतं मंत्रं यः पठेद्वैष्णवो द्विजः ॥१५॥
कल्पकोटिसहस्राणि पच्यते नरकाग्निना ॥

अर्थ-अवैष्णवके उपदेश मंत्र करके नरक को जाते हैं। जो कोई अवैष्णव के दिए मंत्र को धारण करते हैं पढ़ते हैं सो सहस्रकोटि कल्प पर्यन्त नरकरूप अग्नि में पचते हैं इत्यादि बहुत प्रमाण हैं इससे अवैष्णव से कभी मंत्र नहीं लेना चाहिये। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, शिवजी जो सब मंत्र वाले को वैष्णवी मंत्र मरणांते देते हैं सो दोष नहीं है? क्योंकि एक गुरु से मन्त्र लिया हो तो दूसरा गुरु नहीं होना चाहिए। (उत्तर-) हे शिष्य, यह तुम्हारा कहना अयोग्य है और जो कोई ऐसा कहते हैं सो मूर्ख हैं देखो गुरु तीन प्रकार के होते हैं। एक राजसी, दूसरा तामसी, गुरुशिव मंत्रादि के उपदेश करते हैं, तीसरा वैष्णव गुरु सात्त्विक है तिनसे सब मंत्र वालेको वैष्णवी मन्त्र लेना चाहिए और सब मंत्र वाले को वैष्णवी मन्त्र देना दोष नहीं है यह सर्वत्र प्रमाण है। यथा-नारदपंचरात्रांतर्गतपुष्कर संहितायाम्।

अवैष्णवोपदेष्टा यश्चान्यमन्त्र रतोपि च।
वैष्णवाद्विष्णुमन्त्रेण पुनः संस्कारमर्हति ॥१६॥

पुनः पाद्मे—अवैष्णवोपदिष्टं च पूर्वमंत्रं परित्यजेत्।
पुनश्च विधिना सम्यग्वैष्णवाद्ग्राहयेन्मनुम्॥

अर्थ-अवैष्णव के जो उपदेशिक हैं और दूसरे मंत्र में रत भी हैं उनको चाहिये कि वैष्णव से विष्णु मंत्र करके पुनः शंख चक्रादि पञ्च संस्कार को कर लेवे दोष नहीं हैं। "पद्मपुराण" में कहा है कि अवैष्णव का शिष्य जो होय सो प्रथम शिवादि के मन्त्रों को त्याग के पुनः विधि पूर्वक वैष्णव से विष्णु मन्त्र ग्रहण करे दोष नहीं है। इस प्रकारसे बहुत कहा है इससे वैष्णवी मन्त्र सब को देना लेना चाहियें काहे से कि भगवत् के मंत्र परलोक के वास्ते हैं और शिवादि के मन्त्र जो हैं सो तो ऐश्वर्य्यादिलोकों के लिये है। इससे लोक छोड़ कर परलोक की सेवा अवश्यमेव करना चाहिये। हे शिष्य, देखो इसी से जब शिवजीने काशीपुरी में हजार मन्वंतर पर्यन्त राममन्त्र का जाप किया तब रामजी प्रकट होके कहाकि वरदान मांगो तब शिवजी बोले कि पांचकोशी काशी में जो कोई मरे तिनको मोक्ष हो तब रामजी ने विचार किया कि जो हम ऐसे ही मोक्ष के लिये बरदान दे देगें तो वैष्णवशास्त्रों में विरुद्ध परेगा काहे से कि शिवपुरी में मोक्ष होने को वैष्णवशास्त्र की आज्ञा नहीं है दूसरे बिना वैष्णव भये जीव की गति भी नहीं है ऐसा बिचार के रामजी बोले कि हे शिवजी, यह मन्त्र आप जिनको मरणकाल समय दक्षिण कर्ण में देगें सो मुक्त हो जायँगे। हे शिष्य, इहां मन्त्र देने का इतना प्रयोजन है कि सब कोई मन्त्र के उपदेश होने से वैष्णव होजाते हैं। इससे गति होती है नहीं तो गति न होती और इससे रामजीने मन्त्र दिया नहीं तो क्या वरप्रदान से गति न होती गति होती सही, परन्तु वैष्णवशास्त्र की मर्य्यादा मिटजाती इससे रामजी ने अपने वैष्णवशास्त्र की मर्यादा रखने के वास्ते केवल वरप्रदान न दिया, इससे काशी मुक्ति हेतु उपदेश सिद्ध है। (प्रश्न-) हे स्वामी जी, राम मन्त्रोपदेश करके शिवजी काशीजी में सबको मोक्ष देते हैं सो कहां प्रमाण है कृपा करके कहिए। (उत्तर) हे शिष्य, इस बातको क्या कहना है यह तो सब पुराणों में प्रसिद्ध प्रमाण है और काशी माहात्म्य में काशी खंड में है और अगस्त्यादिक संहिता में भी है वृद्धपाराशरस्मृति में है शिवस्मृति में विस्तार से कहा है रुद्रयामले में भी कहा है और भी सर्वत्र कहा इहां सबके प्रमाण

देने से ग्रन्थ विस्तार हो जायगा इससे थोरा श्रुति का प्रमाण कहते हैं। अथर्वणवेदोक्तरामोत्तरतापनीयोपनिषद् याज्ञवल्क्यः भरद्वाजं प्रति।

श्रीरामस्य मनुं काश्यां जजाप वृषभध्वज।
मन्वन्तरसहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः ॥१९८॥
ततः प्रसन्नो भगवान् श्रीरामः प्राह शङ्करम्।
वृणीष्व यदभीष्टं तद्दास्यामि परमेश्वर ॥ १९९॥
अतः सत्यानन्दश्चिदात्मा पप्रच्छ श्रीरामीश्वरः।
मणिकर्णिकायां मत्क्षेत्रे गंगायां वा तटे पुनः॥
म्रियेते देहि तज्जन्तोर्मुक्तिं नातो वरान्तरम् २००॥

अथ सहोवाच श्रीरामः क्षेत्रेऽत्र तव देवेश यत्र कुत्रापि वा मृताः। कृमिकीटादयोप्याशु मुक्ताः सन्तु नचान्यथा अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्तिसिद्धये॥ अहं सन्निहितस्तत्र पाषाणप्रतिमादिषु॥ क्षेत्रेऽस्मिन् योर्चयेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन मां शिव। ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुचः ॥२०३॥ त्वत्तो वा ब्रह्मणो वापि ये लभन्ते षडक्षरम्। जीवन्तो मंत्रसिद्धाः स्युर्मुक्ता मां प्राप्नुवान्तिते ॥२०४॥ मुमुर्षो दक्षिणेकर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम्। उपदेक्ष्यसि मन्मन्त्रं स मुक्तो भविता शिव ॥२०५॥ श्रीरामचन्द्रेणोक्तं योविमुक्तं पश्यति सजन्मान्तरितान् दोषान् वारयतीति तान् पापान्नाशयतीति॥

अर्थ—जब श्रीरामचन्द्रजी के महा मन्त्र को शिवजी ने हजार मन्वन्तर पर्य्यन्त जाप किया होम पूजन सहित। तदनंतर श्रीरामभगवान् प्रसन्न होकर बोले कि हे ईश्वर, शिवजी जौन अभीष्ट वरकी इच्छा हो सो कहो

हम वह देंगे यह सच्चिदानन्द श्रीरामजी के वचन सुनकर शिवजी बोले कि मणिकर्णिका घाट में अथवा मेरे क्षेत्र पंचकोशी काशी में वा गंगा के किनारे में जो जीव मात्र मरे उन जंतु मात्र को मुक्ति होना यह दीजिये दूसरा बरदान हम नहीं चाहते हैं। यह बचन सुनके श्रीरामजी बोलेकि हे देवताओं के स्वामी शिवजी इहां आप के काशी क्षेत्र में जहां कहीं भी कोई जीव कृमि कीटादिक पर्यंत मरेंगे सो शीघ्र मुक्त होजायंगे दूसरी गति न होगी। और हमारा यह वचन मिथ्या भी न होगा। और अविमुक्त नाम तुम्हारे काशी क्षेत्र में सर्व जीवों के मुक्ति सिद्धि के लिये तहां काशी क्षेत्र में पाषाणादिक प्रतिमा में हम समीप रहेंगे। हे शिवजी, इस तुम्हारे काशी क्षेत्र में जो कोई भक्त भक्ति करके इस षडक्षर महामन्त्र करके पूजा सेवा हमारी करेंगे उसको ब्रह्महत्यादि पापों से मोक्ष कर देंगे। इसमें शोक मत करो आप से अथवा ब्रह्माजी से जो कोइ षडक्षर मन्त्र को प्राप्त होवेंगे सो जीवते मंत्र सिद्ध होंगे मरे पीछे मुक्त होकर मेरेको प्राप्त होवेंगे। हे शिवजी, जिस किसी को भी मरणकालमें मोक्षकांक्षी पुरुष के दक्षिणकर्ण में स्वयं आप हमार षडक्षर मंत्रको उपदेश करेंगे सो मुक्त होजायंगे। श्रीरामचन्द्र करके कहा भया अविमुक्त क्षेत्र काशीजी को देखते हैं वह अनेकन जन्मों के दोषों को निवारण करते हैं और तिन पापों को नाशकरे हैं यह वाराणसी शब्द का अर्थ है इत्यादि बहुत प्रमाण हैं इससे काशी में रामही मंत्र से गति होती है इससे काशी मुक्ति हेतु उपदेश कहा। पुनः दूसरी श्रुति है। यथा—

जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्म व्याचष्टे।
येनासौ अमृती भूत्वा मोक्षी भवति मानवः ।।२०६।।

पुनर्मुक्तिकोपनिषदि

पुनरावृत्तिरहितां मुक्तिमाप्नोति मानवः।
यत्र कुत्रापि वा काश्यां मरणे स महेश्वरः ।।२०७।।
जन्तोर्दक्षिणकर्णे तु मत्तारं समुपादिशत्।
निर्धूताशेषपापौघो मत्सारूप्यं भजत्ययम्॥

अर्थ—प्राण छूटते समय रुद्र शिवजी प्राणी को तारक ब्रह्मका उपदेश करते हैं जिन करके यह प्राणी अमर होके मोक्ष को प्राप्त होते हैं। पुः न"मुक्तिकोपनिषद्" में श्रीरामजी ने हनुमान्जी से कहा है कि जन्ममरण से रहित रूप मोक्ष को मनुष्य प्राप्त होते हैं जहां कहीं भी मरण के समय में महेश्वर शिवजी काशीपुरी में जन्तु को दक्षिणकर्ण में हमारे रामतारक मन्त्र को उपदेश करते हैं सो सम्पूर्ण पापों से रहित होकर मेरे सारूप्य अर्थात् समताधर्म को कीटभृङ्गन्याय करके प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार से बहुत कहा है। इससे राममन्त्र सर्वोपरि है और सब वर्णों को अधिकार है। (प्रश्न—) हे स्वामीजी, सब को अधिकार है सो कहां कहा है। (उत्तर—) हे शिष्य, सब को अधिकार न होता तो शिवजी क्यों सब को मन्त्रोपदेश करते और श्रुति भी प्रमाण है। यथा—

मुमुक्षोर्मणिकर्णिकायामर्धोदकनिवासिनः।
रुद्रस्तु तारकं ब्रह्म व्याचष्टेति श्रुतौ विभुः॥ २०९॥
सर्वेषामधिकारो वै ज्ञातव्यो देशिकोत्तमैः।
इत्याद्याः श्रुतयः सन्ति स्मृतयश्च सहस्रशः॥२१०॥

अर्थ—मणिकर्णिका तट में अर्धोदकनिवासी (अर्थात् आधाशरीर जल में आधा शरीर ऊपर) मुमुक्षुको तारक ब्रह्मका कथन करते हैं रुद्र इहां सबको अधिकार जानना इसी प्रकार से बहुत श्रुतिस्मृति के प्रमाण हैं। हे शिष्य, राम ही मंत्र से काशी में मोक्ष होता है॥ ३॥

मूल—महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ॥४॥

अर्थ—पुनः जासु नाम जोइ रामनाम महामंत्रकी महिमा नाम माहात्म्य को गणराऊ जो गणेशजी हैं सो जान नाम जाने हैं अथवा जानते हैं काहेसे की नाम ही के प्रभाव से प्रथम पूजियत नाम प्रथम पूजित भये हैं अथवा आज पर्यन्त सब से प्रथम पूजे जाते हैं। यह कथा "प्रशैव्यतंत्र" में प्रसिद्ध है और भी नन्दीश्वरपुराण में गणेशपुराणादिकोंमें प्रसिद्ध है कि एक समय में शिवजी गणेश जी को योग्य समझकर सब देवताओं से बोले। कि, आज हम सब

देवताओं में गणेश को प्रथम पूजित करते हैं यह सुनके सब देवता लोग आप आपको कहने लगे कि मेरे को प्रथम पूजित करो कोई कहने लगे कि मेरे को कोई कहै कि नहीं मेरेही को प्रथम पूजित करिए, इसी प्रकार से सब कोई कहने लगे तब शिवजी ने वड़ाभारी वितंडाबाद देख कर कहा कि जो कोई त्रिलोकी की प्रदक्षिणा प्रथम करके मेरे पास में आवेगा सोई प्रथम पूजित होगा यह शिवजी का बचन सुनकर सब देवमण्डली अपनी अपनी सवारीपर चढ़ के चले पीछे से गणेशजी भी चले उस समय में गणेशजी के दोनों बगल में चन्द्रमा, सूर्य रहे उतनेही में शीघ्रता के कारण से गणेश जी मूषा सवारी के सहित पृथ्वीपर गिर पड़े सो देख कर और तो कोई भय से, नहीं हँसे परन्तु चन्द्रमा से नहीं रहा गया चन्द्रमा हँसपड़े सो गणेशजीने चन्द्रमा को शाप दे दिया कि आज से जो कोई तुमको देखेगा सो कलंकी होगा तब सब देवताओं से निरादर हो चन्द्रमा छिप रहा पीछे गणेश जी फिर मूशा पर सवार होके धीरे २ चले इतनेही में श्रीनारदजी मार्ग में मिले और गणेशजी को खेद युक्त देखकर नारदजी ने बूझा गणेशजी ने पूर्वोक्त सब वृतान्त कहके सुना दिया सुनकर नारदजी को दया लगी नारदजीने कहा कि आप त्रैलोकमय रामनामको पृथ्वी पर लिखकर प्रदक्षिणा करो तीनों लोकोंकी परिक्रमा होजायगी यह सुन गणेशजी ने वैसेही किया पीछे देवताओं के आगे २ कार्त्तिकेयस्वामी रहे पीछे २ सब देवता लोग रहे सो जहां २ जायँ तहां २ चूहा के पग की चिह्न देख परी तब सब देवमंडली निराश होगई पीछे रामनामकी कृपा करके गणेशजी प्रथम पूजित भये तिसके पीछे चन्द्रमा जब शाप करके छिप रहा तब चन्द्रमा बिना सबको दुःख भया सबने ब्रह्माजी से कहा ब्रह्माजी ने शापानुग्रहके वास्ते विनती की कि, आप चन्द्रमा का शाप क्षमा करो विना इनको देखे कैसे सब रहैंगे तब गणेशजी बोले कि आपके कहने से सब दिन का शाप तो क्षमा किया, परन्तु आज चौथ में जो कोई चद्रमाको देखेगा सो कलंकी होगा। तब पुनः ब्रह्माजी ने कहा कि महीने में दो चौथ परता है दो चौथमें सहस्रों देव मनुष्य कलंकी हो जायँगे इससे और क्षमा करो तब गणेश जी बोले कि सब दिन का क्षमा किया, परन्तु आज भादों सुदि चौथ के दिन जो चन्द्रमा को देखेगा सो कलंकी होगा। क्योंकि, शाप मेरा मिथ्या नहीं होगा तबसे गणेशचौथ कहा जाता है जिसको पत्थड़ाचौथ कहते हैं जिसको

देखने से श्रीकृष्णजी को कलंक भया रहा। इससे हे शिष्य, राम नाम ही की महिमा से गणेशजी भी प्रथम पूजित भए हैं इससे श्रीरामनाम सर्वोपरि है (गणेशपुराण) में गणेशजी ने सब ऋषियों से कहा है॥

रामनाम परं ध्येयं ज्ञेयं पेयमहर्न्निशम्।
सर्वदा सद्भिरित्युक्तं पूर्वं मां जगदीश्वरैः ॥२११॥
अहं पूज्योभवल्लोके श्रीमन्नामानुकीर्त्तनात्।
अतश्श्रीरामनामाम्नस्तु कीर्त्तनं सर्वदो चितम् ॥२१२॥

अर्थ–श्रीरामनाम ध्यान करने योग्य, पान करने योग्य, जानने योग्य, यह प्रथम ही मेरे को जगदीश्वर ने कहा है और रामनाम ही के कीर्त्तनादिक से हम पूजित भये हैं इससे श्रीरामनाम सर्वदा कीर्त्तन करना उचित है इत्यादि बहुत कहा है। (प्रश्न–) हे स्वामी जी, शिवजी के पीछे गणेशजी को क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, इसका अभिप्राय यह है कि गणेशजी शिवजी के आत्मा हैं (आत्मा वै जायते पुत्रः) इत्यादिक शास्त्र में कहा है कि आत्मा जो है सोई निश्चय करके पुत्र होके जन्म लेता है इससे शिवजी के पीछे गणेशजी को कहा भाव पिताके पीछे पुत्र को कहना उचित है इससे कहा। हे शिष्य, गणेशजी के द्वारा पृथ्वीपर लिखा हुआ रामनाम का माहात्म्य कहा इससे उपदेशार्थ यह दिखाया कि जब पृथ्वीपर लिखा हुआ नामकी महिमा से गणेशजी प्रथम पूजित भये और गणराऊ की पदवी पाई तो प्रेमपूर्वक जपने से न जाने क्या होता इससे रामनाम सर्वोपरि है और शिव गणेशजीकेनाम को छोड़ के राम नाम जपना चाहिए, इसमें संदेह नहीं करना॥४॥

जान आदि कवि नाप प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू॥५॥

अर्थ–पुनः जेहि रामनाम महा मंत्र का प्रताप आदि कवि जो श्रीवाल्मीकिजी महर्षि हैं सो जान नाम जाने हैं काहेसे कि जो उलटा जाप करके अर्थात मरा मरा कहिके शुद्ध भयो नाम भए हैं (प्रश्न) हेस्वामी, यहां आदिकवि क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य,आदिकवि कहने का भाव यह है कि, कहां तो घोरकर्म व्याधा के करते रहे कि जिस ब्रह्महत्या के मारे

मुखसे सीधा रामराम नहीं आता रहासो सप्तऋषियों के उपदेशसे श्रीरामनाम को उलटा जप के और सब पापोंसे रहित होके यानी शुद्ध होके जिन्होंने चौविस अक्षर गायत्री पै चौविस सहस्त्र साक्षादत्रामायण वेदके समान बनाई। कि, जिसका अभिप्राय बड़े २ विद्वानों को भी समझना कठिन है। तिसमें भी भविष्य कथन किया और संसार में जिनका नामही आदिकवि करके विख्यात हुआ और सत्यवक्ता कहे जाते हैं सो वह पदवी राम नामही के प्रतापसे पाये हैं उसमें भी उलटा नामके प्रताप से कुछ सीधा नाम के प्रतापसे नहीं सीधे नाम के प्रतापसे तो न जाने कौन पदवी पाते ऐसा नामका प्रताप है। यथा (उलटानाम जपत जगजाना। वाल्मीकी भये ब्रह्मसमाना॥) इत्यादि कहाहै। इससे आदिकवि कहा। दूसरा भाव आदिकवि कहने का यह है कि बहुतेरे ज्ञातालोग कहते हैं कि उलटा नाम जपनेवाले व्याधाके पुत्र वाल्मीकि दूसरे ही हैं सो यह कहना ठीक नहीं है इस भ्रमको मिटाने के लिये आदिकवि कहा। इससे वाल्मीकि एकही हैं यह दिखाया, और व्याधा होनेका कारण यहहै कि वाल्मीकिजी प्रथम-भृगुजीके पुत्ररहे नाम भार्गव रहा सो दुष्ट व्याधाओं के सोहबत करके व्याध होगये थे पीछे इन्हीं सबके साथमें रहने लगे जब सप्तऋषि मिले और उलटा रामनाम का उपदेश करके चले गये। तब रामनाम को जपते ६०००० हजार वर्ष होगये पीछे इनके शरीर वल्मीक यानी वामी होगई तब ब्रह्माजी की प्रेरणासे वरुणजीने वर्षा की उससे प्रकट भये ब्रह्माजीने और दो नाम धरे एक तो वरुणका नाम प्रचेतसहै तिनके वर्षा करने से प्रकट भये तिससे (प्राचेतस) नाम भया दूसरा वाल्मीक से होने के कारण (वाल्मीकि) नामभया परंच पुत्रहैं भृगुजी के इससे एकही वाल्मीकि हैं इसमें संदेह न करना चाहिये। इसीसे गोस्वामीजी ने आदिकवि कहा। यथा (जान आदिकवि तुलसी नाम प्रभाव। उलटा जपत कोलते भये ऋषिराव इत्यादि गोस्वामीजी ने कहा है। और उलटा जाप कहने का यह भावहै कि, और जितने यंत्र मन्त्र हैं अथवा भगवत् के नाम हैं सो सबका उलटा जाप होभी नहीं सकता है, दसरे उलटा जपने से विघ्न होगा और रामनाम जो है सो ऐसा कृपालु हैं। कि चाहै जैसा भजो कल्याण ही होगा इससे उलटा जापू कहा और भयो शुद्ध कहने का भाव यहहै कि न जाने व्याधाकी सोहबत

करके कितने जीव हत्या कियेरहे कितने ब्रह्महत्या कियेरहे कि जिनके लिए कोई भी प्रायश्चित शास्त्रमें नहीं कहा है और न कोई उपाय से शुद्ध होता सो रामनाम के प्रताप से शुद्ध भयो। भाव—किसी प्रकारसे शुद्ध होने योग्य नहीं रहे सोशुद्ध हुए ऐसा नाम का प्रताप है इससे भयो शुद्ध कहा। हे शिष्य, वाल्मीकि जी की कथा (कूर्म पुराणमें] विस्तारसे कहा है। (प्रश्न-] हे स्वामीजी, इहां गोस्वामीजी ने गणेशजी के पीछे वाल्मीकिजी को क्यों कहा प्रथम शिवजीको कहा सो ठीक है काहे से कि शिवजी प्रथम जापक हैं। तिसके पीछे गणेशजी कहा सो भी ठीकही है काहेसे कि गणेशजी शिवजीके पुत्र हैं। पुनः तिसके कोपीछे पार्वतीजी को कहना रहा काहे से कि पिता माता के बीच में पुत्रको कहना उचित है सो नहीं कह कर बीचमें वाल्मीकिजी को क्यों कहा सो कृपाकरके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य,इसका अभिप्राय दो है एक तो प्रथमाभिप्राय यह है कि गणेशजी के द्वारा गोस्वामीजीने पृथ्वीपर लिखा रामनामकी महिमा कहा है तो गोस्वामी जी ने विचारा कि इसी लगे उलटा नामका भी माहात्म्य कहदें काहे सो कि जैसा लिखा नामका आश्चर्य्य माहात्म्यहै तैसेही उलटानामका भी अद्भुत माहात्म्य है इससे बीचमें कहा। दूसरा आशय यह है कि शिवजीके और पार्वतीजीके श्रीरामजी इष्ट हैं और तिनके यशकेकर्त्ता वाल्मीकिजी हैं इससे शिवजी को और पार्वतीजीकोवाल्मीकीजी अतिशय प्रिय हैं यह प्रियत्त्व दिखाने के लिये बीचमें कहा। भाव—जैसे शिव पार्वती को गणेशजी प्रिय हैं तैसेही वाल्मीकि जी भी प्रिय हैं इससे शिवपार्वतीके मध्यमें दोनों को कहा पीछे पार्वती को कहा॥ ५॥

मूल–सहसनामसमसुनिसिवबानी। जपिजेईं पियसंगभवानी॥

अर्थ—पुनः जेहि रामनाम महमंत्र को विष्णु सहस्रनाम के सम नाम बराबर शिववाणी सुनि के भवानी जो पार्वती जी हैं सो अपिके पियजो शिव जी हैं तिनके संग नाम साथमें जेईं नाम भोजन करती भईं। (प्रश्न-) हे स्वामीजी, इहां विष्णु सहस्रनाम के समान शिव वाणी सुनि के क्यों कहा पियवाणी क्यों नहीं कहा, इसका भाव कहिये। (उत्तर-) हे शिष्य, पियवाणी

कहने से यह पाई जाती कि पार्वतीजा पतिव्रता हैं इससे पतिव्रतधर्म बचाने के लिये मानी है वास्तव में विष्णुसहस्रनाम के समान रामनाम नहीं है भगवत् के सबनाम समान हैं, और शिवजी तो पागल हैं इससे सहस्रनाम के समान कहा है इनके बचन का क्या ठिकाना है ऐसामूर्ख लोग कहते इससे पियवाणी नहीं कहा, शिववाणी कहा। शिववाणी कहने का भाव यह है कि शिव नाम ईश्वर-वाणी जो है सो मिथ्या नहीं हो सकती है। दूसरा शिव नाम कल्याण बाणी है। भावजो कोई विष्णुसहस्रनाम के समान रामनाम को विश्वास पूर्वक जानेंगे जपेंगे तिनका कल्याण होगा इससे शिववाणी कहा। अथवा शिवनाम मर्य्यादायुक्त समर्थ वाणी है इससे पार्वतीजी को विश्वास हो गया कि विष्णुसहस्रनाम के तुल्य निश्चय रामनाम है काहे से कि पार्वतीजी को विश्वास है कि शिवजी मिथ्या नहीं बोलते हैं। यथा सती वचन "शंभुगिरा पुनि मृषा न होई। शिव सर्वज्ञ जान सब कोई॥ तुम त्रिभुवन गुरु वेदबखाना। आन जीव पांवर का जाना॥" इत्यादि कहा है इससे शिववाणी सत्य है। दूसरे शिवजी वैष्णव शिरोमणि हैं इससे भगवत् विषय में शिववाणी सर्वोपरि मानी जाती है काहेसे कि भागवतादिक में लिखा है कि शिवजी के समान तत्त्वज्ञाता दूसरा कोई भी नहीं हैं इससे शिववाणी कहा। भाव बिष्णु सहस्रनाम के समान एक रामनाम ही है दूसरा नाम नहीं यह निश्चय सिद्धांत है और जो कदापि कोई सहस्रनाम के समान दूसरे नाम को कहै अथवा किसी ग्रन्थ में सहस्रनाम के समान दूसरा नाम हो तो अशिववाणी जानना। भावपक्ष पात जानना चाहिये, और रामनामके विषयमें पक्षपात नहीं है निश्चय करके सहस्रनाम के समान जानना इससे शिववाणी कहा। हे शिष्य, यह कथा पद्म पुराण में प्रसिद्ध है कि एक समय में शिवजी ने पार्वती को भोजन करने लिये बुलाया तब पार्वतीजी बोलीं कि विष्णुसहस्रनाम का पाठ करके आती हूँ यह सुन बिलंब जानकर प्रसन्न होके निज सिद्धान्त जो सर्वोपरि श्रीरामनाम है सो बताया यथा पद्मपुराणे।

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनामतत्तुल्यं रामनाम वरानने॥ २१३॥

जपतः सर्ववेदाश्च सर्वमन्त्राश्च पार्वति ।
तस्मात्कोटि गुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ॥२१४॥

अर्थ-शिवजी बोले कि हे वरानने, श्रेष्ठ मुखवाली श्रीरामराम ऐसा जो नाम है तिसमें रमण कर यह रामनाम मन को रमाने वाला है यह विष्णुसहसूनाम के बराबर है राम नाम ही में हम भी रमण करते हैं। राम नाम के समान कुछ नहीं है। हे पार्वति, संपूर्ण वेद, पुराण, मन्त्र, यन्त्र के जपसे कोटिनगुणा फल रामनाम ही से प्राप्त होता है यह निश्चय जानना। यह सुनकर जपिके शिवसंग भोजन किया। (प्रश्न) हे स्वामी जी, विष्णुसहसूनाम के समान रामनाम एक (पद्मपुराण) ही में प्रमाण है कि और भी कोई ग्रन्थ में प्रमाण हैं सो कहिए। (उत्तर) हे शिष्य, बहुत ही प्रमाण हैं सो सुनो। ब्रह्मवैवर्तपुराणे-

नाम्नां सहस्रदिव्यानां स्मरणे यत्फलं लभेत् ॥
तत्फलं लभते नूनं रामोच्चारणमात्रतः ॥२१५॥

(पुनर्विष्णुपुराणे व्यास उवाच-

विष्णुरेकैकनामापि सर्ववेदाधिकं मतम् ॥
तादृङ्नाम सहस्रेण रामनाम समं मतम्॥२१६॥
श्रीरामेति परं नाम रामस्यैव सनातनम् ॥
सहस्रनाम सादृश्यं विष्णोर्नारायणस्यच॥२१७॥

(पुनःहारीतस्मृतौः)

श्रीरामाय नमो ह्येष तारक ब्रह्म कथ्यते ॥
नाम्नां विष्णोः सहस्राणां तुल्य एव महामनुः॥२१८॥

[पुनः पद्मपुराणे क्रियायोगसारे-]

विष्णोर्नामसहस्राणां पाठाद्यल्लभते फलम्।
तत्फलं लभते मर्त्यो रामनाम स्मरन्सकृत् ॥२१९॥
विष्णोर्नामानि विप्रेन्द सर्ववेदाधिकानिवै।
तेषांमध्ये तु तत्त्वज्ञैःरामनाम परं स्मृतत् ॥२२०॥

(पुनः—आनन्दसंहितायाम्—)

एकैकं रामनाम्नस्तु सर्वतापप्रणाशनम्।
सहस्रानामकोटीनां फलदं वेदविश्रुतम् ॥२२१॥

(पुनः—आदिरामायणे श्रीरामउवाच नारदंप्रति—)

नारायणस्य यावन्ति पुराणेष्वागमेषु च।
दिव्यनामसहस्राणि कीर्त्तयन्यत्फलं लभेत् ॥२२२॥
ततः कोटिगुणं पुण्यं फलं दिव्यं मदात्मकम्।
लभते सहसा ब्रह्मन् सकृद्रामेति कीर्तनात् ॥२२३॥

(पुनः विश्वामित्र प्रातः पंचके—)

प्रातर्वदामि वचसा रघुनाथनाम वाग्दोषहारि सकलं कलुषं निहंतृ॥ यत्पार्वती स्वापतिना सह भोक्तुकामा प्रीत्या सहस्रहरिनामसमं जजाप ॥२२४॥

अर्थ—ब्रह्मवैवर्त पुराण में यशोदाजी से राधिकाजी ने कहा है कि दिव्य विष्णुसहस्रनाम के स्मरण करने से जो फल होता है सो फल बहुत शीघ्र रामनाम उच्चारणमात्र से होता है। "विष्णुपुराण" में व्यासजीने कहा है कि विष्णुभगवान् के एक २ नाम वेद में अधिक कहे हैं उन सब सहस्रनामों के समान रामनाम माना है ऐसा मत है। श्रीराम ऐसा नाम परम श्रेष्ठ नाम है। श्रीराम ही का सनातन नाम है और रामही जी को सनातन जानो और विष्णुनारायण के सहस्र नाम के समान रामनाम है। पुनः बृद्धहारीतस्मृति में भी कहा है कि, (श्रीरामायनमः) यह ब्रह्मतारक मंत्र कहा है सो विष्णुसहस्रनाम के समान महामन्त्र है क्रियायोगसार में कहा है कि विष्णु-सहस्रनाम के पाठ करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल मनुष्य को राम

नाम एक बार स्मरण से होता है। हे विप्रेन्द्र विष्णुभगवान के नाम सर्ववेदों में निश्चय करके अधिक हैं परन्तु तिनके मध्य में तत्वज्ञ लोगों ने राम नाम ही को श्रेष्ठ कहा है॥ पुनः—आनन्दसंहिता में कहा है कि एक २ रामनाम निश्चय सब पाप का नाश करने वाला है, विष्णुसहस्र नाम के कोटिनगुण फल देने वाला रामनाम है ऐसा वेदमें प्रसिद्ध है। पुनः—आदिरामायण में स्वयं रामजी ने नारदजी से कहा है कि वेद पुराण में जितने नारायण के नाम कहे हैं उन दिव्य सहस्रनामों के पाठ से जो फल होता है उससे कोटि गुण फल मेरे स्वरूपात्मक रामनाम एकबार के कहेसे हे नारद, शीघ्र प्राप्त होता है बिश्वामित्रप्रातः पंचक में कहा है कि संपूर्ण बचनके दोष के हरण करने वाले सकल पापोंके नाशक श्रीरघुनाथजी के नाम प्रातः काल में वचनसे कहता हूँ जो पार्वतीजी पति शिवजी के अपनी भोजन कामना के लिये प्रीति सहित विष्णुसहस्रनामके समान जपतीभईं इत्यादि बहुत कहे हैं। इससे हेशिष्य, विष्णुसहस्रनाम के तुल्य एक रामनामही है यह सब शास्त्रका सिद्धान्त है इसमें सन्देह न करना चाहिये और पक्षपात भी नहीं जानना चाहिये पक्षपात जो समझे सो मूर्ख है इससे गोस्वामीजी ने यह दिखाया कि विष्णुसहस्रनाम का बड़ा माहात्म्य है। परन्तु रामनाम को एकबार विश्वासपूर्वक कहने से विष्णुसहस्रनाम के समान फल होता है इससे विष्णुसहस्रनामादिक स्तोत्र के पाठ त्याग कर रामनामही जपना विशेष फलदायक है तबही तो सहस्रनामको छोड़कर पार्वतीजीने रामनामको जप कर स्वामी के साथ में भोजन किया। (प्रश्न) हेस्वामीजी, पति के साथमें भोजन करना स्त्रीको दोष है पतिको भी दोष है ऐसा मनुस्मृति में कहा है कि (नाश्नीयाद्भार्यया सार्धम्) अर्थात् स्त्रीके साथ भोजन न करना इत्यादि बहुत कहा हे सो शास्त्र से विरुद्ध काम क्यों किया। (उत्तर) हे शिष्य,इसका कारण यह है कि रामनाम का जापक चाहै कैसा भी नीच हो तो भी उसके साथमें भोजन शयनादिक सब व्यवहार करना चाहिये ऐसी अथर्वण वेदकी श्रुति है। यथा प्रमाणः

याज्ञवल्क्यः भरद्वाजं प्रति।

यश्चाण्डालोपि रामेति वाचं वदेत्तेन
सहसं वदेत्तंन सहसं वसेत्तेन सहसं भुञ्जीयात् ॥२२५॥

अर्थात्-जो चाण्डाल भी राम ऐसा बचन बोलना तिनके साथमें बोले तिनके साथ बसना तिनके साथ भोजन करना इत्यादि बेदका प्रमाण है इससे जबनीच के साथमें भोजनादिक करनेको कहा है तो पार्वतीजी के साथमें भोजन किया तो क्या दोष है काहे से कि पार्वतीजी तो सब प्रकार से योग्य हैं इससे संगमें भोजन किया। हे शिष्य, धर्मशास्त्र से और वैष्णवशास्त्रसे बहुतही बीचहै काहेसे कि धर्मशास्त्र जो है सो धर्मका का उपदेश कहै और वैष्णवशास्त्र जोहै सो (सर्वधर्मान्परित्यज्य) इसके अनुसार है इससे वैष्णवशास्त्र में सामान्य धर्म करे तो ठीकहा है न करे तो भी ठीकही है काहेसे कि वैष्णव शास्त्र सर्वोपरि है देखो महाभारत में कहा है कि—

शिवलिंगसहस्राणि शालग्रामशतानि च।
द्वादशकोटिविप्राणां श्वपचोप्येक वैष्णवः॥

अर्थ—हजार शिवलिंग के समान सौ शालग्राम के समान द्वादश कोटि ब्राह्मण के समान, एक भी श्वपच वैष्णव के पूजन से फल होता है। ऐसा कहा है इससे वैष्णवशास्त्र सब शास्त्रों के ऊपर है। (प्रश्न) हे स्वामी जी, यह श्लोक तो महाभारत में आजकल नहीं है सो क्या कारण है कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, यह श्लोक प्राचीन महाभारत में है आजकल के महाभारत में नहीं है काहे से कि नीलकण्ठ जो शैव्य रहा सो बड़ा वैष्णव का द्रोही रहा उन्होंने ऐसे २ बहुत श्लोक महाभारतादिक ग्रन्थों से निकाल दिये हैं और शैव्य शाक्त मत कर श्लोक बना के धर दिये हैं इससे आजकल के महाभारत में नहीं है। हे शिष्य, कहने का यह अभिप्राय है कि ऐसे २ सिद्धान्त (मनुस्मृत्यादिक धर्मशास्त्र) में नहीं है काहे से कि उसमें तो केवल वर्णाश्रम का धर्म कहा है भगवत् की भक्ति तो कही नहीं फिर काहे से कहैं इससे भगवत् भक्त कैसा भी हो तो सर्वोपरि है यहां हजारों प्रमाण हैं देने से ग्रन्थ विस्तार हो जायगा इससे थोरे ही में जानना चाहिये इससे शिव साथ में पार्वती जी ने भोजन किया॥ ६॥

हरषे हेतु हेरि हरहीको। कियभूषन तिय भूषनतीको॥

अर्थ—जब शिवजीके बचन सत्यमानके पार्वतीजीने विष्णुसहस्रनाम का पाठ छोड़कर श्रीरामनाम को विष्णुसहस्रनाम के समान जानके जाप किया

तब हर जो शिवजी हैं सो पार्वतीजी के ही का नाम हृदय के हेतु नाम कारण अर्थात् विष्णुसहस्रनाम के समान श्रीरामनाम को जानिके विश्वासपूर्वक जपना इति हेतु। पुनः हमारे बचनमें विश्वास किया इति हेतु, पुनः—तोसरा हेतु सर्वोपरि श्रीरामनाममें अतिशय प्रोति इत्यादि हेतु हेरि नाम देखिके शिवजी कृपालु हरषे नाम बहुत प्रसन्न भये और ती जो हैं स्त्री अर्थात् पार्वतीजी तिनके भूषण जो शिवजो हैं सो ती को अर्थात पार्वती को अपना भूषण किया। भाव–तियभूषण प्रथम से आपर है परंतु जबसे पार्वतीजी ने सहस्रनाम के समान श्रीरामनाम को जानिके, जापकिया तबसे रामनामानन्य जानिके शिवजीनेही पार्वतीजीको अपना भूषणकिया इससे यह दिखाया कि रामनामानुरागी को रामनामानुरागी अतिशय प्रिय होते हैं अथवा तिय भूषण जो पतिव्रता स्त्री हैं तिनके भूषण तियको यानी पार्वती जी को शिवजी ने किया। भाव पतिव्रताओं में शिरोमणि किया इससे उपदेशार्थ यह दिखाया कि जो स्त्री मन वचन कर्म से अपने पति को सर्वस्व जानकर भजती है सो तो पतिव्रता है और जो स्त्री श्रीरामजी को भजती है सो सर्वोपरि पतिव्रताओं में शिरोमणि है (प्रश्न) हे स्वामी जी पतिव्रता स्त्री को तो अपने पति को छोड़कर दूसरे पति को नहीं भजना चाहिये ऐसा शास्त्र का प्रमाण है फिर पार्वती शिवजी को छोड़ कर रामजी को क्यों भजती हैं इस में दोष नहीं है क्या? (उत्तर) हे शिष्य, लौकिक पुरुषों के वास्ते कहा है कुछ भगवत् के वास्ते नहीं काहे से कि भगवत् तो सब चराचर के पति हैं और सब में रमण किया है सो यह प्रसंग भागवत में प्रसिद्ध है गोपियों के प्रकरण में देख लेना और पतिव्रता स्त्री को तो सर्वदा रामनाम जपना चाहिये। यथा प्रमाण नृसिंह पुराणे श्री नारद उवाच याज्ञवल्क्यं प्रति—

रामनामरता नारी सुतं सौभाग्यमीप्सितम्।
भर्त्तुः प्रियत्वं लभते न वैधव्यं कदाचन ॥२२६॥
पतिव्रतानां सर्वासां रामनामानुकीर्त्तनम्।
ऐहिकामुष्मिकं सौख्यंदायकं सर्वशो मुने ॥२२७॥

अर्थ—श्रीरामनाममें जो स्त्री रत रहती है सो पुत्र और सौभाग्य को प्राप्त होती है और अपने पति को प्रिय होती है वह स्त्री विधवा कभी भी नहीं होती

है। सब पतिव्रता स्त्रियों को रामानाम कीर्त्तन करना चाहिए उसको इस लोक में संपूर्ण सुख श्रीरामजी देते हैं ऐसा रामनाम सर्वोपरि है ॥ इसी प्रकार के बहुत प्रमाण हैं इससे रामनाम सब पतिव्रताओं को जपना चाहिए इसमें दोष नहीं है इसी से पार्वतीजी ने जाप किया है। हे शिष्य, रामनाम जो नहीं जपते हैं वही दोषभागी हैं ॥ ७ ॥

नाम प्रभाव जान सिव नीको। कालकूट फल दीन्ह अमी को॥

अर्थ-श्रीगोस्वामीजो कहते हैं कि रामनामका प्रभाव अर्थात् महत्त्व शिवजी नीको नाम अच्छे प्रकारसे जानते हैं काहेसे कि नामही के प्रताप से कालकूट जो विष है सो अमीको नाम अमृत को फल जो अमरत्व है सो दीन्ह नाम दिया है। भाव जब से विषपान किया है तब से अमर हो गये हैं इससे नाम प्रभाव शिवजी अच्छे प्रकार से न जानते तो कालके जो कूटनाम समूह अर्थात् सबका नाश करनेवाला सो क्या शिवजी को सजीव छोडते कभी नहीं छोड़ते परंतु रामनाम के प्रभाव से कुछ भी न भया और उलटे अमर हो गए इससे शिवजी अच्छे प्रकार से जानते हैं यथा प्रमाण-

शृणुध्वं भोगणास्सर्वे रामनाम परं बलम्।
यत्प्रसादान्महादेवो हलाहलमयीं पिबेत् ॥ २२८ ॥
जानाति रामनाम्नस्तु परत्वं गिरिजापतिः।
ततोन्यो नैव जानाति सत्यं सत्यं वचो ममः॥

अर्थ-नन्दीश्वरपुराण में नन्दीश्वरजी ने संपूर्ण शिवगणोंसे कहा है कि हे सर्व गण, आप सब सुनो श्रीरामनाम का परम बल है जिसके कृपा से महादेवजी हलाहल को पीगये हैं इससे रामनाम का परत्व केवल एक शिव जो ही जानते हैं और दूसरे कोई भी नहीं जानते हैं यह मेरा बचन सत्य सत्य है इसी प्रकार से बहुत कहा है। (प्रश्न) हे स्वामीजो, इहां सबको छोड़ कर शिवजी नीकी तरह जानते हैं ऐसा क्यों कहा। (उत्तर) हेशिष्य, जानते हैं रामनामका माहात्म्य सब कोई परन्तु शिवजी के समान दूसरा कोई नहीं जानते हैं काहे से कि शिवजी ईश्वर हैं दूसरे शिवजी से बढकर राम तत्त्व कोई भी नहीं जानते हैं। यथा (तब बोले विधि गिरा सुहाई। जान महेश राम प्रभुताई ॥) इत्यादि कहा है पुनः अच्छो तरह से नाम का प्रभाव न जानते तो सौकोटि रामायण

में से सार रामनाम क्यों लेते और ही क्यों न लिए पुनः नीकी तरह न जानते तो (श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरं संशोभितं सर्वदा) इत्यादि काहे को कहते पुनः अच्छे प्रकार से नाम प्रभाव न जानते तो हलाहल को क्योंकर पीजाते क्या उस समय में ब्रह्मा विष्णु आदि ३३ कोटि देवता लोग रामनाम के ज्ञाता न रहे जो शिवजी ने ही विषपान किया। और ही किसी ने क्यों न पिया इससे जान पड़ता है कि जानते हैं सब कोई सही परंतु शिवजी के समान कोई नहीं जानते हैं इससे नीके कहा पुनः देखिये रामनाम को जपकर कोई एक कृतार्थ होते हैं और शिवजी तो घर भर कृतार्थ हैं और रामनाम ही की कृपा से पंचकोशी काशीजी में सब चराचर को समान् मोक्ष देते हैं ऐसा नाम जापक दूसरा कौन है। यथा-(आकर चारि जीव जग अहहीं। काशी मरत परम पद लहहीं ॥ सोपि राम महिमा मुनिराया। शिव उपदेशु करत करि दाया ॥ पुनः जासु नाम बल शंकर काशी। देत सबहिं समगति अविनाशी ॥) इत्यादि बहुत कहा है इससे नीको कहा और इसी कारण से शिवजी वैष्णव शिरोमणि कहे जाते हैं और जहां कहीं नाम माहात्म्य कहे जाते हैं तहां प्रथमही शिवजी कहे जाते हैं काहे से कि शिवजी सब प्रकार से सर्वोपरि हैं। हे शिष्य, इहां पर्यंत गोस्वामी जी ने श्रीरामनाम को षडक्षर महामन्त्र करके वर्णन किया और मुख्य मुख्य नाम जापकों के द्वारा नाम माहात्म्य भी कहा। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां गोस्वामीजीने चार नाम जापक क्यों कहा इसका अभिप्राय क्या है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य इहां चार नाम जापकों के द्वारा गोस्वामीजीने चारों फल की अर्थात् अर्थ १, धर्म २, काम ३, मोक्ष ४, इन चारों फलों की सिद्धि रामनाम से कही है अर्थात् शिवजी के द्वारा काशी में मोक्ष की सिद्धि कही गणेशजी के द्वारा काम की सिद्धि कही और वाल्मीकि जी के द्वारा अर्थ सिद्ध कही पार्वती जी के द्वारा धर्म की सिद्धि कही इससे चार नाम जापक प्रथम कहा और शिवजी के द्वारा पंचकोशी काशीजी में मोक्ष होना दिखाया और गणेशजी के द्वारा पृथ्वी पर लिखा नाम का माहात्म्य कहा और वाल्मीकी जी के द्वारा उलटा नामका माहात्म्य कहा और पार्वती के द्वारा विष्णुसहस्रनाम के समान रामनाम का माहात्म्य कहा इससे चारों फल नाम माहात्म्य से होता है इससे रामनाम के समान दूसरा कुछ भी नहीं है इससे सब छोड़कर नाम ही

जपो ऐसे ही श्री सीतानाम का माहात्म्य जानना चाहिए काहे से कि युगल स्वरूपएक ही हैं।

3 वरषारितु रघुपति भगति तुलसी सालिसुदास।
रामनाम वर वरन जुग सावन भादव मास ॥ १ ॥

अर्थ—अब श्रीगोस्वामीजी इहां से दोहा पर्य्यन्त श्रीरामनाम को युगाक्षर करके वर्णन करते हैं और रकार मकार का जो परस्पर स्वामी सेवक भावकी अद्भुत प्रीति है सो दिखाते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि रघुपति की जो भक्ति है सोई तो वर्षाऋतु है ऋतु नाम समय अथवा काल इत्यादि एक ही है (प्रश्न) हे स्वामी जी इहां सब ऋतुओं को छोड़कर वर्षा ही ऋतु क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि वर्षा ऋतु जो है सो सब ऋतुवों को सुख देनेवाला है और वृद्धिकारक है इससे वर्षाऋतु कहा अथवा पंचोपासना जो है अर्थात् शिव १ शक्ति २ गणेश ३ सूर्य्य ४ श्रीविष्णुभगवान् इति पंचोपासना सोई तो शरद्ऋतु १ हेमन्त ऋतु२ शिशिर ऋतु३वसन्तऋतु४ ग्रीष्मऋतु यह पांचों ऋतु है और श्रीरामजी की सर्वोपरि जो भक्ति है सोई छठवाँ वर्षाऋतु है। भाव—जैसे वर्षाऋतु करके सब ऋतुओं की शोभा और वृद्धि होती है तैसे ही श्रीरामजी की भक्ति करके पांचों देवकी भक्ति की शोभा व वृद्धि होती है इससे यह दिखाया कि पाँचों देवकी उपासना छोड़कर सर्वोपरि श्रीरामजी की भक्ति करना चाहिये बिना रामजीकी भक्ति किये कल्याण नहीं है इससे वर्षाऋतु कहा अथवा शालिको सुखदायी वर्षाही ऋतु है दूसरा नहीं काहे से कि वर्षाऋतु में धान को बहुत फायदा होती है इसी से गोस्वामीजीने सर्वत्र दास को शालिकी उपमा दी है। यथा (सेवक शालिपाल जलधर से। पुनः—सो जल सुकृति शालिहित होई। रामभगत जग जीवन सोई) इत्यादि सर्वत्र कहा है इससे इहाँ शालिसुदास के वास्ते रामजीकी भक्ति को वर्षाऋतु कहा। भाव-जैसे वर्षाकाल सबको सुखप्रद है परन्तु शालि को विशेष सुखदेने वाला है तैसे ही रामजी को भक्ति सबको सुखदायी है परन्तु दास को विशेष करके सुखदायी है इससे वर्षाऋतु कहा। पुनः तुलसी शालिसुदास अर्थात् गोस्वामीजी कहते हैं कि सुदास जो हैं सोई तो शालि नाम धान हैं अथवा इहाँ ऐसा अर्थ जो करो कि तुलसीदास जो सुदास हैं

सोई शालि हैं तो यह अर्थ अनर्थ है काहे से कि गोस्वामीजीने अपने को सुदास कहीं नहीं कहा है और न कहते हैं गोस्वामीजीने तो अपने को सर्वत्र कुदास ही कहा है। यथा-(रामसुस्वामि कुसेवक मोसे। निज दिसि देखि दयानिधि पोसे॥ पुनः—आपुनि समुझि साधु सुचि कोभा) इत्यादि कहा है इससे इहां और ही भक्तों को सुदास कहाहै। (प्रश्न) हे स्वामी जी, इहां किनको कहा हैं और सुदास कहने का क्या भाव हैं सो कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, सुनो इहां गोस्वामीजी ने शालि और दास के मध्य में सुपद दिया है इससे (सु) पद दूनों में जानना चाहिये अर्थात् सुशालि सुदास हैं (प्रश्न) हे स्वामीजी सुशालि कौन हैं सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, शालि दो प्रकार के होते हैं एक तो जोतने बोवने से होते हैं सो तो सम्पूर्ण धानमात्र जानना चाहिये यद्यपि करके वर्षाऋतु सब शालिको फायदाकारक है परन्तु बीच २ में निरावना भी पड़ता है इससे एकही बार सर्वदा जलन चाहिये काहे से कि सर्वदा पानी होनेसे बराबर वृद्धि नहीं होतो है इससे समय २ पर जल होना चाहिये दूसरे और सब धान बहुत दिनों में होते हैं इससे सबको शालि जानना चाहिये और दूसरा सुशालि उसको कहते हैं कि को बिना जोते बोये ही होती हैं जिसको पूर्व देशमें नामही जलधान कहते हैं उसीको अहोरा भी कहते हैं जिसको अपने मध्यप्रदेश में यानी अयोध्या काशी प्रयाग के बीचमें तीनीके चावल कहते हैं यह धान दोई महीने के भीतर होते हैं और इन धानों को हमेशा पानी चाहिये जितना ही पानी चाहिये उतनाहो फायदा होती है और यह धान परम शुद्ध है इसको ऋषिअन्न कहते हैं और हविष्य में गिने जाते हैं। हे शिष्य इस देश में एक बड़ा भारी पर्व होता है वह पर्व भादों बदी छठके दिन होता है जिसेकि हरछठ कहते हैं इस पर्वमें स्त्रियाँ व्रत रहती हैं और इसी तीनी के चावल खाती हैं इससे इसको सुशालि जानना चाहिये। हे शिष्य, अब सुदास कहने का भाव सुनो भगवद्दास चार प्रकारके हैं अर्थात् आर्त्त १, जिज्ञासु २, अर्थार्थी ३, ज्ञानी ४, सोई तो सबदास हैं और पंचम जो प्रेमी भक्त हैं सो इहां सुदास हैं इन पाचों भक्तोंको गोस्वामी जी आगे वर्णन करेंगे इससे यह दिखाया कि जैसे वर्षाकाल सबको सुखदेने वाला है परंतु शालि को विशेष सुखदायी है तिसमें भी सुशालि को अतिशय सुखदायी है तैसेही श्रीरामजीकी भक्ति सबको सुखदायी है परंतु चारप्रकारके जो पूर्वोक्त भक्त हैं तिनको विशेष सुखदायी है

और सुदासको अतिशय सुखदायी है। हे शिष्य, अब गोस्वामीजी, वर्षाऋतुके जो दो महीना मुख्य है सो दिखाते हैं रघुपति की जो भक्ति है वर्षाऋतु के समान तिस में रामनामके जो वर नाम श्रेष्ठ युग नाम दोऊवरण नाम अक्षर हैं अर्थात् रकार और मकार सोई तो श्रावण और भाद्रपद मास नाम महीने हैं। भाव-जैसे वर्षाऋतु में श्रावण भादों दोई महीना मुख्य है और दोई महीना मिलके वर्षाऋतु होता है तैसेही श्रीरामजीकी भक्ति में राम नाम ही दो अक्षर मुख्य है और रामनाम ही दोऊ अक्षर मिलकर भक्ति होतीहै। भाव-राम नामही जपना मुख्य भक्तिहै इससे यह दिखाया कि जैसे वर्षाकालमें दोई महीना शालि सुशालि को सुखदायी है तैसेही रामजी की भक्तिमें भी राम नाम ही सब दास सुदास को सुखदायी है बिना नामजपे कल्याण नहीं है॥ १॥

आषर मधुर मनोहर दोऊ। बरन बिलोचन जन जियँजोऊ॥

अर्थ-पुनः वह रामनाम दोउ आंखर नाम अक्षर कैसे हैं कि मधुर नाममीठे हैं यानी बड़े स्वादिष्ट हैं और मनोहर हैं। मनोहर उसको कहते हैं कि जिसके देखने से स्वाभाविक चिताकर्षण होजावै। (प्रश्न) हे स्वामीजी, रामनाम मधुर भी नहीं लगता है और मनोहर भी नहीं लगता फिर मधुर मनोहर क्यों कहा इसका यथार्थ भेद समझा कर कहिये। (उत्तर) हेशिष्य, इसका यथार्थ भेद बिना राम नाम को कुछ दिन जपे नहीं जान परैगा काहे से कि न तो प्राकृत मीठा है जो मधुर लगैगा और न रकार जो मकार के प्राकृत रूपही हैं मनोहर लगै यह तो अनिर्वचनीय मधुर है और आश्चर्य्यस्वरूप है जब संपूर्ण वासनाको छोड़कर एकान्त होकर कुछ दिन रामनामको रटोगे तब वाग्दोष नाश होगा और अन्तःकरण के दिव्य होने से तब यथार्थ मधुर मनोहर लगेगा। हे शिष्य, इस प्राकृत जिह्वा से और नेत्र से कभी भी मधुर मनोहर न लगेगा क्योंकि इहां पर गोस्वामीजी ने निज दशा प्राप्ति की व्यवस्था लिखी है अर्थात् जब रामनामको गोस्वामीजीने जाप किया है जब मधुर मनोहर लगा है तब ऐसा लिखा है इससे इहां और दूसरा आशय नहीं है दूसरे मनोहर कहने से रकार मकारका स्वरूप सूचित किया अर्थात् रकार परब्रह्म रामस्वरूप हैं और मकार शुद्ध जीवस्वरूप लक्ष्मणजी हैं। यथा—(रकारो रामरूपस्तु मकारस्तस्य सेवकः) अर्थात् रकार रामरूप हैं मकार उनके सेवक लक्ष्मणजी हैं ऐसा (विश्वामित्रसंहिता) में कहा है

इससे मनोहर कहा और मधुर तो हई हैं । यथा (कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् इत्यादि कहा है। (प्रश्न) हे स्वामी जी, कोई २ ऐसा कहते हैं कि रामनाम उच्चारण करने में जैसा मधुर नाम स्पष्ट जान परता है तैसा दसरा नाम नहीं और जैसा रामनाम दोऊ अक्षरकी पंक्ति (रामराम रामराम) मनोहर देखनेमें लगती है तैसा दूसरे नामकी नहीं लगती है ऐसा अर्थ करते हैं और आप तो विलक्षण ही कहते हैं सो क्या है ! [उत्तर] हे शिष्य, मधुर नाम मीठे ही का है और मनोहर तो उसी हो को कहते हैं कि जो बड़ा अपूर्व सुन्दर हो जिसको देखनेसे मनहर जावे हे शिष्य, तुम स्वतः अपने मनमें विचारकर देखो कि जो सबको मीठा और मनोहर लगता तो कोई भी रामनामको नही छोड़ता सब कोई जपते और सुन्दरता देखते सो कोई में भी नहीं देखते हैं और न कोई रामनामको जपते ही है उससे पूर्वोक्त ही अर्थ ठीक है। हे शिष्य, केवल नामानुरागियों को मीठा और मनोहर जान परता हैं। जो रामनामके समान दूसरा कुछ भी नहीं जानते हैं और यह बात सर्वथा सत्य जानना कि जबतक संसार के पदार्थ मधुर और मनोहर लगरहे हैं तबतक रामनाम मधुर और मनोहर लगना दुर्लभ ही है क्योंकि दोहावली में श्रीगोस्वामीजीने कहा है ।

तुलसी जौंलो जगत की मुधा माधुरी मीठि ।
तौंलो सुधा सहस्र सम राम भगति सुठि सीठि ॥

अर्थात् जब तक विषय भोग मीठा लगता है, तब तक अमृत से सहस्रो गुण अधिक प्रिय श्रीराम भक्ति फीकी लगती है इत्यादि कहा है। यह सब महात्मनका सिद्धान्त है इसमें संदेह न करना इहां दशाप्राप्तिका हाल गोस्वामीजीने लिखा है इससे मधुर मनोहर कहा है। पुनः-वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि वर्ण जो अक्षर है यानी ॐकार उनके विलोचन नाम नेत्र हैं। [प्रश्न] हेस्वामीजी, इहां सब अक्षरोंका नेत्र कहाहै आप ॐ कार के नेत्र कहते हैं सो क्यों ? (उत्तर) हे शिष्य, इहां केवल एकाक्षर ही ॐकारका नेत्र कहा है सब अक्षरों के नहीं काहेसे कि नीचे दोहा में कहेंगे कि (एकु छत्र एकु मुकुटमनि सब बरननि पर जोउ) इत्यादि कहैंगे तो विरुद्ध होजायगा काहेसे कि जो इहां सब अक्षरोंनेत्रही कहेतो पुनःछत्र मुकुट कहने का कुछ प्रयोजन नहींहै दोमें

एकहो कहना होगा इससे इहां वर्ण ॐकार ही को जानना चाहिये इसी से वर्ण एकवचन गोस्वामी जीने इहां कहा है और दोहा में बहु बचन कहा है कि (सब वरननि पर जोउ) इत्यादि इससे इहां एकाक्षरही ॐकारका अर्थ जानना चाहिये। [प्रश्न] हेस्वामीजी, ॐकारमें भी तो तीन अक्षर हैं आप एकाक्षर कैसे कहते हैं (उत्तर) हे शिष्य, ॐ कार तीन अक्षर के हैं षडक्षरात्मक भी हैं परंतु कहाजाता है एकाक्षर ही। यथा (गीतायाम्—ओमित्येकाक्षरं ब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन्) ऐसा कहा है इससे ॐकार अक्षर जो हैं सो परब्रह्मके स्वरूप हैं और सम्पूर्ण संसार के कर्त्ता हैं जिसके नेत्र रामनाम दोउ अक्षर हैं। हेशिष्य नेत्रकहने का भाव यह है कि सर्वाङ्ग में प्रधान मुख्य नेत्र है दूसरे नेत्रबिना व्यवहार नहीं होसकता है और ॐकार ब्रह्म सम्पूर्ण संसार के कर्ता हैं इससे बिना नेत्र कैसे बनैगा इससे नेत्र कहा काहेसे कि प्रधान नेत्र है। यथा [मोरे राम भरत दुइ आंखी। सत्य कहौं करि शंकर शाखी ॥ पुनः—गारी सकल कैकइहि देहीं। नयन विहीन किये जग जेही ॥ पुनः-हरषित हृदय मातु पहँ आये। मनहुँ अन्ध फिर लोचन पाये ॥ पुनः—जनम रंक जनु पारस पावा। अन्धहि लोचन लाभ सुहावा ॥ इत्यादि] सर्वत्र कहा है इससे नेत्र सब का मुख्य है इससे नेत्र कहा इससे गोस्वामीजीने यह दिखाया कि ॐ कार से भी रामनाम श्रेष्ठ है। पुनः—जोउ रामनाम कैसे हैं कि जन जो दास हैं तिनके जिय नाम प्राणहैं अथवा जन जो विद्वान् लोग हैं सो अपने जिय नाम मनमें जोऊ नाम देखें कि रामनाम दोउ आखर मधुर मनोहर और ॐकारके नेत्र हैं कि नहीं ॥ १ ॥

सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निबाहू॥

अर्थ—पुनः वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि सुमिरत नाम स्मरण करते ही मात्र में सब काहू को सुलभ हैं और सुखद नाम सुख देने वाले हैं (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां सुमिरत सुलभ और सब काहू को क्यों कहा [उत्तर] हे शिष्य, सुमिरत सुलभ कहनेका भाव यह है कि बिना सुमिरन वाले को तो सब प्रकार से दुर्लभ है और स्मरण करनेवाले को तो सुमिरत ही मात्र में सुलभ होजाते हैं और सुख के देनेवाले होजाते हैं। भाव कुछ कालांतर में सुलभ सुखद नहीं होते हैं इससे सुलभ सुख कहा। अब पूर्वोक्त चौपाई का संदेह निवारण करते हैं जो कदापि कोई कहे कि रामनाम दोऊ आखर

की मधुर मनोहरता नहींहै जो होती तो सबका ज्ञानपरतो तिसपर गोस्वामीजी कहते हैं कि रामनाम दोऊ अक्षर मधुर और मनोहर हैं सो मधुर और मनोहर सुमिरते ही मात्र में सब काहू को सुलभ और सुख के देने वाले हैं। भाव बिना नाम जपे वह मधुरता और मनोहरता सब काहू को दुर्लभहै। काहे से कि अनिवर्चनीय है इससे केवल नामही जपने से सुलभ होती है और सबकाहू को कहने का यह भाव है कि और जितने मंत्र यंत्र हैं तिनमें प्रथम अधिकारी होना चाहिए, पुनः विधि पूर्वक जपै तत्पश्चात्कालांतर पायके सुलभ सुखद होता है तिसमें भी सब काहू को नहीं केवल अधिकारी को। औररामनाम तो ऐसा दयालु और उदार हैं कि ऊंच नीच राजा रंक सब काहूको सुलभ और सुखद हैं। यथा (विनयपत्रिकाराम शांवरो नाम साधु सुरतरू है। सुमिरे त्रिविध धाम हरत पूरत काम सकल सुकृत सरसिज हू को सरुहै॥ लाभ हू को लाभ सुख सर्वसू पति पावन डरहू को डरुहै। नीचहू को ऊँचहू को रंकहू को रायहू को सुलभ सुखद आपनो सो घरु है॥ वेदहू पुराणहू पुरारि हूँ पुकारि कह्यो रामनाम प्रेम चारि फलहूँ को फरु है॥ ऐसे रामनाम सों न प्रीति न प्रीतीति मन मेरे जान जानिबो सो नरखरु है। नाम सो न मातु पितु मीत हित बंधु गुरु साहिब सभी सुसील सुधा करु है। नामसों निबाहु नेहु दीन को दयाल देहु दासतुलसी को बलि बरु है॥ इत्यादि) बहुतही कहा है इससे रामनाम के समान उदार दूसरा कोई भी नहीं है सो पूर्वहीमें कहाहै कि (एहि महु रघुपति नाम उदारा) सो एहि सब उदारताका गुण हैं इससे सब काहू को कहा। पुनः—वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि लोकलाहु अर्थात् संसार में लाभकारक है। भाव भोजन छादन निर्बाह मात्र अच्छीतरहसे रखते हैं और शरीरांत के पीछे परलोक अर्थात् साकेतलोक में निबाहू नाम निर्बाहकारक हैं अर्थात् श्रीसीतारामजीकी सामीप्यताको प्राप्ति करने वाले हैं। यथा (विनयपत्रिका-रोटी लूंगा निके राषे आगहूके वेद भाषै भलो होइ है ताने तेरो आनन्द लहतहौं॥ इत्यादि) कहा है इससे यह दिखाया कि बिना रामनाम के जपे परलोक में निर्बाह होना दुर्ल्लभ है ताते रामनाम अवश्यमेव जपो। हेशिष्य, एहि रामनाम परलोक के लिये खर्चा है और एहि रामनाम सर्वोपरि श्रीसाकेतलोकको पहुँचानेवाला है। यथा पद्मपुराणे-

सर्वपापवि निर्मुक्ता नाममात्रैकजल्पकाः॥ जानकीवल्लभ·

स्यापि धाम्नि गच्छन्ति सादरम्॥ २३०॥ दुर्लभं योगिनां नित्यं स्थानं साकेतसंज्ञकम्॥ सुखपूर्वं लभेत्तत्तु नामसंराधनात्प्रिये॥ २३१॥

अर्थ—शिवजी बोलेकि संपूर्ण उपायसे रहित होकर जो केवल एक नामही मात्र को जपते हैं सो पुरुष आदरपूर्वक जानकीवल्लभ श्रीरामजी के परधाम को जाते हैं जो योगियों को भी दुर्ल्लभ है जिसकी साकेतलोक ऐसी संज्ञा है। हे प्रिये, वह साकेत लोक श्रीरामनामके जपनेसे सुखपूर्वक प्राप्त होता है इत्यादि बहुत प्रमाण हैं इससे परलोक के वास्ते रामनाम पूरा खर्चा है इससे परलोक निबाहू कहा। और लोकमें तो रामनाम लाभदायक प्रसिद्धही है कि जो महात्मा नामको जपते हैं तिनके सामने बड़े२ राजा महाराजा हाथ जोड़े सब पदार्थ लिये खड़े रहते हैं॥ २॥

कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके। रामलषन सम प्रिय तुलसीके॥

अर्थ—पुनः वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि कहत में अर्थात् सत्संगमें परस्पर कहने में और सुनत नाम दूसरे के मुखसे कहा भया सुनने में और सुमिरत नाम स्वतः स्मरण करने में सुठि नाम अतिशय नीके नाम नीक हैं। भाव जैसा रामनाम कहने में और सुनने में और स्मरण करने में सुन्दर नीक लागत हैं तैसा दूसरा कोई पदार्थ कहने में और स्मरण करने में सुन्दर नीक नहीं लागत है हे शिष्य, दूसरा अर्थ यह है कि कहने से और सुनने से स्मरण करनाही सुन्दर नीक है काहे से कि बिना रामनाम स्मरण किये ठीक नहीं है चाहो कुछ करो इहां गोस्वामीजी ने तीन बात कहीं है पृथम कहना तब सुनना इससे परस्पर सत्संग जनाया कि संतनका सत्संग करना चाहिये क्योंकि (बिनु सतसंग बिबेक न कोई इत्यादि सत्संग बिना कुछभी नहीं होता है तिसमें भी यह दिखाया कि सत्संग में भी राम नामही का यश कहना अथवा सुनना चाहिये दूसरी बात न कहनी वा सुननी चाहिये काहेसे कि और सब कहना बृथा है। पुनः—तीसरा सुमिरन सुठिनीके कहा इस से यह

दिखाया कि कहना भी और सुनना भी परंतु जपना सुन्दर नीक है काहेसे कि कहा सुना और स्मरण न किया तो कौन काम है जैसे नाना प्रकार के पदार्थ रात्रि दिन बखान करे और भोजन न करे तो कौन काम के हैं तैसे ही इहां कहना और सुनना जो है सो तो बखान करनाहै और प्रेम पूर्वक श्रीसीताराम सीताराम जपना सोइ ता भोजन करना है ताते कहने से सुनने से स्मरण करना सर्वोपरिहै और एहि सत्संगका फल है नहीं तो सत्संग करना वृथा है इसीसे अन्तमें सुमिरत सुठिनीके कहा। पुनः—वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं, कि रामलषण के सम नाम बराबर तुलसीको प्रिय हैं इहां रामलषण सम कहनेसे यह सिद्धभया कि रकार परब्रह्म श्रीरामजी हैं और मकार लक्ष्मण जी हैं। हे शिष्य, इहां पूर्वोक्त मनोहर शब्दका अर्थ स्पष्ट कर दिया अब इहांसे ब्रह्म और जीवकी उपमा देकर रकार मकार को वर्णन करते हैं और रकार मकार की जो परस्पर स्वामि सेवकभावकी प्रीति है सो दिखाते हैं। (प्रश्न) हेस्वामी जी, इहां पै गोस्वामी जी, ने राम लषण से प्रिय अपने को क्यों कहा श्रीजानकी जी को क्यों नहीं कहा ? (उत्तर) हे शिष्य, जानकी जी को कहने का क्या प्रयोजन है काहे से कि सीता रामजी तो दोनों तत्त्व करके एक ही हैं सो ऊपर में ही कह आये हैं इससे जहां रामजी को कहा तहां जानकीजी होगईं और लक्ष्मणजी को प्रिय इस वास्ते कहा कि श्रीलक्ष्मजी भक्त हैं बिना साधु की कृपा भये रामजी की प्राप्ति होना दुर्ल्लभ है और जिनकी गुरुमें प्रेम भक्ति नहीं है उनको रामजी में भी प्रेम नहीं है और न प्रेम भक्ति होसकती हैं इससे रामजी में और आचार्य्य में सम प्रेम भक्ति होनाही योग्य है। यथा—(यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ) ऐसी श्रुति कहती है कि जैसे ईश्वर में भक्ति होनी तैसे ही गुरुमें भी भक्ति होनी चाहिये इससे गोस्वामीजी ने लक्ष्मणजीको प्रिय कहा॥ ३॥

वरनत बरन प्रीति बिलगाती। ब्रह्म जीव सम सहज संघाती॥४॥

अर्थ अब श्रीगोस्वामी जी रकार और मकार दोऊ अक्षर की जो परस्पर सेव्य सेवक भावकी प्रीति है सो दिखाते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि वरनत नाम वर्णन करत मात्र में वर्ण जो अक्षर हैं अर्थात् रकार मकार तिनमें जो परस्पर स्वामी सेवकभाव की जो प्रीति है सो बिलगाती नाम बिलग होती है

भाव जब तक कि रकार के स्वरूप और मकार के स्वरूप भिन्न २ करके नहीं वर्णन किया जावे तब तक यह नहीं जान पड़ता है कि कौन ब्रह्म के स्वरूपहैं कौन जीव का स्वरूप है और किन की प्रीति किन भावकी है यह बिना वर्णन किये नहिं बिलगाती है और जहां भिन्न २ करके वर्णन करिए तहां स्वामी सेवक भाव की प्रीति बिलग होजाती है (प्रश्न) हे स्वामीजी. इहां स्वामी सेवकभाव की प्रीति वर्णन करने से बिलगाती है कि रकार मकार दोऊ अक्षर ही वर्णन करने से बिलग होजाते हैं अर्थात् अक्षरांतर होजाते हैं कोई २ कहते हैं कि रकार और मकार दोऊ अक्षर ही बिलग होजाते हैं सो निश्चयार्थ कौन है कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इहां प्रीतिही बिलगाती है कुछ रकार मकार अक्षर नहीं बिलगाते हैं रकारमकार तो सर्वदा नित्य हैं और न रकार मकार की प्रीति ही बिलगाती प्रीति भी नित्य है और सर्वदा संग बनी रहती है केवल प्रीतिके जो भेद है स्वामी सेवक भावकी सो सो बिलगाती है इहां वर्णन करने से बिलगाती है देखने सुनने से तो सब प्रकारसे बराबर हैं। [प्रश्न] हेस्वामीजी, बराबर कैसे हैं सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, बराबर इसप्रकार से हैं कि रामनाम दोउ आखर श्रावण भाद्रपद महीना हैं पुनः दोउ आखर मधुर मनोहर हैं पुनः वर्णके विलोचन दोउ हैं जनके प्राण दोउ हैं। पुनः कहत में सुनतमें सुमिरत में सुठि नीक दोउ हैं लोकलाहु परलोक निबाहु दोउ हैं और रामलषणके समान तुलसीको दोऊप्रिय हैं। पुनः-ब्रह्मजीवके समान दोऊ सहज में संघाती हैं। पुनः—नर नारायणके सरिस नाम बराबर सुन्दर भ्राता दोऊ हैं जगपालक विशेषजन त्राता दोऊ हैं भक्ति रूपी सुन्दर स्त्री के कर्णपूर भूषण दोऊ हैं जगहितहेतु विमल चन्द्रमा सूर्य्य दोऊ हैं सुगतिरूप अमृत के स्वादु तोष सम दोऊ हैं। पुनः-कमठ शेष सम बसुधाधर दोऊ हैं। जनमन कंजके भ्रमररूप दोऊ हैं। पुनः—जिह्वारूप यशोदाजीको कृष्ण बलदेव सम दोऊ प्रिय हैं। पुनः—अन्तमें एक छत्र एक मुकुटमणि होके सब अक्षरन पर दोऊ विराजमान होरहे हैं। भाव अनिर्वचनीय दोऊ हैं। हे शिष्य, इसी से रामनाम दोऊ अक्षर तत्त्व महत्त्व अथवा रूप करके सम हैं, परन्तु परस्पर प्रीति जो है सो स्वामी सेवकभाव की है सो विना वर्णन किये नहीं बिलगाती

हैं और जब वर्णन करो तब जान परता है कि रकार परब्रह्म के स्वरूप हैं और मकार जीवका स्वरूप है और रकारकी प्रीति मकारसे सेवकभाव की है और मकारकी प्रीति रकारसे स्वामीभाव की है यह स्वामी सेवकभावकी प्रीति बिना वर्णन किये नहीं बिलगातो है। पुनः- वह दोऊ अक्षर कैसे हैं कि ब्रह्म और जोवके समान सहज नाम स्वाभाविक संघाती नाम साथी हैं। भाव जैसे ब्रह्म और जीव सदा के साथी हैं कदापि कोईलमें भी भिन्न नहीं होतेहैं तैसेही रकार और मकार दोऊ अक्षर सदा साथ रहते हैं कोई कालमें बिलग नहीं होते हैं इससे रकार मकार की केवल प्रीतिही बिलगाती है कुछ रकार मकार अक्षर नहीं बिलग होते हैं। हे शिष्य, इसीवास्ते इहां ब्रह्म जीवकी उपमा गोस्वामीजी ने दी है इससे इहाँ मुख्यार्थ यह जानना कि जैसे ब्रह्म और जीव दोऊ देखने में सम हैं और संघाती है परन्तु परस्पर प्रीति स्वामी सेवकभाव की है। यथा (सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू। ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू॥) इत्यादि कहा है सो यह स्वामी सेवकभाव की प्रीति विना वर्णन किये नहीं बिलगाती है जब ब्रह्म और जीवका यथार्थ स्वरूप भिन्न २ करके वर्णन करो तव प्रीति बिलग होजाती है । पुनः--(रामलषण सम प्रिय तुलसीके इति।) इहांपर भी रामलषण सब प्रकार से समान हैं और सहज साथी हैं, परंच परस्पर प्रीति स्वामि सेवकभावकी है सो वर्णन करे तव बिलगाती है इसीप्रकार से रकार और मकार की प्रीति जानो। पुनः—नर नारायण सरिस सुभ्राता इति। इहांपर भी सबप्रकार से सरिससुभ्राता हैं और सहजसंघाती हैं परन्तु परस्पर प्रीति स्वामी सेवकभावकी है सो वर्णन करनेसे बिलगाती है। पुनः--कमठ शेष समधर बसुधाके इति। इहांपरभी सब प्रकार से समहैं और सहजसंघाती हैं, परन्तु परस्पर स्वामी सेवकभावकी प्रीति है सो वर्णन करो तब बिलगाती है कि, कच्छप जी ईश्वर हैं शेषजी जीव हैं इनकी प्रीति परस्पर स्वामी सेवकभावकी है सो वर्णन करने से बिलगाती है। पुनः--(जीह जशोमति हरि हलधर से) इति इहांपर भी कृष्ण बलदेवजीसब

प्रकारसे समहैं और सहज साथी हैं, परंतु परस्पर प्रीति स्वामी सेवकभावकी है सो वर्णन करनेसे बिलगाती है नहीं तो नहीं बिलगाती है । हे शिष्य, यही अर्थ ठीक है और इसीलिये गोस्वामीजीने सर्वत्र ब्रह्म और जीवकी उपमा दी है सो केवल प्रीति और एक साथीपन दिखानेही के वास्ते कहा है और यह तो प्रसिद्ध ही दिखाया कि रकार रामजी हैं मकार लक्ष्मणजी हैं। पुनः—ब्रह्म जीव सम कहने से रकार ब्रह्म हैं मकार जीव है। पुनः— नरनारायण कहने से रकार नारायण है मकार जीवहैं। पुनः—कमठ शेष सम कहनेसे रकार ब्रह्मस्वरूप कच्छपजी हैं मकारशेषजी है। पुनः—हरि हलधर के कहनेसे रकार कृष्णजी हैं मकार हलधर जीव हैं। भाव जो है सो रामनामही है और रामनामही से सर्वा-वतार भये हैं इससे रामनाम सर्वोपरि है यह दिखाया। (प्रश्न) हे स्वामीजी, कोई २ कहते हैं कि जैसे ब्रह्म और जीव सहज संघाती है परंतु माया करके जीव ब्रह्म भिन्न होजाते हैं तैसेही रकार और मकार दोऊ सहज संघाती हैं, परंतु वर्णनरूप उपाधि करके रकार और मकार की प्रीति बिलग होजाती है अर्थात् रकार अक्षर अलग होजाता है मकार अक्षर अलग होजाता है इससे प्रीतिभी अलग होजाती है ऐसा कहते हैं सो निश्चय क्या है कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इस में बार २ बूझने का कोई कामनहीं है काहेसे कि रामनाम के जो रकार मकार दोऊ अक्षर हैं सो प्राकृत नहीं हैं यह तो सबसे परे हैं और नित्य हैं माया से रहित हैं कभी कोई काल में बिलग नहीं होते हैं और रकार मकार जो अलग ही हो जांयगे तो राम शब्दही कहां सिद्ध होगा। रामशब्द तो तबही सिद्धहोगा कि जब रकार और मकार दूनों एकत्र होंगे और राम शब्द जो है सोतो अनादि है जब कि वेद भी नहीं रहा और न कोई अक्षरही रहा, अक्षर और वेद तो नाम ही से भये हैं सो पूर्वही में कह आए है। (प्रश्न) हेस्वामीजी, यवर्गी रकार और पवर्गी मकार जो हैं सोई रामनाम है कि कोई दूसरा रामनाम है। (उत्तर) हेशिष्य, यवर्गी रकार और पवर्गी मकार जो है सो यथार्थ रामनाम वाला रकार मकार नहीं है रामनाम तो स्वतः सिद्ध है। यवर्गी रकार और पवर्गी मकार जो है सो तो प्राकृत है इनको एकत्र करो और मात्राको मिलाओ तब कहीं राम शब्द सिद्ध होता है सो रामनाम नहीं है। हां, इतना है कि यह अक्षर वाले जो रकार मकार हैं सो उस नित्य रकार मकार को जनाने वाले हैं अर्थात् इस रकार मकार से परस्वरूप रामनामका बोध

होता है। हेशिष्य, यह अक्षर वाला रकार मकार तो स्वतः बिलग २ है इसकी क्या प्रीति वर्णन से बिलगाती है इससे पूर्वोक्त ही अर्थ ठीक है। और तुमने जो कहाकि, ब्रह्म जीव माया करके बिलग होजाते है, सो भी असत्य है और शास्त्र से विरुद्ध है काहेसे कि जीव और ब्रह्म तो सर्वदा साथही रहते ह और परस्पर के सखा हैं। यथाप्रमाण—

द्वासुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृत्तं परिषस्वजाते।
तयोरेकःपिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नोभिचाकशीतीतिश्रुतिः।२३२।

अर्थ—दो पक्षी संग संग रहने वाले परस्पर सखा समान एक वृक्षपर रहते हैं उनमें से एक उस बृक्ष के स्वादु फल खाता है दूसरा खाये बिन प्रकाश करता। भाव ईश्वर और जीव परस्पर सखा हैं दूनों सर्वदा संग संग रहते हैं सो एक सरीखे देहमें रहते हैं। उनमें से एक जीव जो है सो शरीर करके उत्पन्न शुभाशुभ कर्मरूप फलोंको भोगता है और दूसरा जो ईश्वर है सो साक्षीमात्र प्रकाश करता है इत्यादि श्रुति का प्रमाण हे! इससे हे शिष्य, ऐसा कभीभी नहीं कहना कि जीव और ईश्वर भिन्न होजाते हैं और न जीव ब्रह्मको एक ही कहना नही तो विद्वान् लोग मूर्ख कहेंगे, ईश्वर और जीव तो सर्वदा संग रहते हैं कभी अलग नहीं होते हैं। तैसे ही रकार और मकार कभी अलग नहीं होते है सर्वदा संग रहते हैं इससे पूर्वोक्तही अर्थ ठीक है। और एक अर्थ ऐसाभी महात्मा लोग करते हैं कि रकार और मकार दोऊ अक्षर वर्णत नाम वर्णत करनेमें वर नाम श्रेष्ठ है और न प्रीति बिलगाती है, भाव सर्वदा संग बनी रहती है ऐसा कहते हैं। परंतु, अर्थ पूर्वही के ठीक है काहेसे कि स्वामी सेवकभावकी प्रीति न बिलग होगी तो जान कैसे पड़ैगा कि रकार परब्रह्म हैं और मकार जीव स्वरूप है इहां गोस्वामीजी का आश्चर्य्य कहना है इसको अच्छी तरह से समझना चाहिए॥ ४॥

नरनारायन सरिस सुभ्राता। जगपालक बिसेषिजनत्राता॥

अर्थ—पुनः वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि नर और नारायण के सरिस नाम बराबर सुनाम सुष्टु यानी सुन्दर भ्राता नाम भाई हैं अर्थात् जैसे धर्मकी पत्नी में नर जीव और नारायण दोऊ मूर्ति ने अवतार लेके जग जो संसार है तिसका पालन किया और जन जो दास हैं तिनकी विशेष करके

त्राता नाम रक्षा की। तैसेही रकार और मकार जो दोऊ अक्षर हैं सो संपूर्ण संसार का पोषण पालन करने वाले हैं। परंतु जन जो दास है अर्थात् रामनाम के जापक तिनकी विशेष करके रक्षा करने वाले हैं। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां गोस्वामीजो ने दो बात कहीं एकतो सरिस सुभ्राता कहा दूसरी जनत्राता विशेष कहा तिसमें जनत्राता तो विशेष कर के हईहैं, काहे से कि दास बहुत प्रिय हैं इससे विशेष जनत्राता कहा परन्तु. सुभ्राता क्यों कहा काहेसे कि नारायण ने तो धर्म के गृहमें अवतार लिया इससे सुभ्राता कहे गये और रकार मकार तो माता पिता से रहित हैं। पुनः—सुभ्राता कैसे भये जो सरिस सुभ्राता कहा इसका भेद कृपा करके कहिए.काहेसे कि बिना माता पिताके भ्रातृत्त्व होना असंभव है। (उत्तर) हेशिष्य, इसका आशय यह है कि जब इहां गोस्वामीजीने स्वयं सरिस सुभ्राता कहा तो निश्चय करके रकार मकार के माता पिता हैं काहेसे कि जो माता पिता न होते तो गोस्वामीजो कभी नहीं सुभ्राता कहते। इससे हेशिष्य, इहाँ ऐसा जानो कि स्वयं रकार मकार ही दशरथात्मज राम लक्ष्मण भये हैं और दशरथ कौशल्या ही रकार मकार के माता पिता अनादिकाल से हैं । इसीसे (ब्रह्मांभोधिसमुद्भवं) कहा है। अर्थात् ब्रह्म नाम वेदसे रामनाम उत्पन्न भया है और वेदहीं का अवतार दशरथजी हैं सो पूर्वही में कह आये हैं। पुन—नाम वंदना में (वेदप्राणसो) कहा यानी राम नाम वेदका प्राण है और राम नामही दोऊ अक्षर राम लक्ष्मण भये हैं इसीसे प्राणरूप राम लक्ष्मण के त्याग में राजा दशरथजी के प्राण छूटे इससे सुभ्राता कहा और जैसे भ्रातृत्त्व रकार मकार में है तैसेही भ्रातृत्त्व राम लक्ष्मण में है। पुनः—तैसेही भ्रातृत्त्व नर नारायण में है और तैसेही भ्रातृत्त्व हरि हलधर में है। इससे यह दिखाया कि रकार मकार ही राम लक्ष्मण भये हैं, रकार मकारही नर नारायण भये हैं, रकार मकारही हरि हलधर भये हैं । भाव।सर्वावतार रामनामही से भये हैं और युगयुग में होते हैं सो पूर्वही में वर्णन किया है इससे रामनाम सर्वोपरि हैं और सबका आदिकारण है और जगपालक विशेष जनरक्षक रामनाम हो है भाव जब २ धर्मकी हानि हुई है और दासको दुःख भया है तब २ रामनामहो ने नानाप्रकार के अवतार धारण करके सबकी रक्षा की है इससे जनरक्षक नाम भजो ॥ ५ ॥

भगति सुतिय कल करन बिभूषन। जगहितहेतु बिमल बिधुपूषन

अर्थ—पुनः वह रामनाम दोउ आखर कैसे हैं भक्तिरूप सुतिय नाम सुन्दर स्त्री अर्थात् पतिव्रता स्त्रीके कल नाम सुन्दर करन विभूषण नाम कर्णपूर अर्थात् (ताटंक) है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां सब भूषणोंको छोड़कर कर्णपूर ही क्यों कहा सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, इसका कारण यह है कि कर्णपूर स्त्रीका अहिवात सूचक मुख्य भूषण है सो इसका प्रमाण युद्धकाण्ड में प्रसिद्ध है। जिस समय में रामजीने सुवेल पर्वत परसे रावण को बाणमारा है ; यथा (छत्र मुकुट ताटंक सब हते एकही वान) इहाँ छत्र मुकुट नाश कर के रामजीने रावणको यह सूचित कियाकि आजही तक तुम छत्र मुकुटके धारण करने वाले राजा रहे अब आगे नहीं, काहेसे कि राजाकी शोभा मुख्य छत्र मुकुट ही से है और मन्दोदरी को ताटंक हतिके यह जनाया कि तुम भी आजहीतक अहिवाती रहीं अब आगे नहीं सो इस बात को मन्दोदरी ने जान भी लिया है। यथा (मंदोदरी सोच उर वसेऊ। जबते श्रवन पूर महि खसेऊ॥) इत्यादि कहाहै इससे कर्णपूर स्त्री का अहिवात सूचक मुख्य भूषणहै । इससे कर्णपूर भूषण कहा इससे गोस्वामीजीने यह दिखाया कि भक्ति की भी शोभा रामही नामहीसे है। भाव जिस भक्ति में रामनाम का जाप नहीं होता है सो भक्ति विधवा स्त्रीके समान है उस भक्तिका पति नहीं है इससे राम नामका जपना ही भक्ति की शोभा है रामनामसे रहित भक्ति वृथा है । पुनः—वह रामनाम दोऊ अक्षर कैसेहैं कि जग जो संसार है तिनके हित नाम कल्याणके हेतु नाम कारण विमल नाम निर्मल बिधु नाम चन्द्रमा और पूषण नाम सूर्य के समान हैं। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां विमलविधुपूषण क्यों कहा। [उत्तर] हे शिष्य, विमल इसलिये कहा कि वह चंद्रमा सूर्य्य जोहै सो मायिक है इस से मलयुक्त है और रकार मकार जो हैं सो मायासे रहितहैं इससे विमल कहा इससे यह दिखाया कि संसार का भी हितकर्ता रामनाम ही है॥ ६॥

स्वाद तोषसम सुगति सुधाके। कमठ सेषसम धर वसुधाके ॥७॥

अर्थ--पुनःवह रामनाम दोउ आखर कैसे हैं कि सुगति नाम सुष्ठुगति अर्थात् मोक्षरूप सुधानाम अमृत के स्वादु और तोष सम हैं। (प्रश्न) हे स्वामी जी स्वाद और सन्तोष किसको कहते हैं सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, स्वादु उसको कहते हैं कि जो स्वादिष्ठ यानी प्रिय वस्तु हो जिससे वढ़कर दूसरा कुछ न होवे उसको स्वादु कहते हैं, और सन्तोषउसको कहते हैं कि जिसको खाकर पुनः दूसरा पदार्थ खानेकी इच्छा

न रहजावे अर्थात् अतिशयसन्तुष्ट को सन्तोष कहते हैं। इससे उपदेशार्थ यह दिखाया कि जैसे अमृतमें स्वादु और सन्तोष दो गुण मुख्य है विना स्वादु और सन्तोष के अमृत फीका है। भाव वृथा है। तैसेही रामनाम दोउअक्षर मोक्षरूप अमृत के स्वादु और सन्तोष के समान हैं विना रामनाम के मोक्षभी फीका है। भाव वृथा है। अथवा जैसे अमृतने स्वादु और सन्तोष दो गुणों को अपने महत्त्व वा शोभा के लिये धारण कियाहै तैसेही मुक्ति ने भी अपने शोभा महत्त्व के लिये रामनाम को धारण किया है। भाव मुक्ति भी रामनामही को जपती हैं इससे यह दिखाया कि भक्ति के रामनाम कर्णपूर हैं और मुक्ति के स्वादु सन्तोष दोऊ समहैं इससे भक्ति को जो साधन करने वाले भगवद्भक्त हैं और ज्ञान के जो साधन करने वाले ज्ञानी लोग हैं सो सबको छोड़ कर रामनामही जपो तब कल्याण है नहीं तो हरि इच्छा है। पुनः रामनाम दोऊ अक्षर कैसे हैं कि वसुधा जो पृथ्वी है तिनके धर नाम धारण करने में कमठ कच्छप और शेषजीके सब नामसमान हैं। भाव रामनामहीनेजो कमठशेष होके पृथ्वीको धारण किया है, अथवा नामही के बल से कमठ शेषजीने धारण किया है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां पृथ्वी के धारण करने वाले दोई क्यों कहा इसका क्या हेतु है। (उत्तर) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि एक तो रामनाम दोउ अक्षर के प्रकरण दिखाये दूसरे पृथ्वी के धारण करने वाले मुख्य दोई हैं। यानी शेषजी के आधार कच्छप जो हैं और कच्छप निराधार हैं तैसेही मकार का आधार रकार है और रकार निराधार है इससे दोई कहा॥ १॥

जनमनमंजुकंज मधुकरसे। जीह जसोमति हरि हलधर से॥

अर्थ—पुनः वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि जन जो दास हैं तिनका मन जो है सोई तो मंजु नाम कोमल अथवा मंजु नाम निर्मल कंज नाम कमल है तिसके विहार वा निवास करने वाले मधुकर नाम भ्रमर हैं। इहां मधुकर कहने का भाव यह है कि भौंरा कमल का बड़ा स्नेही होता है इससे मधुकर कहा (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां कोई २ ऐसा कहते हैं कि रामनाम तो दो अक्षर हैं। पुनः—दो भौंरा होके एक कमल में कैसे निवास करेंगे दूसरे कमल के सम्पुट होने पर भौंरा को दुःख और संकोच होगा इत्यादि बहुत कहते हैं; सो कैसा होना चाहिये। (उत्तर) हे शिष्य, यह सब वितंडाबाद है इसमें कुछ भी सार नहीं है काहेसे कि रामजी को सर्वत्र जनमनकंज का वासी

भौंरा कहा है इहां प्रमाण देने से ग्रन्थ विस्तृत होजायगा इससे भौंराही अर्थ ठीक है। हे शिष्य, कमल और भ्रमर की तो केवल उपमामात्र है। जैसे सुतीक्ष्ण जीने कहा कि (अनुज जानकीसहित प्रभु चापबाणधर राम। मम हिय गगन इंदु इव बसहु सदा यह काम) देखिये, इहां सुतीक्ष्णजीने रामजी से कहा है कि हे प्रभु, लक्ष्मण जानकीजी के सहित आप मेरे हृदयरूप आकाश में चंद्रमा सरीखे वासकरिये। अब इहां कोई कहै कि चन्द्रमा तो आकाश में एकही है और इहां राम लक्ष्मण जानकी तीन मूर्ति हैं पुनः-तीन चन्द्रमा होके कैसे वसैंगे और ऐसो क्यों कहा तो यह कहना मूर्खत्व है और अनर्थ शंका है। ऐसेही इहां जानो काहे से कि यह सब तो उपमा है केवल प्रियत्व स्नेहत्व दिखाने के लिये दिए जाते हैं। इससे इहां जनमनकंज का स्नेही भौंराही अर्थ ठीक है हे शिष्य, अब दो अक्षरानुकूल दूसरा अर्थ सुनो, श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि, रामनाम दोऊ अक्षर कैसे हैं कि जन जो दास हैं तिनका मन जो है सोई तो कोमलकमल है तिनका पालन पोषण करने के वास्ते। मधु नाम जलहै और कर नाम सूर्य का नहीं है किन्तु कार्य से कारण को ग्रहण कर लेते है इससे सूर्य भी अर्थ करते हैं काहे से कि जल और सूर्य दूनों कमल के पालन पोषण करने वाले हैं यानी जल हो सूर्य नही हो तो कमल प्रफुल्लित नहीं होते हैं और जो जल न हो तो सूर्य कमल को नाश कर देवै, इससे जल और सूर्य दूनों होना चाहिए। हे शिष्य, इहां सूर्य रकार है तिनके शान्त्यर्थ मकार शीतलजल है। देखो, यह अर्थ कहा है सही परंतु मुख्यार्थ पूर्वोक्त ही है। पुनः—वह रामनाम दोऊ आखर कैसे हैं कि, "जीह यशोमति" अर्थात् जिह्वारूप यशोमति को हरि श्रीकृष्णजी और हलधर श्रीबलदेवजी के समान प्रिय हैं। भाव जैसे बड़ी यशस्वनी श्रीयशोदाजो को कृष्ण बलदेव दूनों प्रिय रहे तैसे ही पूर्वोक्त जो जन दास हैं तिनकी जिह्वा को रामनाम दोऊ अक्षर प्रिय हैं। हे शिष्य, इहां सबको जिहवा को नहीं कहा है काहे से कि सब की जिह्वा को रामनाम कहां प्रिय है। इससे जिस जनमन मंजुकंज के विहारी मधुकर से रामनाम को कहा है उसी की जिह्वा को यह भी कहा है। (प्रश्न) हे स्वामी जी, प्रथम तो जनमनमंजुकंजु के स्नेही राम नाम को भौंरा कहवे ही किया है तो पुनः जीह यशोमति को हरि हलधर से प्रिय क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, पुनः कहने का भाव यह है कि प्रथम में

जो जनमन कमल का स्नेही भँवर रूप रामनाम को कहा इससे यह सिद्ध भया कि कमल का स्नेही भौंरा है कुछ भौंरे का स्नेही कमल नहीं है तो जैसे भँवर बिना बुलाये ही कमल के पास जाता है तैसेहि रामनाम बिना बुलाये ही अर्थात् बिना जप स्मरण किये ही जनमन में आवसगें इस भ्रम को मिटाने के लिये और जिह्वा को प्रियत्व दिखाने के वास्ते पुनः जोह यशोमति को हरि हलधर से कहा। भाव जैसे कृष्ण बलदेव यशोदाजी को प्राण प्रिय रहे तैसे ही जब रामनाम जिह्वा को अतिशय प्रिय होगा तब रामनाम जनमनमंजु कंज में बास करैंगे इससे जीह यशोमति कहा दूसरा उपदेशार्थ यह दिखाया कि वह जिह्वा धन्य है और बड़ो यशस्विनी है जिसको रामनाम प्रिय है नहीं तो बड़ी अयशस्विनी है और एक यह भी दिखाया कि जिह्वा से रामनाम जपना चाहियें ॥ ८ ॥

दोहा—एकु छत्र एकु मुकुटमनि, सब वरनिनिं पर जोउ।
तुलसी रघुबर नामके, बरन विराजत दोउ ॥ १ ॥

अर्थ—हे शिष्य, अभी तक तो श्रीरामनाम दोऊ अक्षरों को बचनान्तर्गत करके वर्णन किया और अब श्रीगोस्वामीजी यथार्थ रकार मकार के अनिर्वचनीय स्वरूप दिखाते हैं कि जिसको रामनाम कहना चाहिये इहां अनिर्वचनीत्त्व इसलिए दिखाते हैं कि जिसमें ऐसा कोई न कहे कि रामनाम वाणी करके कथित हैं इससे मायामय है, इस भ्रम बुद्धि को मिटाने के वास्ते श्रीपरमाचार्य गोस्वामी जी कहते हैं कि एक छत्र अर्थात् रकार का रेफ और मुकुटमणि नाम मकार का अनुस्वार भाव रेफ और विन्दु यानी (́ ˙) इस प्रकार से होकर सब वर्णन नाम सब अक्षरों पर विराजित हैं सो जोउ नाम देखो अथवा जोउ रामनाम दोऊ आखर एक छत्र और एक मुकुटमणि होकर सब अक्षरों के ऊपर अर्थात् शिरपर विराजित नाम विशेष करके राजित नाम शोभित हो रहे हैं सो रघुवर ही का नाम है। भाव दशरथात्मजही रामका नामाक्षर है दूसरे राम का नहीं। हे शिष्य, इहां गोस्वामीजीने रामनाम का यथार्थ स्वरूप कहा है काहे से कि शास्त्र के सिद्धांत से और महात्मनके सिद्धांत से भी यथार्थ रामनाम यही है और इसी को रामनाम कहते भी हैं। यथाप्रमाण—

रकारो ध्वजवत्प्रोक्तोमकारश्छत्रवत्तथा।

सर्ववर्णशिरस्थो हि राम इत्युच्यते बुधैः ॥ २३३ ॥

(पुनः—विष्णुपुराणे)

निर्वर्णं रामनामेदं वर्णानां कारणं परम्।
ये स्मरन्ति सदा भक्त्या ते पूज्या भुवनत्रये ॥२३४॥

(पुनः—महारामायणे)

निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिपम्।
छत्रं मुकुटं च सर्वेषां मकारो रेफव्यंजनम् ॥२३५॥

(पुनः—पुलस्त्यसंहितायाम्)

छत्ररूपरकारोस्ति अनुस्वारशिरोमणिः।
राजराजाऽधिराजेति तस्माद्रामशिरोमणिः ॥ २३६ ॥

अर्थ--कौशलखण्ड में सूतजीने कहा है कि रकार ध्वजाके समान यानी रेफ कहा है और मकार जो है सो छत्र के समान कहा है सब अक्षरोंपर निश्चय करके स्थित है उसको राम ऐसा पण्डित लोग कहते हैं। पुनः-विष्णु पुराण में ब्रह्माजीने अपने पुत्र मरीचिजोसे कहा है कि वह रामनाम निर्वर्ण है और सर्वाक्षर का कारण है सब से परे है जो भक्त सर्वदा हो स्मरण करते हैं वह तीनों लोक में पूजित होते हैं। महारामायण में शिवजी ने पार्वतीजी से कहा है कि यह रामनाम निर्वर्ण है केवल स्वर का राजा है और छत्र मुकुट स्वरूप होकर अर्थात् विंदु और रेफ होकर सब अक्षरों के ऊपर विराजमान हैं। पुनः पुलस्त्य संहिता में कहा है छत्ररूप रकार और अनुस्वार जो है विंदु सो शिरोमणि नाम मुकुटमणि है सबके ऊपर अधपति होकर शोभित होरहा है तिससे रामजी शिरोमणि यानी राजाधिराज कहे जाते हैं। भावयथार्थ राजा-धिराज रामही हैं और सब कहनेमात्र हैं। हेशिष्य, इसी प्रकार के बहुत प्रमाण है इससे रामनाम ही के दोऊ अक्षरछत्र मुकुटमणि होकर सर्वाक्षर पर शोभित होरहे हैं इससे छत्र मुकुटमणि कहा। भाव-रामनाम अकथ है और मन वचन से परे हैं और सब कथित है और मन बचन के अन्तर्गत है इससे माया-मय है। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां रघुवर नाम क्यों कहा। (उत्तर) हेशिष्य, रघुवर कहने का भाव यह है कि रेफ और विंदु दूनों पूर्ण ऐश्वर्य हैं

और निर्गुण है निराकार है अव्यक्त है सब से परे है इससे रघुवर कहिकर यह जनाया कि दशरथात्मजही रामजी का वह अनिर्वचनीय नाम हैं कोई दूसरे रामका नहीं जानना काहे से कि दूसरा राम नहीं है इससे रघुवर कहा। हे शिष्य, जैसे पूर्व नाम वंदनामें रघुवर कहा है तैसेही आशय इहांभी जानना चाहिये आगे इसी रेफ बिंदु को गोस्वामीजी ने (रामनाम कलामणि-कोषमंजूषा) में विस्तारसे कहा है सो देखलेना। हे शिष्य, यह दोहा रामायण भरमें विलक्षण है और सार सिद्धांत है काहे से कि और जितने वेद शास्त्र पुराण नाम मंत्र यंत्र तंत्र रहस्यादिक हैं सो सब वचन करके कथित हैं और अक्षर हैं त्रिगुणात्मक हैं और रामनाम है सो निर्वर्ण है अक्षरातीत है इससे सबसे परेहै और कालसे मायासे रहित है और सब कालग्रसित है यह परम सिद्धांत है इस दोहा का पूर्ण अर्थ जिनको जानना होवे सो गोस्वामीजी कृत (रामनाम कला मणिकोषमंजूषा) को देखे क्यों कि ऐसा ग्रंथ दूसरा नहीं है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, सब अक्षरों का छत्रही मुकुट क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, छत्र मुकुट इससे कहा कि जैसे राजा की शोभा छत्र मुकुट करके है तैसेहीं सब अक्षरोंकी शोभा रामनामहो करके है। भाव सर्वाक्षरोंका सार राम नाम है रामनामसे रहित सर्बाक्षर वृथा हैं। हे शिष्य, इहांपर्यन्त रामनाम को दो अक्षर करके वर्णन किया और अन्तमें अनिर्वचनीय कहिके समाप्त किया आगे ऐसेही श्रीसीता नाम को भो जानना चाहिये काहेसे कि युगलस्वरूप एकही हैं इससे शालिसुदास को बृद्धिकारक सीतानाम को भो श्रावण भादौ मास जानना, आखर मधुर मनोहर दोऊ जानना वर्ण विलोचन दोऊ जानो। सुमिरत सुलभ सुखद सब काहूको जानो, लोक लाहु परलोक निबाहू दोऊ जानो यानी सर्बत्र ऐसेही जानना ॥ २ ॥

समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी

अर्थ—हेशिष्य, इहांतक तो गोस्वामीजी ने श्रीरामनाम को तीन प्रकरण करिके कहा यानी प्रथम तीन अक्षर करके कहा पीछे महामन्त्र अर्थात् षडक्षर करके कहा तिससे पोछे दो अक्षर कहा। (प्रश्न) हेस्वामीजी, तीन प्रकरण क्यों कहे। (उत्तर) हेशिष्य, इसका हेतु यह है कि कोई आचार्य्य के मत से रामनाम में तोन अक्षर है कोई २ ने षडक्षरात्मक रामनाम को कहा है कोई २ आचार्य ने दोई अक्षर कहे हैं इससे गोस्वामीजी ने तीनहू प्रकार से कहा

कि जिस में कोई के मत में विरुद्ध न हो और प्रथम तीन अक्षर जो कहा तिसमें नौ वस्तुके कारण कहि के सृष्टि के कारण रामनाम को कहा और दूसरा षडक्षर कहि के चारनाम जापकों के द्वारा अर्थ १ धर्म २ काम ३ मोक्ष ४ इनका हेतु कहा और तीसरे प्रकरण में दो अक्षर करिके कहा और ब्रह्म जीव की उपमा देकर रकार और मकारकी जो परस्पर स्वामी सेवकभावकी प्रीति है सोभिन्नर करके दिखाई और रामनाम को सर्वोपरि कहा इससे हे शिष्य, यह सिद्ध हुआ कि जो कुछ है सो नामही नामहैं नामी कुछ नहीं हैं इस संदेह को दूर करने के लिये अब चौथे प्रकरणमें नाम और नामीं को कहते हैं और नाम नामी की जो सब प्रकार से समताहै उसको दिखाके पुनः रकार मकार के समान स्वामी सेवक भाव की परस्पर प्रीति वर्णन के नामको विशेष देखाते हैं। श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि रामनाम और नामी जो हैं दशरथात्मज राम सो दोऊ तत्त्व महत्त्व करके समुझत में सरिस नाम एक सरीखे हैं यानी सब प्रकार से बराबर हैं परंतु नाम और नामी की जो परस्पर प्रीति नाम स्नेहहै सो प्रभु अनुगामी की हैं। भाव जैसे प्रभु नाम स्वामी के अनु नाम पीछे गामी नाम गमन करने वाले यानी सेवक की परस्पर स्वामी सेवक भाव की प्रीति होती है तैसे ही नाम और नामी की परस्पर स्वामी सेवक भावकी प्रीति है। हे शिष्य, इहां गोस्वामी ने प्रथम नाम कहा पीछे नामी कहा पुनः तिसके आगे प्रथम प्रभु कहा पीछे अनुगामी कहा इससे यह जान परती है कि नाम की प्रीति नामी से सेवक भावकी है और नामी की प्रीति नाम से स्वामी भाव की है ऐसा सिद्ध भया जैसा कि पूर्व में रकार और मकार दूनोंको सम कहा परन्तु परस्पर प्रीति स्वामी सेवक भाव की कही तैसे ही इहां भी नाम और नामी दूनों सब प्रकार से समुझत में सरिस हैं परन्तु परस्पर प्रीति मात्र स्वामी सेवक भाव की है सो वर्णन करने से विलगाती है। भाव नाम के आधीन नामी हैं सो गोस्वामीजी आप ही आगे कहैंगे कि, सुमिरिय नामरूप बिनु देखें। आवत हृदय सनेह विसेषें॥) इत्यादि कहैंगे इससे नामके जपने से पीछे नामी आपही आते हैं ताते अनुगामी कहा काहे से कि नाम जपने वाले के पीछे २ रामजी चलते ही हैं॥ १॥

नामरूप दुइ ईस उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी॥

अर्थ—अब नाम नामीका सरिसत्त्व दिखाते हैं कि, कैसे वे दूनों समुझत में

सरिस हैं सो कहते हैं कि नाम जो रामनाम है और रूप जो दशरथात्मज राम हैं सो यही दुई ईश नाम ईश्वर हैं इहां दुइ कहने का भाव यह है कि तीसरा ईश्वर नहीं हैं दुइ हैं इससे दुइ कहा। पुनः यही नाम और रूप दुइ उपाधि नाम धर्मचिन्तक हैं। भाव तीसरा धर्मचिन्तक भी नहीं है दुइ हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, उपाधिका अर्थ आपने धर्मचिन्तक कहा सो कहीं प्रमाण है कि नहीं यदि होतो कहिए काहे से कि उपाधिका अर्थ धर्मचिंतक हमने कभी नहीं सुना है। (उत्तर) हेशिष्य, इहां उपाधिका अर्थ धर्मचिंतक ही जानना चाहिये। यथाप्रमाण (उपाधिर्धर्मचिन्तायामितिविश्वकोषे) अर्थात् उपाधि धर्म चिंताको कहा है ऐसेही मेदिनीकोष मे भी कहा है इससे इहां धर्मविषयमें सर्वदा चिन्तवन करने हो को उपाधि कहा है काहेसे कि नाम और रूप दूनों बड़े धर्म के रक्षक और धर्म चिन्तक हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, धर्म किसको कहते हैं जिसकी चिंता नामरूप दूनों करते हैं। (उत्तर) हे शिष्य, धर्म जो वर्णाश्रम है जोकि वेद, पुराण, शास्त्र. गीतादि, में कहा है सो सब धर्म है उस धर्म की हानि होने से और साधु ब्राह्मणों को दुःख होने से नामरूप धारण करना अर्थात् नाना प्रकार के अवतार लेना। यथा गीतायाम्—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥ २३७॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥२३८॥

(पुनः-वाल्मीकीय रामायणे)

रक्षिता जीवलोकस्य धर्मस्य परिरक्षिता!
रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता ॥२३९॥

अर्थ-हे भारत, जब जब निश्चय पूर्वक धर्मकी हानि अधर्म की वृद्धि होती है तब मैं रूपको धारण करता हूँ। धर्म की हानि अधर्म की वृद्धि देखके मैं साधुन के संरक्षण के वास्ते और दुष्टों के बिनाश के वास्ते युग युग में धर्म स्थापन के वास्ते अवतार लेता हूँ ॥ २॥ जीवलोक की रक्षा करने वाले धर्मकी रक्षा करने वाले स्वकीय शरणागतरूपी

धर्मकी रक्षा करने वाले अपने भक्तकी रक्षा करने वाले रामजी हैं इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे नामनामी दूनों धर्मचिन्तक हैं, अथवा स्वकीय शरणागत रूप जो धर्म है तिसके चिन्तक नामरूप दूनों हैं इससे धर्मका चितक कहा [प्रश्न] हे स्वामीजी, बहुतेरे विद्वान् लोग कहते हैं कि अवतार लेकर नाम रूपादिको धारण करना यही दूनों ईश्वरकी उपाधि नाम बिडंबना है काहे से कि ईश्वर तो अजन्मा है और नामरूप से रहित है ऐसा कहते हैं। [उत्तर] हे शिष्य, ऐसा विद्वान् लोग तो काहेको कहैंगे जिनकी पशुबुद्धि होगी वही ऐसा कहते होंगे काहेसे कि ईश्वर नामरूपादि को नहीं धारण करैंगे तो धर्मकी रक्षा कैसे होगी दूसरे भगवत्के अवतार नामरूपादिक सब दिव्य हैं इससे कल्पित कैसे कहना चाहिए सब अनादि हैं इससे माया-रहित हैं और जो कोई भगवत् के अवतारादि को दिव्य जानते हैं सो परम पदको जाते हैं ऐसा गीतामें कहा है। यथाप्रमाण ४ अध्याये-

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः॥
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोर्जुन॥२४०॥

अर्थ—हे अर्जुन, मेरे जन्म और कर्म दिव्य यानी प्राकृत नहीं हैं ऐसा जो निश्चय करके जानता है सो देहको त्याग कर फिर जन्म नहीं लेता है मेरे को प्राप्त होता है। हेशिष्य, इसीप्रकार से बहुत कहा है इससे भगवत्के और भग-वद्दासोंके जन्म कर्म दिव्य हैं ताते उपाधिका अर्थ धर्मचिन्ताही है इसमें संदेह न करना चाहिये काहेसे कि रामजी बड़े धर्मरक्षक हैं सो वाल्मीकिजी ने वि-स्तारसे कहा है इसीसे गोस्वामीजी कहते हैं कि नाम और रूप दोनों धर्मचि-तक हैं और रक्षक हैं काहेसे कि विना नाम रूप धारण किये धर्म की रक्षा होनहीं सकती है। और जब रूप होगा तो नाम अवश्यही होगा, और नाम जब होगा तो रूप अवश्य ही होगा इससे नाम रूप दुइ ईश्वर धर्मचिन्तक हैं। इहां मुख्यार्थ यही है अब दूसरा अर्थ सुनो। श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि नाम और रूप यही दुइ ईश जो सर्वोपरि श्रीसाकेत विहारी रामजी हैं तिनके उप-नाम समीप में अधि नाम प्राप्ति करने वाले हैं। भाव विना रामनाम के जपे और विना रामरूप द्विभुजी के ध्यान किये सर्वोपरि सान्तानिक लोकवासी रामजीकी प्राप्ति होना दुर्ल्लभ है। दुइ कहने का भाव यह है कि तीसरा कोई

नहीं पहुंचानेवाला है इससे दुइ कहा, अथवा तीसरा अर्थ गोस्वामी जी कहते हैं कि, नाम और रूप दुइ ईश्वर परब्रह्म की उपाधि नाम बिंडवनाहै। भाव जब किसी महात्माने रामनामको स्मरणकिया तहां प्रभु परधाम साकेतसे आकर दर्शनादिक देतेहैं और रक्षा करतेहैं जैसे मनु राजाको परधाम से आकर दर्शन दिया और गजादि को धायके रक्षा की इति उपाधि। पुनःजब किसी साधु महानुभावों ने भगवद्रूपका ध्यान किया तहांपर भी आकर दर्शनादिक देना इससे नाम और रूप दोनों ईश्वर की उपाधि हैं। भाव प्रभु बड़े दयालु हैं नामरूपके जापक ध्यापक दास के पीछे २ घूमा करते हैं। हे शिष्य, यही बिंडवना है सो प्रभु दीनवन्धु हैं कि सर्वदा दास के वास्ते चिन्तवन किया करते हैं इससे उपाधि कहा इसी प्रकार से बहुत हैं. परंतु अर्थ पूर्वोक्त ही ठीक है पुनः वह नाम रूप दूनों कैसे हैं कि अकथ हैं यानी नामरूपके गुण महत्त्वादि कथन करने योग्य नहीं है जबसे रूप है तबसे नामहै और जबसे नाम है तबसे रूपहै इससे दूनों अनादि है। हेशिष्य, देखो जो इहां उपाधि का अर्थ मायाकृत कल्पित किया जावे तो नाम रूप दोनों अकथ है अनादि है इसका क्या अर्थ किया जावे इससे उपाधि धर्मचिन्तक ही जानो और जो कहो कि नाम रूप दनों ईश्वर हैं, अथवा पर स्वरूप के पास पहुँचाने वाले दूनों हैं। पुनः धर्मचिंतक दूनों हैं और दूनों अकथ हैं नों अनादि हैं यानी इसी प्रकार से नाम रूप दूनों समुझन में सरिस हैं तो साधन किसका करना चाहिये नामका करना कि रूपका तिसपर गोस्वामीजो कहते हैं कि, सुसामुझि साधी अर्थात् सुनाम सुन्दर समुझि के मैंने साधी है, अथवा सुगम समुझिके आप सब साधन करो इहां सु का अर्थ सुन्दर नहीं है काहेसे कि सुन्दर तो दोनों हैं ताते सु शब्द का सुगमत ही अर्थ ठीक है काहेसे कि इहां सुगमतही का प्रयोजन है। यथा-(उभय अगम जुग सुगम नामते) इत्यादि आगे कहेंगे इससे सु से सौलभ्यता जानना चाहिये॥ २॥

को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनिगुन भेद समुझिहहिं साधू॥२॥

अर्थ—और जो कहो कि आपही कृपा करके हमको भी दोमें एकको बड़ा छोटा सहकर बतादें तो हमभी साधे तिसपरगोस्वामीजी कहते हैं कि को बड़ा है को छोटा है यह को कहै अर्थात नाम बड़ाहै रूप छोटा है, अथवा रूप बड़ाहै नाम छोटाहै यह को कहै काहेसे कि कहनेमें अपराध है। भाव अपराध न

होता तो कहदेते ताते अपराधके भय से नहीं कहसकते क्योंकि सेवकका धर्म यह नहीं है कि स्वामी के नाम रूपों को न्यूनाधिक करना इससे हम सुलभता गुण वर्णन करते हैं आगही गुण को सुनि के साधू जो सावन करनेवाले हैं सो भेदको समुझिहहि काम समझलेंगे। (प्रश्न) हे स्वामी जी, इहां बड़ा छोटा कैसे नही कहना कि जिसमें अपराध होगा। (उत्तर) हे शिष्य, बडा छोटा ऐसा कहना। नाम सर्वेश्वर है सर्वव्यापकहै सर्वरक्षकहै सर्वान्तर्य्यामी है सर्वज्ञ है, और रूप सर्वेश्वर सर्वव्यापी नहीं है सर्वरक्षक सर्वज्ञ नहीं है इस प्रकारसे बड़ा छोटा कहने में अपराध है। इससे सर्वेश्वर सर्वरक्षक सर्वव्यापी सर्वज्ञ नाम रूप दूनों हैं, यानी सम्यक् प्रकारसे नामरूप दूनों समझतमें सरिस हैं परंतु परस्पर प्रीतिमात्र स्वामी सेवक भाव की है इतने ही सुलभता गुण करके नामरूप से विशेष है सो आगे दिखाते हैं॥ ३॥

देषिहहिं रूप नाम आधीना। रूप ज्ञान नहिंनाम बिहीना

अर्थ—अब वह पूर्वमें जो कहा कि सुनि गुण भेद समुझिहहिं साधू सो कब समुझिहहिं जब रूप को नामके आधीन देखिहहिं तब काहेसे कि रूपका ज्ञान नाम बोध नामसे विहीन नाम रहित नहीं होता है। [प्रश्न] हे स्वामीजी, इहां गोस्वामीजीने देखिहहिं ऐसा भविष्य क्यों कहा काहेसे कि रामनाम तो प्रसिद्ध है राम रूप तो प्रसिद्ध नहीं है पुनः देखना कैसे होगा इहाँपर तो सुनिहहिं कहना रहा काहेसे कि भगवत् के नामरूपादिक शास्त्र के द्वारा अथवा महात्मन के द्वारा सुने जाते हैं कुछ देखे नहीं जाते हैं फिर देखिहहिं क्यों कहा। [उत्तर] हेशिष्य, इसका कारण यह है कि एकतो यह रामायण कलियुगमें प्रचार होने वाली है इससे भविष्य कहा दूसरा मुख्याभिप्राय यह है की नाम के आधीन रूपको देखिहहिं कैसे देखि हैं कि लोकके नामरूप के द्वारा देखिहहिं। भाव जैसे कोई मनुष्य है उसका नाम तो मालुम हो और रूप नहीं देखा हो तो चाहे जहां कहीं होगा नामके लेने से अथवा नामके जानने से निश्चय करके मिलेगा इसमें कुछ भी संदेह नहीं है, और नाम नहीं मालूम हो तो मिलना दुर्ल्लभ है। इससे नामके वशमें रूप है तैसेही लोग नामनामी के द्वारा रामजी को भी नामके आधीन जान लेंगे इससे देखि

हाँहं कहा। आगे हे शिष्य, इसी प्रकारसे दो चौपाई पर्यन्त और भी जानना चाहिए॥ ४॥

रूप बिसेष नाम बिनु जाने। करतलगत न परहिं पहिचाने॥

अर्थ—यद्यपि करके रूप विशेष है सही परंतु नामके विना जाने करतल नाम हाथके बीच भी पदार्थ गत नाम प्राप्त हो तो भी पहिचान में न परहिं कि, क्या है। भाव जैसे कोई वस्तु हाथ में धरी होवे और उस वस्तु का नाम नहीं मालुम हो तो कभी भी पहिचान न परैगी कि यह अमुक वस्तु है यद्यपि करके रूप से विशेष है तैसे हो श्रीरामजी विशेष रूप से प्राप्तभी होवें तो भी नाम बिना जाने रूपका बोध यानी ज्ञान न होगा कि यही रामजी परब्रह्म हैं इससे यह दिखाया कि भगवत् की प्राप्ति और रूपका बोधार्थ नाम विशेष है (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां रूप बिशेष क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, रूप विशेष कहने का भाव यह है कि रूप जो है सो साक्षात्कार देख परता है और नाम जो है सो देख नहीं परता है काहे से कि नाम तो केवल शब्द मात्र है इससे रूप विशेष कहा परन्तु रूप बोधार्थ नाम विशेष है ताते साधन करने में नाम ही सुलभ है॥ ५॥

सुमरिय नाम रूप बिनु देषें। आवत हृदयँ सनेह विशेषें॥

अर्थ--इससे बिना रूपके देखे ही रामनाम को सुमिरिय नाम जपिए आपहो पूर्वोक्त जो विशेष रूप है सो स्नेहके सहित हृदय में आवत नाम आते हैं कैसे आते हैं कि जैसे कोई मनुष्य का जहां नाम लेकर पुकार करो तहां वह शीघ्र आजाता है तैसे ही रामनामको जपने से रामजी कृपालु शीघ्रही आजाते हैं काहेसे कि नामके अनुगामीहैं। [प्रश्न]हेस्वामीजी, इहां स्नेह विशेष क्योंकहा। [उत्तर) हेशिष्य, स्नेह बिशेष कहनेका भाव यह है कि नाम और रूप की यानी नामीकी परस्पर प्रीति स्वामीसेवक भावकी है इससे स्नेह के सहित न आवें तो स्वामी सेवक भावकी प्रीति काहे की है इससे नाम विशेष है। हेशिष्य, देखो इहां कैसा आश्चर्य्य कहना गोस्वामीजी का है कि एक बालक भी इसको समझ सकता है इससे गोस्वामीजी को वार २ धन्य है कि जिन्होंने ऐसे २ लोक न्याय से नामरूप के द्वारा गुह्यगतिको खोलके अस्मदादि

जीवों को समझाया है तिसपर भी रामनाम में रुचि प्रेम नहीं होता है इससे धिक्कार है ॥ ६ ॥

नामरूपगति अकथ कहानी । समुझत सुषद नपरति बषानी ॥

अर्थ–हेशिष्य, जो कदापि कोई कहै कि भला नाम और रूप के कुछ गुण तो कहिये तिसपर गोस्वामीजी कहते हैं कि नाम और रूप के जो गुण हैं अर्थात् क्षमा, दया वात्सल्यादिक दिव्य गुण हैं तिनकी जो कहानी नाम कथा है यानी नामयश रूपयश सो अकथ नाम कथन करनें योग्य नहीं है। भाव प्राकृति वाणी से रहित है कहने योग्य नहीं है केवल नाम और रूप का जो आश्चर्य गुण है सो समुझत ही में सुखद नाम सुखके देने वाले हैं जो कदापि कहो कि नाम रूपकी गति कथा अकथ है तो उनकरके जो सुख उत्पन्न भया है सो तो कहो तिसपर गोस्वामीजी कहतें हैं कि न परति बषानी यानी वह सुख भी बखान करने में नहीं आता है। भाव रसना रुकजाती है, अथवा गूंगेके शर्करासम होजाती है। यथा [ध्रुव प्रहलाद विभीषण माते माती शिवकी नारी । सगुण ब्रह्ममाते वृन्दावन अजहुं न छुटो खुमारी॥ सुरनरमुनि जेतें पीर औलिया जिनरे पिया तिनजाना ॥ कहै कबीरगूंगेको शक्कर क्योंकर करै बखाना) इत्यादि कबीरजीने भी कहाहैं ऐसा रामनाम अद्भुत हैं, सोई दशा वाली वात इहां गोस्वामीजीने कहीहैं इससे कौन कहसकते हैं । भाव नाम रूपके गुण अकथ है तो सुख भी अकथ है यानी दनों विलक्षण हैं। हे शिष्य, इहां पर्य्यन्त गोस्वामीजीने नाम और रूपका वर्णनकिया और परस्पर स्वामी सेवक भाव की प्रीति दिखाके केवल एक सौलभ्यता गुण करके नाम को नामीसे विशेष कहा इस सुलभता गुण को सुनकर साधु यानी साधन करनेवाले समुझिइहीं भाव नाम सुलभता गुण करके नामी से अधिक है और सब गुणकरके दोऊ सरिस हैं इससे नामका साधनकरो और हमने भी यही सुलभता को सुसामुझि साधी नाम साधनकिया है यह साधनवाले को उपदेश किया और जैसे पूर्व में रकार मकार को एक छत्र एक मुकुटमणि कहिके अनिर्वचनी यत्व दिखाय के समाप्त किया तैसेही यहां पर नाम नामी के गुण अकथ अर्थात् अनिर्वचनीय कहिके समाप्त किया और अब आगे सगुण निर्गुण से नाम के श्रेष्ठत्व दिखाते हैं ॥ १ ॥

अगुनसगुन बिचनाम सुसाषी। उभय प्रबोधक चतुदुरभाषी ॥

अर्थ—हेशिष्य, अब सगुण निर्गुण प्रबोधार्थ नामको विशेष कहते हैं श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि अगुण जो निर्गुण ब्रह्म हैं अर्थात् सर्वान्तर्यामी और सगुण ब्रह्म जो हैं सो सर्वोपरि श्रीदशरथात्मज राम हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां सगुण ब्रह्म रामजी को कहा है कि, अवतारादि को कहा है, अथवा विष्णु नारायण विराटादि को कहा है सो स्पष्ट करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, न इहां सगुण अवतार को कहाहै और न विष्णु नारायण विराटदि को कहा है काहेसे कि अवतार तो केवल कार्य्यार्थ होते हैं कुछ अनादि नित्यसगुण नहीं हैं और विष्णु नारायणादिक जो हैं सो भी संसारही के कार्य्यार्थ सगुण भये हैं दूसरे यह सब रामजी के अंशसे हैं सो पूर्वहीमें कहि आये हैं इससे नित्य सगुण विष्णु नारायण विराटादिक भी नहीं हैं इहां गोस्वामीजी नित्य सगुण को कथन करते हैं ताते नित्य सगुण रामही को जानना चाहिये और आगे इसी निर्गुण सगुण ब्रह्मको स्पष्ट खोलिके वर्णन करेंगे कि (अगुण सगुण दुइ ब्रह्म स्वरूपा) इत्यादि विस्तार पूर्वक कहैंगे तहांपर नाम खोलदेंगे सो देखलेना इससे इहां सगुण ब्रह्म रामही को जानो सोई गोस्वामीजी कहते हैं कि निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्मके बीचमें रामनाम कैसा है कि सुसाखी है यानी सुन्दर साखी नाम गवाह है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां सुसाखी क्यों कहा इसका क्या भाव है। (उत्तर) हे शिष्य सुसाखी कहने का भाव यह है कि साखी तीन प्रकार के होते हैं। एक साखी दूसरा सुसाखी तीसरा कुसाखी तिसमें साखी वह है कि पक्ष लेके सत्य कहै और सुसाखी उसको कहते हैं कि जो पक्ष किसीका नहीं करे और यथार्थ कहै और कुसाखी उसको कहते हैं कि जो लालच के वशमें होकर सर्वथा झूठही कहे सो राम नाम नहीं है कि निर्गुण को कहै सगुण को नहीं अथवा दूनों तरफ झूंठही कहे भाव यह तो और ही साधन का अथवा मतका काम है कि सगुण को कहना निर्गुण को नहीं अथवा निर्गुण को नहीं अथवा न निर्गुण ही को कहना न सगुण ही को कहना और ही देवतांतर को कहना सर्वथा झूंठ घोर तमोगुणी इत्यादिक सो रामनाम नहीं है रामनाम तो निर्गुण और सगुण को यथार्थ कहनेवाले हैं कि जिसमें भ्रम नहो इससे सुसाखी कहा भाव और सब साधनोपायसेनिर्गुण और सगुण ब्रह्मकी व्यवस्था मालुम होना दुर्लभ है और नामके जपने से विना परिश्रमही जान परेगी काहेसे

कि रामनाम में निर्गुण और सगुण दूनौं ब्रह्म स्थितहैं। (यथानारायणो रकारः स्यादकारो निगुणात्मकः) अर्थात् रकार में नारायणहैं अकार निर्गुणात्मक हैं इसी प्रकारसे बहुत कहा है इससे राम नामही में निर्गुण सगुण दूनों हैं ताते बिना नामके साक्षी किये निर्णय नहीं हो सकता है इससे उपदेशार्थ यह दिखाया कि निर्गुण के उपासक जो हैं ब्रह्मज्ञानी लोग और सगुण ब्रह्म के उपासक जो हैं भक्त लोग तिन दूनोंको राम नाम जपना चाहिये बिना नाम के जपे सगुण निर्गुण मालुम होना कठिन है इससे सुसाक्षी कहा पुनः वही रामनाम उभय नाम पूर्वोक्त निर्गुण सगुण दूनों ब्रह्मके प्रबोधक अर्थात् प्रकर्ष करके बोधके कराने वाला चतुरदुभाषी हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, प्रथम तो सगुण निर्गुण के बीचमें नामको सुसाखी कहवेही किया है तो पुनः चतुर दुभाषी काहेको कहा (उत्तर) हे शिष्य, सुनो प्रथम में जो कहा है सो तो केवल निर्गुण सगुण के यथार्थ स्वरूपमात्रको कहने वाले नामको सुसाखी कहा है और अब निर्गुण सगुण का पूर्ण ऐश्वर्य्य तिसके प्रकर्ष करके याने दृढ बोध करानेवाले नामको चतुर दुभाषी कहा भाव केवल यथार्थ कहनेही वाले नहीं हैं किन्तु निर्गुण सगुण ब्रह्मके दृढ बोधभी कराने वाले हैं और चतुरभाषी कहने का भाव यह है कि बिना चतुरदुभाषी के प्रकर्ष बोध होना असम्भव है और बिना दृढ बोध भये ठीक नहीं है काहेसे कि निर्गुण और सगुणदेश बहुतही कठिन है इससे नाम को चतुरदुभाषा कहा। भाव सामान्य दुभाषी से साधारण बोध होगा प्रबोध न होगा कुछ संदेह बना रहेगा और चतुर दुभाषी से सांगोपांग प्रबोध हो जायगा सन्देह न रहैगा इससे चतुरदुभाषी कहा। भाव जैसे दक्षिण देश में जब इस देश के मनुष्य जाते हैं तो दूनों के एकत्र भये पर इनकी बोली उनको नहीं जान पड़ती है उनकी बोली इनको नहीं जान परती है तहां दुभाषी लोग दनोंको दोऊ देशकी बोली में समझा कर प्रबोध कर देते हैं तिसमें चतुरदुभाषी जो हैं सो अर्थात् जिनको दूनों देशकी संपूर्ण भाषा मालूम है तिनसे भाव दूनों देशके जो पूर्ण भाषा जानते हैं उनसे किसी बातका संदेह नहीं रहता है इससे प्रबोध कहा और सामान्य दुभाषो जो है यानी जिनको संपूर्ण भाषा मालूम नहीं है केवल प्रयोजन मात्र सिखलिये हैं तिनसे प्रबोध नहीं होता सामान्य बोध होता है भाव कुछ संदेह बना रहता है तैसेही निर्गुण और सगुण देश बहुत कठिन है तहां के बासी अर्थात् निर्गुण और सगुण के उपासस दूनों के समागम होनेपर निर्गुण देशवाले ब्रह्मज्ञानी को सगुण देशवाले भक्त लोग

और सगुण देश दूनों अटपट मालूम पड़ता है अर्थात् विरोध जान परता है और सगुण देशवाले भक्तको निर्गुण देशवाले ज्ञानी लोग और निर्गुण देश दूनों अटपट जान पड़ता है यानी विरोध जान पड़ता है तहांवर श्रीरामनाम जो चतुर भाषी हैं अर्थात् निर्गुण और सगुण दूनोंकी सम्पूर्ण व्यवस्था जानने वाले सो बीच में उपस्थित होकर दूनों को समझा कर प्रबोध करा देते हैं भाव सब संदेह को दूर कर देते हैं। हे शिष्य, इसका मुख्याभिप्राय वह है कि निर्गुण उपासना वाले जो हैं और सगुण उपासना वाल जो हैं सो सब साधन को छोड़कर केवल एक राम नामही जपैं काहेसे कि और जितने साधन और मत हैं सो सब सामान्यदुभाषी हैं वे सब यथार्थ बोध नहीं करसकते हैं और रामनाम के जपने से निर्गुण सगुण का यथार्थ बोध हो जाता है इससे जिस किसीको निर्गुण और सगुण की पूर्ण व्यवस्था जानना सो सबको छोड़कर रामनाम चतुर दुभाषी से मिले भाव रामनाम को जपै तबतो ठीक है नहीं तो वृथा मत्था कूटना है रामनाम बिना कुछ नहीं होनेका चाहै जो करै और रामनामके जपने से निर्गुण सगुण दूनों प्रकाशित होजाते हैं काहेसे कि निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्म दनोंकी स्थिति रामनाम में हैं भाव निर्गुण सगुण दूनो रामनाम के आधीन हैं इससे नाम विशेष है॥८॥

दोहा-रामनाम मनि दीप धरु, जीह देहरीं द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ, जौं चाहसि उँजियार॥ ३॥

अर्थ--अब वह पूर्वोक्त निर्गुण और सगुण दूनों के प्रबोध होने के वास्ते गोस्वामीजी अपने द्वारा उपाय वताते हैं कि हे तुलसी, जौं तुम भीतर और बाहर, अर्थात् भीतर अन्तर्य्यामी निर्गुण ब्रह्म और बाहर सगुण ब्रह्म श्रीरामजी इन दूनों स्वरूपों का उजियार नाम प्रकाश यानी तरा-कार चाहसि नाम चाहता है तो रामनाम रूपमणि दीप को जिह्वारूप देहरी के द्वारपर धरु नाम धरो। भाव जैसे मकान में द्वार होता है उस द्वारपर देहरी होती है उस देहरी पर दीपक बारि देनेसे भीतर बाहर दूनों ओर प्रकाश होजाता है तैसेही तुम भी देहलीदीप न्याय करके शरीररूपी मकान के जो मुख रूप द्वार है तिसपर जिह्वारूप देहरी है उसपर रामनाम रूपमणि दीप को धरु जौं भीतर बाहर यानी निर्गुण सगुण ब्रह्म को देखने के वास्ते उजियार नाम

प्रकाश चाहता है तो और निर्गुण ब्रह्म का प्रबोध नहीं चाहता है तो मति धरु। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर मणिदीप क्यों कहा केवल दीप ही कहते तो क्या कोई हानि रही। (उत्तर) हे शिष्य, केवल दीप कहने से बड़ी हानी रही काहेसे कि दीप बाधा हिंसायुक्त है दूसर महाअशुद्ध है। यथा प्रमाण—

दीपाग्निं दीपतैलं च भस्मं चास्थि रस्वलाम्।
एतानि ब्राह्मणः स्पृष्ट्वा सवासा जलमाविशेत् ॥२४१॥

अर्थ—दीप की अग्नि दीपके तैलको और भस्मको अस्थि को रजस्वला स्त्रीको यदि ब्राह्मण छू लेवे तो सवस्त्र जलमें प्रवेश करे वैष्णवशास्त्रकी ऐसी आज्ञा है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, भस्मको भी छूनेमें दोष है तो मस्तक में त्रिपुंड्र क्यों लगाते हैं, लगाने का वेद पुराणन में प्रमाण भी है सो कैसा है कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, हमारे वैष्णवशास्त्र में तो कहीं प्रमाण नहीं है केवल तमोगुणो ग्रन्थों में प्रमाण है सो नरकका अधिकारी है इससे वह प्रमाण नहीं मानाजाता है, पाखण्डधर्म है इससे भस्मधारण करने में महा-दोष है। यथा—

ब्राह्मणः श्रोत्रियो विद्वान् भस्मधारी भवेद्यदि।
सजीवन्नेव शूद्रत्वं नरकं चाधिगच्छति ॥ २४२ ॥

(इति—हारीतधर्मशास्त्रे)

अर्थ—यदि ब्राह्मण श्रोत्रिय विद्वान् भस्म के धारी हों वह जीवतेही शूद्रत्व कूं प्राप्त होते हैं मरे पीछे नरक को जाते हैं इत्यादि बहुत कहा है इहां पर प्रमाण देने से ग्रंथविस्तार होजायगा इससे दीप गोस्वामीजी ने नहीं कहा मणिदीप कहा काहेसे कि मणिदीप में कोई प्रकार की बाधा हिंसानहीं है दूसरे शुद्धहै एकरस रहता है इसीसे जहांकहीं दीपकी उपमा आई है तहांपर मणि-दीप ही कहा है। यथा (रामभगति चिंतामनि सुंदर। बसै गरुड़जाके उर अन्तर॥ परम प्रकाश रूप दिनराती। नहिं कछु चहिये दियाघृत बाती॥ मोह-दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ वात नहिं ताहि बुझावा॥ प्रबल अविद्या तम मिटि जाई। हारहि सकल सलभ समुदाई॥ खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसे भगति जाके उरमाहीं॥ इत्यादि बहुत कहा है इससे मणिदीप कहा काहे से कि मणिदीप सब प्रकार से उत्तम है और दीपक सब प्रकार से भ्रष्ट है और

बड़ो दुर्दशा है सो दीपक ज्ञान में प्रसिद्ध है इससे दीप को नहीं कहा इससे हे शिष्य यह दिखाया कि निर्गुण और सगुण दूनों जीवके साथही हैं परंतु अबिद्या रूपरात्रिकरके नहीं देख परता है जब रामनामको कुछदिन जिह्वासे जपै तब मोहके निवृत्त होनेसे देखपरे जैसे अन्धेरी के नष्ट होनेसे मकान का भीतर बाहर सब देख परता है इहां भीतर बाहर निर्गुण और सगुण को कहा है काहेसे कि भीतर बाहर यही दूनों हैं । यथा (एक दारुगत देखिये एकू) इत्यादि आगे कहैंगे। पुनः दोहावली—हिय निरगण नयनन्हि सगुन रसना रामसुनाम ॥ मनहु पुरट संपुट लसत तुलसी ललित ललाम ॥ सगुन ध्यान रुचि सर सनहिं निरगुन मनते दूरि ॥ तुलसी सुमिरहु रामको नाम सजीवन मूरि ॥ इत्यादिकहा है इससे दूसरा अर्थ नहीं हैं काहेसे कि इहांपर निर्गुण ही सगुणका प्रकरण है इससे गोस्वामीजी ने यह दिखाया कि जो कोई पूर्वोक्त निर्गुण और सगुण ब्रह्म का प्रकाश यानी प्रबोध चाहता है सो रामनाम को जिह्वा से जपै आपही रामनाम दूनों को साक्षात्कार करके दिखादेगें पुनः कोई वातकी चिंतासंदेहन रहैगा सब मिटजायगा हे शिष्य, निर्गुण और सगुण ब्रह्मणके वास्ते तीन सिद्धांत दिखाये उसमें अगुण सगुण के बीच में सुसाखी कहा इससे यह दिखाया कि रामनाम यथार्थ निर्गुण सगुण के स्वरूपको कहदेने हैं। और चतुरदुभाषी से यह दिखाया कि यथार्थ कहते भी हैं और प्रबोध भी करदेते हैं। और मणिदीपसे यह दिखाया कि दर्शन भी करादेते हैं इससे नाम सर्वोपरि है। रामनाम के समान दूसरा कुछ नहीं है हे शिष्य, यह सिद्धांत तुम सत्य २ करके जानना और सबको छोडकर रामनाम जपना चाहिये। उसमें भी जिह्वासे जपना चाहिये यह उपदेश भया। आगे इसी प्रकार से श्रीसीता नामको भी निर्गुण सगुण के बीचमें सुसाखीजानो और उभय प्रबोधक चतुरदुभाषी जानो। पुनः मणिदीपसम दोऊ को प्रकाशक जानो ॥ ३ ॥

नाम जीह जपि जागहिं जोगी। विरति विरंचि प्रपंच वियोगी॥

अर्थ—हे शिष्य, अभीतक तो निर्गुण और सगुण के प्राप्ति अर्थ रामनाम को कहा और सौलभ्यतागुण दिखाय कर नामको विशेष कहा और अब इहां से दोहा पर्य्यन्त पांचहु भक्तनका आधार श्रीरामनाम को वर्णन करते हैं। उसमें प्रथम ज्ञानी भक्तको कहते हैं, श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि रामनामही को जि-

ह्रासे जपिके योगी जो ज्ञानी लोग हैं सो संसाररूप रात्रि में जागहिं नाम जागते हैं और विरति जो वैराग्य है तिसमें प्रवृत्तहोकर विरंचि जो ब्रह्मा हैं तिनके जो प्रपंच है यानी नानाप्रकार के सृष्टि-द्वंद्व तिनसे बियोगी नाम अलग होजाते हैं । हे शिष्य, इहांपर विरंचि कहने का भाव यह है कि जिन विरंचिकी विचित्र रचना को देखकर नारदादिक गोता खाते हैं और बड़े बड़े को वैराग्य होना दुर्लभ है सो योगी लोग यानी ज्ञानी लोग जिह्वा से रामनामको जपिके तिन विरंचि की विचित्र रचनासे विरक्त होजाते हैं ऐसा रामनाम का प्रपात और कृपा है इससे विरंचि कहा । (प्रश्न) हे स्वामी जी, योगी और ज्ञानी एक ही हैं कि कुछ भेद है सो कृपा करके कहिये । (उत्तर) हे शिष्य, ज्ञानीयोगी विद्वान् पंडित मुनि ऋषि साधु तपस्वी ये सब पर्य्यायवाचक है अभिप्राय एकही है इससे इहां योगी ज्ञानीही को कहा है और दूनों को एकही जानना । यथा (मोहनिशा सब सोवनिहारा ॥ देखहिं सपन अनेक प्रकारा ॥ यहि जग जामिनि जागहिं जोगी । परमारथी प्रपंच वियोगी ॥ जानिय तबहिं जीव जग जागा । जब सब विषयविलास विरागा ॥ होइ विवेक मोह भ्रम भागा । तब रघुनाथचरन अनुरागा ॥ पुनः—जिमि कुयोगी पुरुष उर गारी । मोह विटप नहिं सकहिं उपारी ॥ पुनः—गीता में श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा है । यथा—

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥

अर्थ-सर्वभूत जो हैं प्राणीमात्र जिसरात्रि में अर्थात् विषयरूप रात्रिमें सोते हैं तिसमें इन्द्रिय संयमी जागते हैं अर्थात् आत्मस्वरूप देखते हैं और जिस विषय रूप रात्रि में सब प्राणी जागते हैं सो मुनि जो ज्ञानी हैं तिनकी रात्रि है । ऐसा कहा है इहांपरभी मुनि ज्ञानी हीं को कहा है इससे योगी ज्ञानी एक ही है । (प्रश्न) हे स्वामीजी, एक बातका बड़ा आश्चर्य्य है कि गोस्वामीजी बार २ जिह्वा से रामनामको जपने को क्यों कहते हैं सो यह भेद कृपा करके कहिये [उत्तर] हे शिष्य, इसका आशय यह है कि नाम जपनेकी विधि शास्त्रमें कितने ही प्रकार से कहै हैं जैसे कि श्वांस श्वांस रामनाम जपना, अर्थात् (२१६००) श्वांस दिनभरमें चलते हैं जिसमें 'रा, से श्वांस को चढाना और 'म, से

उतारना इसीप्रकार से एक भी श्वांस खाली न जावे। हे शिष्य, इसको सर्वोपरि सिद्ध जाप [अजपाजाप] ऐसा शास्त्रमें कहा है इस जापके समान दूसरा जाप कोई भी नहीं है। इस जाप में लिंगासन लगाना चाहिये और निर्भय मुद्रा धारण करना चाहिये और भ्रूके मध्यमें जो है बाराणशी क्षेत्र तिसपर दृष्टि रखनी चाहिये और नासाग्रपर जिह्वा रखनी चिबुकको वक्षःस्थलपर स्थापित रखना यह अजपा जापका विधान हैं। इसके विना अजपा जाप, होता नहीं। हेशिष्य, इसी अजपा जाप को वेदान्ती लोग जो हैं शंकर मत के अद्वैतवादी नास्तिक सो उलटा [सोऽहं] ऐसा कहते हैं सो वृथा है। और कोई कोई का मत है सुरति जाप अर्थात् मनसे नामको जपना यह जाप भी सर्वोपरि है। और कोई २ का मत है कि सानुनासिक जाप यानी ऊँचे पंचमस्वर से नाम जपना। कोई २ का मत है कण्ठ से ही जपना। कोई २ का मत है कि, केवल रकार जपना। कोई का मत है कि अकारही जपना, इसी प्रकार से बहुत भेद नाम जपने के है यह गोस्वामीजी का मत नहीं है। गोस्वमीजी का तो मत है धीरे २ जिह्वा से रामनाम जपना चाहिये। काहे से कि गोस्वामीजी ने सर्वत्र जिह्वाही से कहा है। यथा (जीह जसोमति हरि हलधर से। पुनः-जीह देहरीं द्वार। पुनः नाम जीह जपि जागहिं जोगी॥ पुनः-नाम जीह जपि जानहु तेऊ। नाम जीह जपि लोचन नीरू) इत्यादि सर्वत्र कहा है इससे जिह्वा से सीताराम सीताराम जपना यह उपदेश भया काहे से कि जिह्वा का जाप सबको सुलभ है इससे जीह बार २ कहा ॥ १ ॥

ब्रह्म सुषहि अनुभवहि अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा ॥

अर्थ-श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि वह पूर्वोक्त योगी जो है सो जिह्वासे नाम को जपि के विरंचि के प्रपंच से रहित होकर अनूप जो है ब्रह्म का सुख कि जिसके समान दूसरा सुख कुछ भी नहीं है सो सुखहीति निश्चयेण अनुभवहिं नाम अनुभव करते हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां अनुभव क्यों कहा क्या प्रत्यक्ष सुख नहीं होता है जो अनुभव कहा। (उत्तर) हें शिष्य, अनुभव कहने का भाव यह है कि अन्तर्यामी जो ब्रह्म हैं तिनको स्वरूप तो है नहीं वे तो सर्वव्यापी हैं इससे मनहीं मन में अनुभव किया करते हैं काहे से कि प्रगट सुख तो तब होवे जब स्वरूप देख पड़े इससे अनुभव कहा। अब यह दिखाते हैं कि वह निश्चय पूर्वक ब्रह्म सुख कैसा है कि अकथ अर्थात् प्राकृतवाणी से

कथन करने योग्य नहीं है। और अनामय है, अर्थात् आमय जो षड्विकार रोग है तिससे रहित हैं और जिनके नाम रूप नहीं है (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां नाम रूप नहीं कहा है। पुनः नाम रूप कैसे अनादि कहना चाहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इहां निर्गुण ब्रह्मको नामरूपसे रहित कहाहै कुछ सगुणब्रह्म रामजीको नामरूपसे रहित नहीं कहाहै। कारणकि, निर्गुण ब्रह्म जोहैं सोअनादिकालसे नामरूप करकेरहितहैं और सगुणब्रह्मजो रामजीहैं सो अनादिकालसे नामरूपकरके युक्त हैं। इससे हे शिष्य, जिसको निर्गुण और सगुण ब्रह्मकापूर्ण विचार नहीं है सो-मूर्ख निर्गुण ही ब्रह्म के साथ में सगुण ब्रह्मके नाम रूपादि को खण्डन करदेते हैं कि ब्रह्म तो नामरूप से रहित है, निर्गुण है, निराकार है, ज्योतिःस्वरूप है वे सगुण नहीं होते हैं सगुण रूप कल्पना है ऐसे २ मूर्ख वृथा बकते हैं। यथा [जिन्हके अगुन न सगुन विबेका। जल्पहिं कल्पित बचन अनेका] इत्यादि रामायण में शिवजीने बहुत कहा है इससे इहां नाम रूप से रहित निर्गुण ही ब्रह्मको जानो। और भी जहां कहीं नाम रूप से अकार से गुण से जन्म से रहित कहा हो तहांपर निर्गुण ही ब्रह्म का प्रतिपादन जानना। और हे शिष्य, दूसरा यह भी अर्थ है कि प्राकृत नामसे रूपसे गुणसे जन्मसे अकारसे रहित है। वह निर्गुण निराकार है और नाम रूपसे रहित है ताते जहां जैसा प्रकरण होवे तहां वैसाही अर्थ जानना चाहिये। सर्वत्र एक समान जानना मूर्खता है, इहां अन्तर्यामी निर्गुण ब्रह्मका प्रसंग है,सगुण ब्रह्मको आगे दो दोहा में कहैंगे। इससे यह दिखाया कि ज्ञानी भक्तका नामही अधार है इस से रामनाम सर्वोपरि है और सबका सार सिद्धान्त है ॥ २ ॥

जानी चहहिं गूढ गति जेऊ। नाम जीह जपि जानहु तेऊ॥३॥

अर्थ—अब श्रीगोस्वामी जी जिज्ञासु भक्तों को कहते हैं। जिज्ञासु भक्त उस को कहते हैं कि जिसको परमार्थ का स्वरूप जानने की इच्छा है सो गोस्वामीजी कहते हैं कि जेऊ कोई गूढ अर्थात् पूर्वोक्त जो निर्गुण सगुण ब्रह्म हैं तिन की जो गति नाम व्यवस्थाहै सो जानी चहै तेऊ जिह्वा से रामनाम को जपि के जानहु। भाव देर मत करो, काहेसे कि शरीर अनित्य है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां जानहु ऐसा क्यों कहा। (उत्तर)हे शिष्य, जानहु कहनेका भाव यह है कि गूढ गति बूझने के वास्ते दूसरे शरण मत जाउ काहेसेकि और सबकुसाखीऔर मूर्ख दुभाषी हैं और रामनाम जो है सो निर्गुण

और सगुण के मध्यमें सुसाषी हैं पुनः उभय प्रबोधक चतुरदुभाषी हैं पुनः दूनों के प्रकाशक मणिदीप के सम हैं इससे नामही को जपि के जानहु भाव बिना रामनामके जपे गूढ़गति निर्गुण सगुण ब्रह्म को जानना दुर्ल्लभ है इससे जानहु कहा। अथवा जिज्ञासु भक्त को गोस्वामी जी स्वयं आप उपदेश देते हैं कि रामनाम को जिह्वा से जपि के जानहु देर न करो इससे जानहु कहा (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर गूढ़गति निर्गुण ही सगुण ब्रह्मको कहा है कि कोई दूसरी गूढ़ गति है (उत्तर) हे शिष्य, इहांपर निर्गुणही सगुण का अर्थ है काहेसे कि निर्गुण सगुणसे दूसरा गूढ़ क्या है, कुछ नहीं इससे यही ठीक है और सब अनर्थ हैं॥ ३॥

साधक नाम जपहिं लयँ लाएँ। होहिं सिद्ध अणिमादिक पाएँ॥

अर्थ—अब गोस्वामीजी दूसरे अर्थार्थी भक्तको कहते हैं। अर्थार्थी उसको कहते हैं कि, जिसको अर्थ यानी धन द्रव्यादिकी इच्छाहो सोई गोस्वामीजी कहते हैं कि साधक जो हैं अर्थ के साधन करने वाले सो भी रामनामको जिह्वा से लयलायें नाम एक तारसे लौ लगाके जपहिं नाम जपते हैं और अणिमा १ महिमा २, गरिमा ३, लघिमा ४, प्राप्ति ५, प्राकाम्य ६, इशिता ७, वशिता ८, इति अणिमादिक अष्टसिद्धि को पाकर सिद्ध होहिं नाम सिद्ध होजाते हैं। इहां अणिमादिक अष्टसिद्धि कहने का भाव यह है कि यह अष्टसिद्धि जो हैं सो भगवताश्रित हैं इससे कहा और इसके सिवाय जो १५ सिद्धि हैं सो महातुच्छ सिद्धि हैं सो भागवत में प्रसिद्ध है इससे उसको नहीं कहा इससे यह उपदेश भया कि सिद्धि का भी देनेवाले नामही हैं और जिज्ञासु भक्त का आधार रामनाम है इससे नाम सर्वोपरि है॥ ४॥

जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥

अर्थ—अब तीसरे आर्तभक्त को कहते हैं। आर्तभक्त उसको कहते हैं कि, जो दुःख करके युक्त हो। सोई गोस्वामीजी कहते हैं कि, जन जो दास है सो आरतभारी नाम बड़े भारी दुःखमें रामनाम को जिह्वा से जपते हैं तो संपूर्ण जो कुत्सित संकट नाम दुःख हैं सो मिटहिं नाम मिट जाते हैं और होहिं सुखारी नाम सुखी होजाते हैं अर्थात् रामनामके प्रतापसे सब दुःख नष्टहोजाते हैं और सुखी होजाते हैं। जैसे कि गजादिक भये हैं, अजामिल जी भये

हैं। हे शिष्य, इहांपर आरतभारी कहनेका भाव यह है कि प्रथम तो जपते नहीं हैं जब प्राणान्तका समय आया और देखाकि अब कुछ ठिकाना नहीं है तब भयके मारे नामस्मरण किया, जैसा गजराज ने किया इससे भारी संकट कहा। भाव जो सुखमें श्रीसीताराम सीताराम कहै तो दुःख कभी भी न हो ऐसा नाम है इससे यह दिखाया कि दुःख के भी नाश करने वाले नामही हैं दूसरा कोई नहीं और एक यह भी जानना चाहिये कि जब कभी दैवयोगसे दुःख परे तब रामनाम ही को जपना चाहिये। ऐसा नहीं कि हाय माय बाप दादा इत्यादि पुकार करके रोना यह तो मूर्खोंके काम हैं इससे सर्वोपरि श्रीरामनाम ही को जपना उचित है॥ ५॥

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा॥६॥

अर्थ—श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि इस तरह के श्रीरामजी के भक्त जग नाम संसारमें चारप्रकार के हैं और चारिउ भक्त सुकृती नाम सुन्दर कृति नाम यश करके युक्त हैं और चारिउ भक्त अनघ नाम पापसे रहित हैं, और चारिउ भक्त उदार नाम श्रेष्ठ हैं, अथवा उदारनाम बड़े हैं। भाव कोई बात किसी में न्यूनाधिक नहीं है चारो भक्त बराबर हैं इससे चारिउ सुकृति अनघ उदार कहे काहेसे कि भगवद्दास सब बराबर हैं इससे यह दिखाया कि श्रीरामजी के जो दास हैं सोई यथार्थ सुकृति हैं और सोई पाप से रहित हैं और सोई उदार श्रेष्ठ हैं। यथा [सोइ सर्वज्ञ गुणी सोई ज्ञाता। सोइ महि मंडित पंडित दाता॥ धर्म परायण सोइ कुल त्राता। ।रामचरण जाकर मनुराता॥ नीतिनिपुण सोइ परम सयाना। श्रुति सिद्धांत नीक तेहि जाना॥ सोइ कवि कोविद सोइ रनधीरा। जो छल छांड़ि भजै रघुवीरा] इत्यादि कहा है। और जो भक्तिहीन है सोई अयशस्वी है, सोई पापी है, सोई महानीच है। यथाप्रमाण कात्यायन संहितायाम्—

यस्तु पुत्रः शुचिर्दक्षः पूर्वे वयसि धार्मिकः॥
रामनाम परं नित्यं तत्पुत्रं कवयो विदुः॥ २४॥

(पुनः—वैश्वानरसंहितायाम्)

म्लेच्छतुल्याः कुलीनास्ते ये न भक्ता रघूत्तमे।

संकीर्णयोनयः पूता नाम गृह्णान्ति ये सदा ॥२४५॥
(पुनः जावालिसंहितायाम्--)
नाम्नि यस्य रतिर्नास्ति सर्वै चाण्डालतोधिकः।
संभाषणं न कर्त्तव्यं तत्समं नाम तत्परैः ॥२४६॥

अर्थ—कात्यायनसंहिता में कहा है कि वह पुत्र पवित्र है दक्ष नाम चतुर है जो पूर्व अवस्था में धर्मात्मा है और रामनाम में तत्पर है, नहीं तो पुत्र नहीं है, मलमूत्र तुल्य है ऐसा कबि लोग कहते हैं। पुनः वैश्वानर संहिता में कहा है कि जो रामजी के भक्त नहीं है सो कुलीन ब्राह्मण क्षत्रिय भी म्लेच्छ के समान है और जो नीच भी रामभक्त है सो नीच नहीं है वह रामनाम को जपने से पवित्र है। पुनः जावालिसंहिता में कहा है कि जिसकी रामनाम में प्रीति नहीं है सो निश्चय करके चाण्डालसे भी अधिक है तिनसे नामजापक भक्त को बोलना नहीं चाहिये। हे शिष्य, इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे रामभक्त सर्वोपरि है इसमें सन्देह करना उचित नहीं है ॥ ६॥

छहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा। ज्ञानी प्रभुहिं विसेषि पियारा॥

अर्थ—श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि पूर्वोक्त चारिहु राम भक्त चतुर कहुँ राम नामही अधार नाम अवलंब है। भाव और कुछ नहीं है केवल एक राम नामही अधार है काहे से नाम अधार है कि चारों चतुर हैं। भाव चतुरका यही काम है कि सबका सार रामनाम लेलेना और सब बृथा है इससे चारों को चतुर कहा। पुनः गोस्वामीजी कहते हैं कि पूर्वोक्त चारिहु चतुरभक्तों में ज्ञानी भक्त जो हैं सो प्रभु को बिशेष करके प्रिय हैं। भाव तीन भक्त जो हैं सो सामान्य प्रिय हैं काहे से कि कामना युक्त हैं और ज्ञानी भक्त जो हैं सो कामना से रहित हैं इससे प्रभुहि नाम प्रभु रामजी को हीति निश्चय करके विशेष प्रिय कहा। (प्रश्न) हे स्वामीजी, यह चार प्रकार के भक्त कौन शास्त्र में कहा है सो कृपाकरके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इन चारों भक्तों को सर्ववेदमयीगीता शास्त्र जो मुख्य सिद्धांत ग्रन्थ है उसमें श्रीकृष्णचन्द्रजी ने परमसखा अर्जुन को कहा है। यथा—

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोर्जुन।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ २४७ ॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं च सच मे प्रियः ॥२४८॥
उदाराः सर्वएवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।

अर्थ—भगवत् बोले कि हे अर्जुन, आर्त्त जो दुःखी है जिज्ञासु जो जानने की इच्छा वाला है और तीसरा जो अर्थ का अर्थी यानी धनके चाहने वाला है और चौथा जो ज्ञानी है अर्थात् स्वस्वरूप का जानने वाला ऐसे चार प्रकार के सुकृति जन मेरे को भजते हैं। हे भरतर्षभ, तिनमें ज्ञानी नित्य योग युक्त एक मेरी मुख्य भक्ति वाला श्रेष्ठ है। कारण कि, ज्ञानिन को मैं अतिशय प्रिय हूँ और सो ज्ञानी हम को प्रिय है ते सब उदार हैं तो भी ज्ञानी मेरे को प्रिय हैं ऐसा मेरा मत है। हे शिष्य, इस प्रकार से कहा है और जो २ बातें गीता में कहीं हैं सोई २ बातें गोस्वामीजो ने इहांपर कही हैं। (प्रश्न) हे स्वामी जी गीता में चार प्रकार के भक्त कहे हैं सही कर परन्तु चारिउ भक्तका नाम आधार नहीं कहा है और इहांपर गोस्वामोजी ने चहूँ चतुर को नामही आधार कहा सो कहांसे कहा कृपा करके कहिये मेरे को बड़ा संदेह है काहे से कि रामनाम का महात्म्य तो केवल कलियुग में कहा है और सब युगों में नहीं और सब युगोंमें तो दूसरा ही उपाय कहा है। यथाप्रमाण-विष्णुपुराणे-

ध्यायन्कृते यजन्यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ॥
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ श्रीनामकीर्तनम् ॥

अर्थ—सत्ययुग में ध्यान रहा, त्रेता में यज्ञ द्वापर में भगवत्का पूजन कलियुग जब आते हैं तब रामनामके कीर्त्तनस्मरण होते हैं। ऐसेही गोस्वामी जीने भी कहाहै। यथा(कृतयुग सब जोगी विज्ञानी। करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी॥ त्रेता विविध यज्ञ नर करहीं। प्रभुहिं समर्पि कर्म भवतरहीं। द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भवतरहिं उपाय न दूजा॥ कलियुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा॥ कलियुग योग न जज्ञ न ज्ञाना। एक अधार राम गुनगाना॥ सोइ भवतर कछु संशयनाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं॥ पुनः—नहिं कलि करम न भगति विवेकू। रामनाम अवलंब न एकू इत्यादि बहुत हैं इससे रामनाम का माहात्म्य केवल कलियुगही में है और

युग में नहीं है। और गीतामें तो सर्वथा नाम माहात्म्य ही नहीं हैं और इहांपर गोस्वामीजी ने चारो भक्तन के नामही अधार कहा सो कैसा है। (उत्तर) हे शिष्य, इन सब बातों का उत्तर स्वयं गोस्वामीजी आप देते हैं सो तुम सावधान होकर सुनो ॥ ७ ॥

चहुँ जुग चहुँ श्रुति नामप्रभाऊ। कलिविसेषनहिंआनउपाऊ॥

अर्थ – हे शिष्य, अब वह पूर्वोक्त सब शंका का उत्तर देते हैं। श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि आपने जो कहाकि नाम माहात्म्य केवल कलियुग ही में है और युग में नहीं सो यह कहना सर्वथा अयोग्य है काहे से कि नाम माहात्म्य तो चहुँ युग में है। यथा प्रमाण आदिपुराणे कृष्णउवाच-(गायन्ति रामनामानि वैष्णवाश्च युगे युगे। त्यक्त्वा च सर्व कर्माणि धर्माणि च कपिध्वज ॥) अर्थात् युग २ में वैष्णव लोग सब कर्म धर्म को त्यागकर रामनाम गाते हैं इत्यादि बहुत कहा है इससे चारों युग में नाममाहात्म्य है और दूसरा जो आपने कहा कि चार प्रकार के भक्त तो गीताजी में कहे हैं सही कर परन्तु नाम माहात्म्य नहीं कहा है सो यह भी आपका कहना ठीक नहीं है काहे से कि एक गीताजी में नहीं कहा है तो क्या अप्रमाण है रामनामके माहात्म्य तो चहुँ श्रुतिनाम चारो वेदमें प्रसिद्ध हैं। हे शिष्य, चारोंवेदकी श्रुतियोंके ऊपर प्रमाण दे आये हैं इससे इहांपर प्रमाण देनेकी कोई आवश्यकता नहींहै। पुनः – आपने यह कहा कि नाममाहात्म्य केवल कलियुग में ही हैं दूसरे युग में नहीं और युग में तो औरही उपाय कहा है सो यह भी कहना उचित नहीं है काहे से कि नामका माहात्म्य चारिउ युग में प्रसिद्ध है परन्तु कलियुग में विशेष करके नाम माहात्म्य है और आन नाम दूसरा उपाय नहीं है। भाव और युगमें उपाय भी रहा इसका तात्पर्य्य यह है कि सत्ययुगमें प्रधान रामनाम उपायरहा ध्यान, और त्रेता में प्रधान रामनाम उपाय रहा यज्ञ द्वापर में प्रधान रहा रामनाम उपाय रहा पूजन, और कलियुग में तो केवल मुख्य नाम ही नाम हैं दूसरा कुछ नहीं है। तातें हे शिष्य, तुम सर्वोपायसे विनिर्मुक्त होकर एक रामनामही को जपो इसके सिवाय कल्याण नहीं है और सर्वोपाय वृथा है, केवल मत्था कूटना है इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए ॥ ८ ॥

दोहा--सकलकामना हीन जे, रामभगति रस लीन।
नाम सुप्रेमपीयूष हृद, तिनहुं किये मनमीन ॥२४॥

अर्थ - अब श्रीगोस्वामीजी सर्वोपरि जो पंचम प्रेमी भक्त हैं तिनका अवलम्ब नाम दिखाते हैं गोस्वामीजी कहते हैं कि सकल नाम सम्पूर्ण कामना नाम वासना से हीन नामरहित जे जन नामदास हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां पर सकलकामना करके हींन क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, सकल कामनासे हीन कहने का भाव यह है कि पूर्वोक्त जो चारों भक्त हैं सो कामना करके युक्त हैं। जैसे कि आरत भक्त को दुःख नाश होने की चाहना है, और जिज्ञासु भक्त को गूढगति जानने की चाहना है, और अर्थी भक्त को सिद्धि होने की चाहना है और ज्ञानी भक्त को मोक्ष होने की चाहना है। इस प्रकार चारों भक्त कामना करके युक्त हैं और पञ्चम जो प्रेमी भक्त हैं सो सकल कामना से हीन हैं। यथा (जाहि न चाहिय कबहु कछु तुम्हसन सहज सनेहु। बसहु निरन्तर तासु मन सो राउर निजगेहु॥ इत्यादि) प्रेमी भक्त के लक्षण कहे हैं सोई गोस्वामीजी कहते हैं कि सकल कामना से जे हीन हैं और रामजी की जो भक्ति है रसनाम आनन्दरूप तेहि में लीन नाम निमग्न हो रहे हैं। हे शिष्य, इहांपर रस नाम आनन्द का है। यथा – [रसो वै सः रसं ह्येवायं लब्ध्वा नंदी भवतीति श्रुतिः –] अथवा रामजी की जो पञ्चरस सम्बन्धि भक्ति है अर्थात् शान्ति रस १, सख्यरस २, दास्यरस ३, वात्सल्यरस ४, श्रृङ्गार रस ५. इति पंचरस जो रामजी की भक्ति है तेहि में जे जन लीन रहते हैं तिनहुंने नाम प्रेम अर्थात् रामनाम में जो अतिशय प्रेम है सोई तो पीयूष नाम अमृत का ह्रद नाम कुण्ड है तेहिमें अपने मनको मीन नाम मछली किए हैं। हे शिष्य, इहांपर तिनहूं कहने का भाव यह है कि दूसरे की को कहै कि जो सर्वोपरि पंचम प्रेमी भक्त हैं पंचरस वाले सो भी रामनाम में निमग्न हैं तो पूर्वोक्त चारों भक्तनकी को कहै उनके तो नाम अधार हई है इससे यह दिखाया कि चाहे शान्ति रस वाले हों चाहै सख्यरस वाले हों चाहे दास्य रस वाले हों चाहै वात्सल्यरस वाले हों चाहै शृंगाररस वाले रसिक लोग हों, परन्तु बिना श्रीरामनाम के जपे ठीक कोई को नहीं है चाहै कुछ करै इससे सबको छोड़करके रामनाम जपना चाहिए। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर अमृतका कुंड क्यों कहा और कुंडही क्यों कहा सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, कुंड कहनेका भाव यह है कि कुंडमें मीन बहुत सुखी रहते हैं काहेसे कि अगाध जल रहता है। यथा सुखी मीन ज ँ नीर अगाधा।

जिमि हरिसरन न एको बाधा ॥ पुनः सुखी मीन सब एकरस, अति अगाध जलमाहिं। जथा धरम शीलन्हके, दिन सुख संजुत जाहिं॥ (इत्यादि) बहुत कहा है इससे हृद कहा और पानीका कुण्ड नहीं कहा, अमृतका कुंड कहा इसका हेतु यह है कि जलका कुंड तो केवल मछरी के सुखार्थ उपमा दीगई है, परंतु मीन कभी नाश होजाता है, और भगवद्दास जो हैं सो सदा मृत्यु से रहित हैं अर्थात् नामके बलसे अमर हैं। इससे अमृत का कुण्ड कहा जलका कुंड नहीं कहा, इससे यही दिखाया कि पूर्वोक्त चारों भक्तों से पंचमप्रेमी भक्त सर्वोपरि है और रामनामका ऐसा प्रेमी है कि अपने मनको मीन बनाके बूड़े रहते हैं। भाव किञ्चिन्मात्र भी रामनामको नहीं छोडते हैं सदा सर्वकाल जपते रहते हैं यानी नामको अपना जीवन ही आधार बनाये हैं। इससे यह सिद्ध भया कि कोई भक्त हो बिना रामनाम जपे कल्याण नहीं है और सबको छोड़कर रामनाम जपना यहो मुख्यभक्ति है। और रामनाम के स्मरण करनेवाला वही मुख्य भक्त है, नहीं तो कहनेही मात्र भक्त है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, चारप्रकार के भक्त तो गोताजीमें कहे हैं, पंचमप्रेमी भक्तको कौनसे शास्त्रमें कहा है सो कृपा करके कहिए। (उत्तर) हेशिष्य, पंचमप्रेमी भक्तको भी गीताजीके उसी श्लोक में कहा है सो गुप्त है और चार प्रकार के भक्तप्रसिद्ध हैं। यथा (आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च] हेशिष्य, देखो इहांपर अंतमें चकार कहने का क्या प्रयोजन है इससे यह गुप्ताभिप्राय जान परता है कि चकारात्प्रेमोपि] अर्थात् चकार से प्रेमी भक्तको भी जानना चाहिए इस में संदेह कुछ नहीं है। (प्रश्न] हेस्वामीजी, गीताजी में तो गुप्त कहा और गोस्वामीजीने प्रगट करके कहा सो क्यों (उत्तर] हे शिष्य, जैसे गीताजी में गुप्त कहा है तैसे ही गोस्वामीजी ने भी इहांपर प्रथम चारों भक्तों को क्रमशः कहकर के अंत में (चहुँजुग चहुँ श्रुतिनाम प्रभाऊ। कलि विशेषि नहिं आन उपाऊ) इत्यादि ॥ गुप्त करके पश्चात् प्रेमी भक्तको कहा नहा तो बोचमें (चहुँजुगचहुँ श्रुति) कहने का क्या प्रयोजन रहा इससे जैसा चमत्कार प्रभुने गीताजी में कहा है तैसेही इहांपर गोस्वामीजी ने भी कहा है इससे संदेह न करना काहे से कि भगवत के और भगवद्दास के रहस्य एक ही है इससे पंचप्रेमी भक्तको भी गीता शास्त्रसेही कहा है इससे यह दिखाया कि पांचहु भक्तन का अधार रामनाम ही

हैं ताते राम नाम सर्वोपरिहै इसी प्रकारसे पांचहु भक्तनका अधार श्रीसीतानाम जानना चाहिए ॥ ४ ॥

अगुनसगुन दुइब्रह्मस्वरूपा। अकथ अगाध अनादिअनूपा॥

अर्थ—हेशिष्य, अब श्रीगोस्वामीजी जो प्रथम कहि आये हैं कि [अगुन सगुन बिच नाम सुसाषी] उसी निर्गुण सगुण दूनों ब्रह्म को सिंहावलोकन करके इहां पर विस्तार से वर्णन करते हैं (प्रश्न) हेस्वामीजी, प्रथम तो कहवे किए हैं फिर यहां कहने का प्रयोजन क्याहै (उत्तर) हेशिष्य, प्रथम जो कहा है सो तो केवल निर्गुण और सगुण ब्रह्म की पहिचान और प्रबोधकार्थ रामनाम को सुसाषी और चतुरदुभाषी कहा है कुछ राम नाम को बड़ा नहीं कहा और न प्रथम निर्गुण सगुणका स्वरूपही कहा है और अब तो निर्गुण सगुण दूनों के यथार्थ स्वरूप वर्णन करते हैं और एक सौलभ्यता गुण करके दूनों से रामनाम को बड़ा कहते हैं इससे पुनः कहते हैं कि अगुण जो निर्गुण ब्रह्म हैं और सगुण जो श्रीदशरथात्मज रामजी हैं यह दुई ब्रह्मके स्वरूप हैं दुइकहने का भाव यह है कि तीसरा ब्रह्म के स्वरूप नहीं है, दुइहै। इससे दुइ कहा [प्रश्न] हे स्वामीजी, विष्णु नारायणादि क्या ब्रह्मके स्वरूप नहीं हैं जो इहां केवल रामही को अनादि कहाहै (उत्तर) हे शिष्य, भगवत् का स्वरूप अनन्त हैं परंतु भेद यह है कि रामस्वरूप अनादि है और विष्णुनारायणादि के जो स्वरूप हैं सो सब सन्सार के कार्य्यार्थ बीच में भये हैं और इहांपर अनादि सगुण ब्रह्मका प्रयोजन है सो रामही हैं। यथा—(राम अनादि अवधपति सोई ॥ इत्यादि) कहा है। (प्रश्न) हेस्वामीजी, निर्गुण और सगुण का क्या अर्थ है और निर्गुण सगुण दोई ब्रह्म के स्वरूप कोई शास्त्रका सिद्धांत है कि केवल गोस्वामीजी का ही मत है सो कृपा करके कहिये (उत्तर) हेशिष्य, सब मायाकृत गुणोंसे जो रहितहो उसको निर्गुण कहते हैं और सम्पूर्ण क्षमा दयादि दिव्य गुणों करके जो युक्त हो उसको सगुण कहते हैं। दूसरा अर्थ विरुद्ध है और निर्गुण सगुण दो ब्रह्म हैं यह कोई शास्त्र का मत है कि केवल गोस्वामीजी का यह जो कहा सो बड़ा अयोग्य कहा। क्योंकि गोस्वामीजी का कहना सब शास्त्रयुक है शास्त्र से विरुद्ध एक अक्षर भी नहीं जानना चाहिये जो कोई गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी

के बचनको शास्त्रसे विरुद्ध कहे अथवा माने सो महामूर्ख पशु है। हे शिष्य, दो ब्रह्मका स्वरूप शास्त्र सिद्ध है। यथा प्रमाण—

स्वरूपं द्विविधं चैव सगुणं निर्गुणात्मकम् ॥ २४९ ॥

एको देवः सर्वभूतेषु गूढ़ःसर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षीचेतनः केवलो निर्गुणश्चेति श्रुतिः-२५०

अर्थ—अथर्वण वेदोक्त गोपालतापनी में कहा है कि सगुण और निर्गुण दो प्रकार के स्वरूप हैं तिसमें निर्गुणस्वरूप जो एक हैं सो सब जीवों में बहुत सूक्ष्म होकर सर्वव्यापी हैं सर्व जीव का अन्तर्यामी हैं कर्म का प्रेरक स्वामी हैं सब जीवों के हृदय में निवास किये हैं सब के साक्षी चेतन हैं केवल निर्गुण हैं यानी मायाकृत गुणों से निर्लेप है। पुनः श्रुतिः—

उदरे ब्रह्मेति साकाराख्य मुपास्यते। हृदये ब्रह्मेत्यादित्य रूपेण प्राप्ता ब्रह्मादिदेवताः। अतएव केवलं शून्याच्छून्यतरं शून्यं सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं सूक्ष्मं व्यापकाद् व्यापकतरं व्यापकं प्रकाशत्प्रकाशतरं प्रकाशं ज्ञानात्ज्ञानतरं ज्ञानं नित्यान्नित्यतरं नित्यं ध्येयाद्ध्येयतरंध्येयं ईश्वरादीश्वरपरं ईश्वरं तत्त्वात्तत्त्व परंतत्त्वं स्थूलात्स्थूलपरं स्थूलं आनन्दादानन्दपरं आनन्दं सुखात्सुखपरं सुखं चैतन्याच्चैतन्यपरं चैतन्यं रूपाद्रूपपरं रूपं ज्योतिषोज्ज्योतिपरं ज्योतिः ज्योत्स्नायाज्योत्स्नापरं ज्योत्स्ना समस्तं प्रमुच्यते॥ २५१ ॥

अर्थ—उदरमें साकार ब्रह्मकी उपासना करना चाहिये और हृदय में आदित्यरूप करके अर्थात् प्रकाशरूप करके ब्रह्मादि देवता प्राप्त भयेहैं इससेही वह केवल शून्यसे भी अतिशून्य है सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म हैं व्यापक से भी अतिव्यापक है प्रकाश है ज्ञानसे भी अतिज्ञान है नित्य से भी नित्य है ध्येय से भी अति ध्येय है ईश्वर से भी अति ईश्वर है तत्त्व से भी परे तत्त्व है स्थूल से भी परे स्थूल है आनन्द से भी परे आनन्द है सुख से भी परे सुख है चैतन्य से भी परे

चैतन्य है रूप से भी परे रूप है ज्योति से भी परे ज्योति है तेज से भी परे तेज है इसी प्रकार से सब कहा है । इससे गोस्वामीजीने भी अगुन सगुन दुइ ब्रह्मस्वरूपा कहा। पुनः वह निर्गुण सगुण दूनो ब्रह्म कैसे हैं अकथ नाम कथन करने योग्य नहीं हैं। भाव अनीवर्चनीय हैं और अनादि हैं यानी कार्य्यार्थ बीच में प्रकट नहीं भए हैं जैसे कि विष्णुनारायणादिक भए हैं इससे अनादि कहा भाव यह निश्चय नहीं हैं कि निर्गुण और सगुण रूप श्रीरामजी कबसे हैं यह आदि नहीं है और नारायण परब्रह्म जो हैं तिनकी तो यह आदि है कि ब्रह्माण्ड के आदिकर्ता हैं और अपनी इच्छासे नाराको प्रकट करके उसमें अयन नाम घर किये हैं तब से आदिकर्ता नारायणनाम भया हो सो "मनुस्मृति" में प्रसिद्ध है और रामजी तो सबके अनादि ब्रह्म हैं सो उपासनात्रय सिद्धान्त में विस्तार से कहा है देखलेना। पुनः-कैसे हैं कि अगाध नाम अथाह हैं यानी बड़े गम्भीर हैं। यथा (कोटि सिंधुसत सम गंभीरा) इत्यादि कहा है इससे अगाध कहा और बड़े अनूप हैं अर्थात् भगवत् के (एकोऽहं बहुस्यामः) अनन्त स्वरूप हैं उन सब से निर्गुण और सगुण रामरूप विलक्षण हैं इससे अनूप कहा। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां पर गोस्वामीजी ने निर्गुण और सगुण ब्रह्म में चार विशेषण यानी अकथ १, अगाध २, अनादि ३, अनूप ४, क्यों कहा सो कृपा करके कहिये। (उत्तर) हेशिष्य, इसका अभिप्राय यह है कि दूनों ब्रह्म चतुष्पाद विभूत जो है यानी प्रकाशवान् १, अनन्तवान् २, ज्योतिष्मान् ३, आयतवान् ४, इति तिनके अधिपति धारण करने वाले हैं तिनके प्रकाशक चारों विशेषण है इससे चार कहा॥ १॥

मोरें मत बड नाम दुहूँतें। किये जेहिं जुग निज बस निज बूतें॥

अर्थ—हेशिष्य, गोस्वामीजो कहते हैं कि पूर्वोक्त जो निर्गुण और सगुण ब्रह्म हैं तिनसे मोरें नाम हमारे मतसे रामनाम दुहूँते बड़ा है काहे से कि जेहि रामनाम ने युग नाम दूनों निर्गुण और सगुण ब्रह्म को निज नाम अपने बूतें नाम पराक्रम से निज नाम अपने वश किये हैं। हेशिष्य, बूता पूर्व देश में बल को कहते हैं। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां पर निज बूतें क्यों कहा। (उत्तर) हेशिष्य, निज बूतें कहने का भाव यह है कि कोई दूसरे के बल सहायता से निज वश नहीं किये हैं स्वयं आप अपने बलसे वश किये हैं ऐसे रामनाम बली हैं तिसमें भी दूनों को वश किये हैं कुछ एकही को नहीं इससे

मोरें मत बड़ नाम दुहूतें है काहे से कि बश करना बड़ेही का काम है छोटे का नहीं (प्रश्न) हेस्वामीजी, प्रथम तो गोस्वामीजी ने कहाकि [को बड़ छोट कहत अपराधू॥ और अब स्वयं आपही कहते हैं कि मोरें मत बड़ नाम दुहूँते सो क्यों कहा कहिये। (उत्तर) हेशिष्य, इसका कारण तो हमने प्रथम ही में कहा कि तत्त्व महत्त्व करके बड़ा छोटा कहने में अपराध है कुछ सुलभता गुण करके बड़ा छोटा कहने में अपराध नहीं है इससे इहांपर सौलभ्यता गुण करके [मोरें मत बड़ नाम दुहूतें] कहा है ताते इसमें सन्देह करना योग्य नहीं इससे यह दिखाया कि निर्गुण और सगुण दूनों ब्रह्म सब प्रकार से अकथ हैं और अगाध हैं अनादि हैं अनूप हैं। भाव सबप्रकार से अगम हैं तिनको भी रामनाम ने बश कर लिया है तो और की क्या कथा है इससे रामनाम सर्वोपरि है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, मोरेमत क्यों कहा शास्त्र के मत क्यों नहीं कहा। (उत्तर) हे शिष्य, मोरें मत से जो कहा उसका हेतु आगे कहते हैं॥ २॥

प्रौढिसुजनजनजानहिंजनकी। कहउँप्रतीतिप्रीतिरुचिमनकी॥

अर्थ—हेशिष्य, गोस्वामीजी कहते हैं कि मैंने जो कहा है कि (मोरें मत बड़नाम दुहूतें) सो इसबात को सुजनजन अर्थात् तत्त्वज्ञाता जे जन हैं सो जन जो मैं हूँ तिनकी प्रौढि नाम स्यानपनाजनि नाम मति जानहि कि आपने तो अपनी चातुर्य्यता से पक्षपात कहा है जैसे कि प्रौढोक्ति अलंकार में कविलोग भूठसांच अपनी मत्यनुसार कह दिया करते हैं तैसेही आपने भी कहा है सो यह बात दासकी मति जानहि जो कहो कि आपने कैसे जाना रामनाम दूहूँते बड़ा है तो कहते हैं कि वेदपुराण में रामनामका महात्म्य सुनके मेरे मनमें प्रतीति भई तेहि प्रतीति से प्रीति भईइसीसे मैं प्रतीति और प्रीति और रुचि नाम इच्छा अपने मनकी कहउँ नाम कहता हूँ कि रामनाम दुहूँतें बड़ा है। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहांपर गोस्वामीजी ने तीन बात यानी प्रतीति १ प्रीति२ रुचि ३ क्यों कहीं। (उत्तर) हेशिष्य, रामजी की प्राप्ति के वास्ते तीनही साधन प्रधान है काहे से कि जब जानने की रुचि नाम इच्छा होगी तब वेद पुराण अथवा सन्त गुरु के बचन द्वारा जानेगा और जब जानेगा तब प्रतीति नाम बिश्वास होगा और जब विश्वास होगा तब प्रीति होगी और जब प्रीति होगी तब भक्ति होगी और जब भक्ति होगी तब प्रभु की प्राप्ति होगी। यथा (जाने विनु न होय परतीती। विनु परतीति होय नहि प्रीती॥ प्रीति विना नहि

भगति दृढाई जिमि खगपति जलकी चिकनाई ॥) इत्यादि कहा है इससे भगवत की प्राप्ति वास्ते प्रीति और विश्वास दोई प्रधान है विना विश्वास और प्रीति कोई कार्य नहीं होता है यथा कौनिउँ सिद्धि कि विनु विश्वासा ॥ इति—पुनः उमाजोग जपदान तपनानामख व्रतनेम ॥ राम कृपा नहिं करहिं तस, जस निष्केवल प्रेम ॥ इत्यादि) पुनः—धरमसेतु पालक तुम्ह ताता। प्रेम विवस सेवक सुखदाता ॥ पुनः—जिन्हके चरन सरोरुह लागी। करत विविध जप जोग विरागी ॥ ते दोउ बन्धु प्रेमजनुजीते ॥ इति प्रेम—) पुनः सुनु नृपजासु विमुख पछिताहीं। जासु भजन विनु जरनि न जाहीं ॥ भयो तुह्मार तनय सोइ स्वामी। राम पुनीत प्रेम अनुगामी ॥) पुनः रामहिं केवल प्रेम पियारा। जानि लेहु जे जानन हारा ॥) पुनः—हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रकट होहिं मैं जाना ॥) पुनः—प्रेमते प्रभु प्रकटे जिमि आगी ॥) पुनः—व्यापक ब्रह्मनिरंजन, निरगुन विगत विनोद। सो अजप्रेम भगति बस, कौशल्या की गोद ॥ पुनः—सुख संदोह मोहपर ज्ञान गिरा गोतीत। दम्पति परमप्रेम बस कर सिसु चरित पुनीत ॥ पुनः—मिलहिं न रघुपति विनु अनुरागा। इत्यादि) सर्वत्र कहा है इससे प्रेम विश्वाससेही भगवत मिलते हैं दूसरा सब वृथा है। इससे यह दिखाया कि जिनको निर्गुण और सगुण से रामनाम बडा जानना हो सो प्रेम और विश्वास करके देखलेवे कि है या नहीं और शास्त्रमें तो कहाही है। यथाप्रमाण—

नारायणादि नामानि साकारैश्वर्य्यमुत्तमम् ॥
नित्यं ब्रह्म निराकारमैश्वर्य्यं वैविभाति च ॥ २५२ ॥
उभयैश्वर्य्यमान्नित्यो रामो दशरथात्मजः।
साकेते नित्यमाधुर्य्ये धाम्नि संराजते सदा ॥ २५३ ॥
रामनाम परं तत्त्वं द्वयोः कारणमुज्ज्वलम्।
यस्य संस्मरणादेव साक्षाद्रामालयं व्रजेत् ॥ २५४ ॥

अर्थ—नारायणादि जितने नाम हैं सो साकार ऐश्वर्य के देने वाले हैं तिन करके युक्त हैं और नित्य निराकार जो निर्गुण ब्रह्म हैं सो निराकार ऐश्वर्य के देनेवाले हैं तिन करके युक्त हैं। और श्री रामजी दूनों ऐश्वर्य करके नित्य युक्त हैं, जो श्रीरामजी सदा सुन्दर साकेतलोक में विराजते हैं। रामनाम

व्यापक एक ब्रह्म अविनासी । सतचेतन घन आनंदरासी ॥

3८

अर्थ—हे शिष्य, अब निर्गुण ब्रह्मकी अगमता दिखाते हैं, और स्वरूप भी दिखाते हैं कि जिसको निर्गुण ब्रह्म कहते हैं । श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि, वह पूर्वोक्त निर्गुण ब्रह्म कैसे हैं कि व्यापक हैं अर्थात सम्पूर्ण चराचर में अन्तर्य्यामी हो करके एक रससे व्यापि रहे हैं—जैसे काष्ठमें अग्नि । पुनः कैसे हैं कि एक हैं भाव हैं एक ही व्यापि रहे हैं सर्वत्र ऐसे अद्भुत हैं और अविनाशी हैं । (प्रश्न) हे स्वामीजी, अविनाशी क्यों कहा (उत्तर) हे शिष्य, अविनाशी कहने का भाव यह है कि ऐसा कोई न जाने कि जब सर्वव्यापक हैं तो सबका नाश होनेपर उनका भी नाश होजाता होगा इससे अविनाशी नाम नाशसे रहित कहा । पुनः कैसे हैं कि सत् हैं सत्य उसको कहते हैं कि जिसमें असत्यका लेश न हो । पुनः-वह निर्गुण ब्रह्म कैसे हैं कि चेतन हैं यानी चिद्रूप हैं चित् उसको कहते हैं कि जिसमें जड़ता का लेश न हो । पुनः कैसे हैं कि घन नाम समूह आनन्दके राशि नाम स्थान हैं, भाव आनन्द स्वरूप हैं । आनन्द उसको कहते हैं कि जिसमें दुःख नहीं हो इससे यह निर्गुण ब्रह्मका स्वरूप हैं । यथा (एकमेवाद्वितीयम्) पुनः-एकोदेवः सर्वभूतेषु गूढः १, सर्वव्यापी २, सर्वभूतान्तरात्मा ३, सर्वाध्यक्षः ४, सर्वभूताधिवासः ५, साक्षी ६, चेता ७, केवल ८, निर्गुणश्चेति श्रुतिः-इत्यादि कहा है । (प्रश्न) हे स्वामीजी, निर्गुण ब्रह्म जो हैं सोई सब जीवके स्वरूप हैं कि जीव कोई भिन्न वस्तु है सो कृपा करके कहिये । (उत्तर) हे शिष्य, इहां पर विशेष कहने से ग्रन्थ बढ़ जायगा ताते थोरा कहते हैं सुनो जीव ईश्वर दूनों स्वरूप भिन्न २ हैं परन्तु रहते हैं सर्वदा साथही में सो (द्वासुपर्णा) इस श्रुति में स्पष्ट कहा है सो पूर्वही में तुमसे कहिआये हैं इससे निर्गुण ब्रह्म भिन्न हैं जीव भिन्न है एक कहना भूल है । [प्रश्न] हे स्वामीजी, इहांपर निर्गुण ब्रह्म में ६, विशेषण अर्थात् व्यापक १, एक २, अविनाशी ३, सत् ४, चेतन ५, आनन्दराशि ६, क्यों कहे । [उत्तर) हे शिष्य, ६ विशेषण देनेका कारण यह है कि ब्रह्मषडैश्वर्य्य करके युक्त हैं इसीसे भगवान् कहते हैं । यथाप्रमाण—

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः ।
ज्ञानवैराग्य योश्चैव षण्णां भग इतीरिणाम् ॥२५५॥

अर्थ—सम्पूर्ण ऐश्वर्य १, धर्म २, यश ३, श्रीतेज ४, और ज्ञान ५, वैराग्य ६, इसको भग कथन किया है यह छवो जिसमें हों उसको भगवान् कहते हैं इससे छः विशेषण दिया कि निर्गुण ब्रह्म षडैश्वर्य करके युक्त हैं ॥ ६ ॥

अस प्रभु हृदयअछत अविकारी। सकल जीवजगदीन दुखारी॥

अर्थ—हे शिष्य, गोस्वामीजी कहते हैं कि अस ऐसा पूर्वोक्त षडैश्वर्य्य युक्त प्रभु नाम समर्थ और अविकारी नाम षड्विकारसे रहित भाव षडैश्वर्य्य युक्त और षड्विकारसे रहित तिनके हृदय में अछत नाम अछैते भाव रहते हुये भी सकल नाम सम्पूर्ण चराचर जीव जग नाम संसार में दीन नाम मलीन अथवा गरीब और दुखारी नाम दुःखी हो रहे हैं। भाव बड़ी आश्चर्यकी बात है कि जहाँ "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म" निवास करें तहाँ जीव सब दीन और दुःखी रहें जैसे कि सूर्य के पास में रात्रि होना असंभव है तैसे ही जाने विना दीन दुःखी हो रहें हैं जो जानते कि सर्वान्तर्यामी ब्रह्म मेरे साथही में हैं तो (ब्रह्म विद्ब्रह्मैव भवति कीटभृंगन्यायेन) अर्थात् ब्रह्म को जाने से ब्रह्महो होजाते हैं तैसेही सब जीव निर्गुण ब्रह्मको जानने से और उनके प्रकट होनेसे सुखी होजाते और ब्रह्मानन्द में मग्न हो जाते सो नहीं देखते। भाव जाने विना निर्गुण ब्रह्म प्रकट नहीं होते हैं, और बिना प्रकट भये दुःख जाना कठिन है दूसरे जानने का उपाय भी नहीं है सो उपाय आगे कहते हैं॥ ७॥

नाम निरूप न नाम जतन तें। सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें॥

अर्थ—हेशिष्य, अब उस पूर्वोक्त अगम ब्रह्म को सुगम दिखाते हैं। श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि जिस षडैश्वर्य्य युक्त निर्गुण ब्रह्म के हृदय में रहते हुये भी सब जीव दीन और दुखी हो रहे हैं विना जाने सो भी निर्गुणब्रह्म रामनाम के निरूपण नाम अर्थ के प्रतिपादन करने से और रामनाम के यतन यानी यत्न नाम युक्ति करने से प्रगटत नाम प्रगट हो जाते हैं सोउ कहने का भाव यह है कि जो निर्गुण कोई उपायसे नहीं प्रकट हो सकते हैं ऐसे अगम हैं सोउ रामनाम के अर्थ प्रतिपादन करने से और यत्न नाम उपाय करनेसे प्रत्यक्ष होजाते हैं जैसे निरूपण और यतन करने से रतन का मोल नाम कीमत प्रगट होती है। (प्रश्न) हेस्वामी जी, नाम निरूपण क्या है और यत्न क्या है सो कहिये

(उत्तर) हेशिष्य, नामका निरूपण यह है कि रामनाम का अर्थ क्या है और कौन २ की स्थिति नाम में है तहां रामनाम में निर्गुण और सगुण दूनों ब्रह्म हैं और दूनों के प्रबोधक रामनाम हैं जैसे कि राम कहने ही मात्र से राजा दशरथ जी के पुत्र सगुण ब्रह्म का अर्थ और (रमुक्रीडायाम्) धातु से अर्थ करे तो सब में रमे उस को राम कहतेहैं, अथवा सब जिसमें रमे उसको राम कहते हैं अथवा (रमन्ते योगिनोन्ते) इत्यादि श्रुति से अर्थ करने से बड़े २ ज्ञानी योगी लोग जिसमें रमण करतेहैं उसको परब्रह्म राम कहते हैं इससे निर्गुण ब्रह्म का अर्थ प्रबोध हो जाता है। इसीसे पूर्वमें (उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी) कहा और दोऊ के बीच में सुसाखी कहा। हेशिष्य, गोस्वामी जी के कहने का अभिप्राय यह है कि यह रामनाम का जो निरूपण नाम अर्थ प्रतिपादन है सो बिना नामके यतन नाम उपाय किये नहीं होता है काहेसे कि और जितने ज्ञान वैराग्यादि साधन हैं सो सब कुसाषी हैं और यथार्थ दुभाषी नहीं हैं और रामनाम जो हैं सो निर्गुण सगुण के बीचमें चतुर दुभाषी हैं और सुसाषी हैं। पुनः—दूनोंके प्रकाशक मणिदीप हैं। इससे नामविना नामार्थ का बोधहोना दुर्लभ है जब कुछकाल रामनाम को जपैगा विचारैगा तब नामार्थ निर्गुण सगुण का स्वरूप जान परेगा विना नाम के नहीं। जैसे रत्न का निरूपण यानी मोल रत्न हो के उपाय से होता है। भाव जब कुछ काल रत्नका खरीद विक्रयादि करे तब आप ही रत्नमोल जान पड़ता है कि अमुक रत्न इतने कीमत का है काहे से रत्नका मूल्य रत्न ही में है उसीसे प्रगट होता है तैसेही रामनाम का निरूपण नामहो से होगा जब कुछ दिन विचारपूर्वक जपे तब आपही नामका निरूपण जो निर्गुण ब्रह्म है सोऊ प्रगटत काहेसे कि निर्गुण ब्रह्म नाम ही में हैं। भाव वहां रत्नके पारखी से रत्नके प्रथम पहिचान करके व्यापार करना। इहांपर संत गुरु द्वारा रामनाम का प्रथम पहिचान होना। (प्रश्न) हेस्वामीजी, रामनाम का पहिचान क्या है। (उत्तर) हेशिष्य, इसपर एक दृष्टांत है सो सुनो। एक शिष्य रहे सो अपने गुरुसे निवेदन किया कि हेस्वामीजी, रामनामका माहात्म्य बड़ा भारी है ऐसा वे दशास्त्र कहते हैं फिर सब छोड़कर के सब कोई क्यों नहीं जपतेहैं सो कारण क्या है और कोई २ सब छोड़ करके केवल नामही जपते हैं सो क्यों कहिये तब गुरुने शिष्य को एक पारसमणि

दिया और कहा किसी को देना नहीं केवल परीक्षा लेते जाना प्रथम शाक बेचने वाली के पास जाउ शाक ले आउ शिष्य गया उनसे कहा वह बोली पत्थर लेकर क्या करें मेरे काम का नहीं है । शिष्य आकर के गुरूसे बोला गुरु जीने फिर एक सेठजी के बास भेज दिया सेठजी को दिखाया सेठजी को कुछ पहचान रहा सेठ बोले दश सहस्र रुपैया हम देगें । शिष्य गुरूसे बोला गुरूजी ने भारी सौदागर के पास भेज दिया उन्होंने एक लक्ष रुपैया कहा दूसरे ने एक कोटि मोल किया तीसरे ने पद्म कहा अर्थात् इसी प्रकार से अर्व खर्व तक होगया पीछे एकने कहा कि इसका मोल नहीं है शिष्यने सब हाल गुरू से कहा गुरू बोले कि हे शिष्य, ऐसेही रामनाम है जिनके समझ में जैसा है उनके समझ में तैसे हो है । हे शिष्य, ऐसे ही रामनामका पहिचान होना चाहिये तिसके पीछे उपाय नाम जप करना वहां रत्नका व्यापार करते २ कुछ काल में रत्नका पहिचान होने का बोध होना इहां पर नाम जपते २ कुछ दिनमें नामार्थ का बोध होना वहां बोध होने से रत्नका मोल करना उससे द्रव्य प्रकट होना इहां नामार्थ के बोध होनेसे निर्गुण ब्रह्म जो मोल के समान रामनाम में स्थित हैं सोऊ हृदय में प्रकट होजाते हैं भाव विना रामनाम के जपे नामार्थ निर्गुण सुगम नहीं होसकते हैं और रामनामकी कृपा से शीघ्र ही सुगम होजाते हैं इससे रामनाम सर्वोपरि है ॥ ८ ॥ यथाप्रमाण—

रामनाम परा वेदा रामनाम परा गतिः ।
रामनाम परा यज्ञा रामनाम परा क्रियाः ॥ २५६ ॥
रामनाम सदाऽनन्दो रामनाम सदा गतिः ।
रामनाम सदा तुष्टो रामनाम सदाऽमलः ॥ २५७ ॥
रामनाम परं ज्ञानं रामनाम परो रसः ।
रामनाम परो मंत्रो रामनाम परो जपः ॥ २५८ ॥
रामनाम परं ध्यानं सदा सर्वत्र पूर्णकम् ।
रामनाम सदा सेव्यमीश्वराणां मम प्रिये ॥ २५९ ॥
रकारादीनि नामानि शृण्वतो मम पार्वति ।

मनः प्रसन्नतामेति रामनामाभिशंकया ॥ २६० ॥

अर्थ—रुद्रयामल में शिवजी ने कहा कि रामनाम परवेद है रामनाम ही परमगति है रामनाम ही पर यज्ञ हैं रामनाम ही परक्रिया कर्म है रामही सदा आनन्दस्वरूप हैं रामनाम ही सदा गति है रामनाम ही सदा संतोष है रामनाम ही सदानिर्मल है रामनाम ही परम ज्ञान है रामनाम ही परमरस है रामनाम ही परम मन्त्र है रामनाम ही परम जप है रामनाम ही परम ध्यान है रामनाम ही सर्वत्र चराचर में परिपूर्ण है। हे प्रिये पार्वति, रामनाम ही सब ईश्वरों करके सेवित है जो कोई आदि अक्षर रकार प्रथम कहते हैं सो सुनके हे प्रिये, मेरे मन में यह संदेह हो जाता है कि हमारे प्रभु के नामलेगा ऐसा नामका अपूर्व माहात्म्य है इससे नाम सर्वोपरि है।

दोहा—निरगुनते एहि भांति बड, नाम प्रभाउ अपार ।
कहउँ नाम बड़ रामतें, निज विचार अनुसार ॥

अर्थ—हे शिष्य श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि निर्गुण ब्रह्म ते रामनाम एहि भांति नाम इसी प्रकार से बड़ा है भाव और भांति बड़ा नहीं है केवल प्रगट करा देना यही एक सौलभ्यता गुण करके नाम बड़ा है इससे एहि भांति कहा काहे से कि और सब भांति से दूनों बराबर हैं इससे यह दिखाया कि जो निर्गुण ब्रह्म सब प्रकार से अगम हैं सो भी रामनाम के प्रति पादन और यत्न से प्रगट हो जाते हैं ताते जान परता है कि निर्गुण ब्रह्म को रामनाम ने अपने वश में करलिया है काहे से कि नाम का प्रभाउ जो प्रताप है सो अपार है अपार नाम जिसका पार किनारा नहीं है श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि निज नाम अपने विचार के अनुसार नाम रीति से सगुण ब्रह्म जो श्रीरामजी हैं तिनतें रामनाम को बड़ा कहउँ नाम कहता हूँ। (प्रश्न) हे स्वामी जी श्रीराम जी से भी रामनाम बड़ा है ऐसा कहां लेख है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, एक समय में श्री हनुमान् जी ने श्री रामजी से कहा कि—

राम त्वत्तोऽधिकं नाम इति मे निश्चला मतिः ।
त्वया तु तारिताऽयोध्या नाम्ना तु भुवनत्रयम् ॥२६१॥

अर्थ—हनुमत्संहिता में हनुमान् जी बोले कि हे श्रीरामजी, आप से आपका नाम अधिक है ऐसी हमारी मति अचल है काहे से कि आपने तो

केवल अयोध्यावासी ही को तारे हैं और रामनाम तो तीनों लोक को उद्धार किया है सो सुनकर श्रीरामजी बोले कि ऐसे ही है। हे शिष्य, रामनाम विशेष न होता तो ऐसा क्यों कहते अब यहां से दो दोहा पर्यन्त गोस्वामीजी सगुण ब्रह्म श्रीरामजी से रामनाम को बड़ा कहते हैं आगे इसी प्रकार के सीतानाम का प्रभाव अपार जानना चाहिये काहे से युगल स्वरूप तत्त्व करके एक ही हैं ॥ ५ ॥

राम भगतहित नरतनुधारी। सहि संकट किये साधु सुखारी॥

अर्थ—हे शिष्य गोस्वामीजी कहते हैं कि सगुण ब्रह्म जो सर्वोपरि साकेतविहारी श्रीरामजी हैं सो तो भक्त के हित यानी रक्षार्थ नर नाम मनुष्य के तनु नाम शरीरधारी नाम धारण किया और नाना प्रकार के संकटनाम दुःख को सहिकरके तब साधुन को सुखी किये (प्रश्न) हे स्वामीजी इहांपर पर गोस्वामीजीने नरतनु और भक्त के हित क्यों कहा सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य नरतन कहने का भाव यह है कि परमात्मा परब्रह्मका स्वरूप नर ही का है। यथा—(नरतीतिनरः प्रोक्तः परमात्मा सनातनः) अर्थात् (नरतिव्याप्नोति नरः) भाव नृनये धातु से नर शब्द बनता है इससे सबको प्रेरणाकरे उसको नर कहते हैं सो नराकार परब्रह्म रामही हैं दूसरा नहीं इस प्रसंग को देखना हो तो वाल्मीकीय रामायण के प्रथमसर्ग में नारद वाल्मीकीजी के प्रश्नोत्तर देखलेना नहीं तो विस्तार से (उपासनात्रय सिद्धान्त अथवा विश्वंभर उपनिषद् रहस्यत्रय) में कहा है इहां विशेष कहने से ग्रन्थ विस्तार हो जायगा इससे नरतनु कहा। भाव जो स्वरूप भोगस्थान श्रीसाकेतलोकमें है सोई स्वरूप लीलास्थाने श्रीअयोध्याजीमें प्रकट भये हैं। यथा—राम अनादि अवधपति सोई॥ पुनः श्रुतिः—स एव कार्यकारणयोः परः परमपुरुषो रामो दाशरथिर्बभूव ॥ इत्यादि—कहा है इससे नरतनु कहा और दूसरा भक्त हित कहा इसका भाव यह है कि अवतार तो सबके हितार्थ भया है परंतु दासके वास्ते विशेष भया है काहे से कि भक्त विशेष करके प्रिय हैं। यथा उपासकानां कार्य्यार्थं ब्रह्मणोरूपकल्पना ॥ इति श्रुतिः ॥ अर्थात् उपासकों के कार्यार्थ अर्थात् रक्षार्थ परब्रह्म अपने रूपको कल्पना याने धारण करते हैं यह श्रुति अथर्वणवेदोक्त रामतापनीयोपनिषद् की है॥ पुनः—परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतामिति गीतायाम् साधुन के रक्षार्थ॥ पुनः—एक अनीह

अरूप अनामा। अज सच्चिदानंद परधामा॥ व्यापक विश्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत नाना॥ सो केवल भगतन हितलागी। परम कृपालु प्रनत अनुरागी॥ इति केवल भक्त हितलागी। पुनः—अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥ इति पुनः—जब जब होइ धरम कै हानी। बाढहिं असुर अधम अभिमानी॥ करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं विप्रधेनु सुर धरनी॥ तब तब प्रभु धरि विविधशरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

दोहा—असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राषहिं निज श्रुतिसेतु।
जग विस्तारहिं विमल जस, राम जनम कर हेतु॥

सो जसगाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं॥ इति जन हित तनु धरहीं। पुनः—अगुन अलेप अमान एक रस। राम सगुन भये भगत प्रेमबस॥ पुनः—सहे सुरन्ह बहु काल विषादा। नरहरि प्रगट किये प्रहलादा इति॥ नृसिंहजी भक्त प्रहलाद करके प्रगट भये। पुनः—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत विमल मन पर ध्यावहीं। कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं॥ सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति माया धनी। अवतरेउ अपने भगतहित निज तंत्र नित रघुकुलमनी इति॥ अपने भक्त हित तरेउ। पुनः तुह्म सारिखे संत प्रिय मोरे। धरौं देह नहिं आन निहोरे॥ पुनः—भक्त हेतु भगवान प्रभु, राम धरेउ तनु भूप इत्यादि—बहुत कहा है। इससे हे शिष्य, भगवत् का अवतार केवल भक्तही के वास्ते होता है यह बात सर्वत्र शास्त्र में पूसिद्ध है। इससे "भक्त हित नरतनु धारी" कहा। नरतन कहने का दूसरा भाव यह है कि नरशरीर बहुत उत्तम है इससे पृभुको नरदेह बहुत पूिय है। यथा (आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम्) इत्यादि बाल्मीकीय में भी पूसिद्ध है इससे नरतनु कहा। ताते नरदेह पाय करके ईश्वर भजन करनाही सार है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, सहि संकट क्यों कहा और संकष्ट क्या सहे सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, संकष्ट यह सहे कि नाना प्रकार के दण्डक वनादि में पैदल चलना, कंद मूलादि को खाना, पृथ्वी पर शयन करना, वल्कला दिवस्त्रों को धारण, करना धूप वायु वर्षादि को सहना। यथा—अजिन वसन फल अशन महिशयन डासि कुसपात। बसि तरुतर नितसहत

तुल हिमतप बरषा बात ॥ इत्यादि दुःख को सहिके तब साधुन को सुखी किये। भाव आप प्रथम दुःखी भये तब साधुन को सुखी किये इससे सहि संकट कहा दूसरा सहि संकष्ट का भाव यह है कि जब पर ब्रह्म श्रीरामहीं जी ने मनुष्यदेह धारण करके दुःख सहे तो दूसरे की क्या कथा है। इससे संसार में शरीर धारण करने वाले को सुख नहीं है एक न एक दुःख बना रहता है ताते नरदेह पा करके भगवत् भजन करनाही सुख का मूल है यह उपदेश भया। हे शिष्य, अब इहां से लेकर दोनों दोहा पर्यंत सहि संकष्ट जानना काहे से कि श्रीरामजी ने जो कार्य किये हैं सो सब संकष्ट सहिके किये हैं सो बीच २ में थोरा कहते जायँगे ॥ १ ॥

नाम स प्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुदमंगल वासा॥

अर्थ—और रामनामको स प्रेम नाम प्रेम के सहित जपत नाम जपते ही मात्र में अनायास नाम विना परिश्रम ही भाव रामनाम को कुछ भी क्लेश नहीं और भक्त जो दास हैं सो दुःख से रहित होकर मुद नाम आनन्दमंगल के वास। नाम निवासस्थान होहिं नाम होजाते हैं। भाव जितने ज्ञान वैराग्य शान्ति क्षमा दया सौशील्यादि आनन्दमंगल हैं सो सब तिनके हृदय में आकर के बास करते हैं। (प्रश्न) हे स्वामी जो, अनायास क्यों कहा। (उत्तर) हेशिष्य, अनायास इससे कहा कि रामजीं ने तो। सकल मुनिन्ह, के आश्रमन्हि,जाइ जाइ सुख दीन्ह , इत्यादि पूर्वोक्त संकष्ट को सहि करकेसाधुन को सुखी किये हैं और रामनाम तो बिना परिश्रम ही भाव न आये नगये केवल जप मात्रमें ही भक्तों को आनन्द मंगल के स्थान कर देते हैं इसी से रामजी से नाम बड़ा है। हेशिष्य, अब इहां से लेकर के दोनों दोहापर्य्यन्त रामनाम को विना श्रमही जानना काहे से कि रामनाम ने विना परिश्रमही सबका उद्धार किया है इसी से पूर्व में एक २ चौपाई में नाम और नामी की व्यवस्था गोस्वामीजी ने कही और अब आगे यह दिखाते हैं कि रामजी ने संकट को सहकर के किनको २ सुखारी किये हैं और रामनामने बिना परिश्रमही किनको२ सुखी किये हैं तिनमें एक अनेक एक अनेक करके दिखाते हैं कि नाम नामीं से बड़ा है॥ २ ॥

दुख हिमतप बरषा बात॥ इत्यादि दुःख को सहिके तब साधुन को सुखी किये। भाव आप प्रथम दुःखी भये तब साधुन को सुखी किये इससे सहि संकट कहा दूसरा सहि संकष्ट का भाव यह है कि जब पर ब्रह्म श्रीरामहीं जी ने मनुष्यदेह धारण करके दुःख सहे तो दूसरे की क्या कथा है। इससे संसार में शरीर धारण करने वाले को सुख नहीं है एक न एक दुःख बना रहता है ताते नरदेह पा करके भगवत् भजन करनाही सुख का मूल है यह उपदेश भया। हे शिष्य, अब इहां से लेकर दोनों दोहा पर्यंत सहि संकष्ट जानना काहे से कि श्रीरामजी ने जो कार्य किये हैं सो सब संकष्ट सहिके किये हैं सो बीच २ में थोरा कहते जायँगे॥ १॥

नाम स प्रेम जपत अनयासा। भगत होहिं मुदमंगल वासा॥

अर्थ—और रामनामको स प्रेम नाम प्रेम के सहित जपत नाम जपते ही मात्र में अनायास नाम विना परिश्रम ही भाव रामनाम को कुछ भी क्लेश नहीं और भक्त जो दास हैं सो दुःख से रहित होकर मुद नाम आनन्दमंगल के वासा नाम निवासस्थान होहिं नाम होजाते हैं। भाव जितने ज्ञान वैराग्य शान्ति क्षमा दया सौशील्यादि आनन्दमंगल हैं सो सब तिनके हृदय में आकर के वास करते हैं। (प्रश्न) हे स्वामी जो, अनायास क्यों कहा। (उत्तर) हेशिष्य, अनायास इससे कहा कि रामजीं ने तो। सकल मुनिन्ह, के आश्रमन्हि, जाइ जाइ सुख दीन्ह, इत्यादि पूर्वोक्त संकष्ट को सहि करकेसाधुन को सुखी किये हैं और रामनाम तो बिना परिश्रम ही भाव न आये नगये केवल जप मात्रमें ही भक्तों को आनन्द मंगल के स्थान कर देते हैं इसी से रामजी से नाम बड़ा है। हेशिष्य, अब इहां से लेकर के दोनों दोहापर्य्यन्त रामनाम को विना श्रमही जानना काहे से कि रामनाम ने विना परिश्रमही सबका उद्धार किया है इसी से पूर्व में एक २ चौपाई में नाम और नामी की व्यवस्था गोस्वामीजी ने कही और अब आगे यह दिखाते हैं कि रामजी ने संकट को सहकर के किनको २ सुखारी किये हैं और रामनामने बिना परिश्रमही किनको २ सुखी किये हैं तिनमें एक अनेक एक अनेक करके दिखाते हैं कि नाम नामीं से बड़ा है॥ २॥

राम एक तापसतिय तारी । नाम कोटिषल कुमति सुधारी ३॥

अर्थ—हेशिष्य, श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि रामजीने तो गिनती की एक तापस तिय यानी महातपस्विराज गौतम ऋषीजी की तिय नाम स्त्री जो अहल्या रहीं तिनको तारी अर्थात् पापरूप समुद्र से तारी नाम पार किया, और रामनामने तो कोटि नाम बहुत से खल नाम दुष्टों की कुमति नाम कुत्सित यानी दुष्ट बुद्धि को सुधारी नाम सुधार दिया । भाव कुमति को सुमति कर दिया इहांपर कोटि शतसहस्र इत्यादि को बहुवचन जानना चाहिये। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर गोस्वामीजीने प्रथम तो (ऋषिहित राम सुकेत सुताकी । सहित सेनसुत कीन्ह विवाकी) कहना रहा काहे से कि विश्वामित्र-जीके यज्ञकी रक्षा पूर्व में भई है पीछे अहल्या का उद्धार किया है सो प्रथमही क्यों कहा कृपा करके कहिये । (उत्तर) हे शिष्य, इसका भाव प्रथम यही है कि कहने में उलटा पलटी हो जाती है इस प्रकार से वाल्मीकीयादि रामायणमें कई एक जगह प्रसिद्ध है इससे प्रथम कहा दूसरा प्रथम कहने का कारण यह है कि महातपस्विराज गौतमऋषिकी स्त्री हैं तीसरे ब्रह्माजी की पुत्री हैं चौथे पंचकन्यामें एक आदिकन्या हैं अहल्याजी । इससे मंगल जानि के प्रथम कहा अथवा श्रीरामजी में असंख्यगुण हैं तिनमें दो गुण सबसे विलक्षण एक तो बिना कारण कृपा करना दूसरा दीनबंधुत्व यह दो गुण सूचित करने के वास्ते प्रथम कहा काहे से कि अहल्या के उद्धार में दूनोंगुण प्रसिद्ध हैं। यथा अस प्रभु दीनबंधु हरि कारण रहित दयाल तुलसिदास सठ तेहि भजु छांड़ि कपट जंजाल ॥ इत्यादि कहा है इसीसे इस दोहामें गोस्वामी जी ने अपने को ताड़ना की है इससे प्रथम कहा काहे कि अहल्या का उद्धार परम शिक्षा रूप है । और जैसा श्री रामजी ने अहल्या का उद्धार किया है तैसा किसी का नहीं कारण कि और सब तो शरण में आये हैं और प्रार्थना भी किये हैं तब उद्धार किये हैं दूसरे सब देहधारी हैं और अहल्या तो सब प्रकार दीन पुरुषार्थहीन पाषाण रही न शरण में आई न कुछ प्रार्थना ही किया तिनकी प्रभु ने अपने तरफ से चलके कृपा की है ऐसे प्रभु दयालु हैं इससे प्रथम कहा अथवा प्रतापगुण को जनाने के वास्ते प्रथम कहा काहे से कि अहल्याही का उद्धार सुनकर जनकपुरकी स्त्रीयों को विश्वास हुआ है। यथा-सब असमंजस अहे सयानी । यह सुन अपर कहे मृदुवानी ॥ सखि इन

कहँ कोउ कोउ अस कहहीं। बड़ प्रभाव देषत लघु अहहीं॥ परसि जासुपद पंकज धूरी। तरी अहल्या कृत अघभूरी॥ सोकि रहहि बिनु शिव धनु तोरे। यह प्रतीति परिहरिय न भोरे॥ जेहि विरंचि रचि सीय सँवारी। तेहि स्यामल वरु रचेउ बिचारी॥ तासु बचन सुनि सब हरषानी। इत्यादि कहा है इससे प्रथम कहा अथवा ब्रह्मत्व ऐश्वर्य को दिखाने के वास्ते प्रथम कहा काहे से कि अहल्या के उद्धार में साक्षात् ऐश्वर्य प्रगट हो गया है और ताड़कादि के मारने में बल और बाणविद्या का काम है कुछ ऐश्वर्य विशेष नहीं है इससे नहीं कहा इससे यह दिखाया कि रामजी ने तो गिनती की तापसतिय को तारी इहां तप सतिय कहने का भाव यह है कि वह तो महात्मा की स्त्री रही इससे तरनेही योग्य रही और नामने तो कोटिन दुष्टन की कुमति सुधारदी विना श्रम। [प्रश्न) हे स्वामीजी रामजीको परिश्रम क्या भया सो कहिये [उत्तर] हे शिष्य, एक परिश्रम तो यह भया कि वहां घोर वनमें मुनि के साथ पगसे चलके तारी ब्राह्मणी को चरण छुआया इस बातका पीछे ताप हुआ है॥ यथा विनय पत्रिका शिला साप संताप विगत भई परसत पावन पांव। दई सुगती सो न हेरि हरष हिय चरन छुवे को पछिनाव॥ इत्यादि कहा है॥ ३॥

रिषिहित राम सुकेतसुताकी। सहितसेन सुतकीन्हि विवाकी॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजी ने तो ऋषिजो विश्वामित्र हैं तिनके हित अर्थात् यज्ञके रक्षार्थ सुकेत नाम राक्षसकी सुता नाम पुत्री जो ताड़का रही तिसके सहित सेननाम फौजन के सहित सुतजो रहा मारीच सुबाहु तिनको विवाकी नाम वाकी से रहित कीन्हनाम कर दिये। (प्रश्न) हे स्वामीजी, मारीच तो रहा फिर विवाकी कैसे भया सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य मारीच रहा तो क्या भया विश्वामित्र जी के सिद्धाश्रम से तो विवाकी किया (प्रश्न) हे स्वामीजी ऋषिहित क्यों कहा सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, ऋषिहित कहने का भाव यह है कि स्त्री को मारना शूरवीरों का काम नहीं है शास्त्र में में दोष है इससे ऋषिहित कहा भाव अपने हित नहीं मारा मुनिजी की आज्ञा पाकर के परोपकार पुण्याय) मारा इससे ऋषिहित कहा॥ ४॥

सहितदोषदुषदास दुरासा। दलइनाम जिमि रवि निखिनासा॥

कहँ कोउ कोउ अस कहहीं। बड़ प्रभाव देखत लघु अहहीं॥ परसि जासुपद पंकज धूरी। तरी अहल्या कृत अघभूरी॥ सोकि रहहि बिनु शिव धनु तोरे। यह प्रतीति परिहरिय न भोरे॥ जेहि विरंचि रचि सीय सँवारी। तेहि स्यामल वरु रचेउ विचारी॥ तासु बचन सुनि सब हरषानी। इत्यादि कहा है इससे प्रथम कहा अथवा ब्रह्मत्व ऐश्वर्य को दिखाने के वास्ते प्रथम कहा काहे से कि अहल्या के उद्धार में साक्षात् ऐश्वर्य प्रगट हो गया है और ताड़कादि के मारने में बल और बाणविद्याका काम है कुछ ऐश्वर्य विशेष नहीं है इससे नहीं कहा इससे यह दिखाया कि रामजी ने तो गिनती की तापसतिय को तारी इहां तप सतिय कहने का भाव यह है कि वह तो महात्मा की स्त्री रही इससे तरनेही योग्य रही और नामने तो कोटिन दुष्टन की कुमति सुधारदी विना श्रम। [प्रश्न) हे स्वामीजी रामजीको परिश्रम क्या भया सो कहिये [उत्तर] हे शिष्य, एक परिश्रम तो यह भया कि वहां घोर वनमें मुनि के साथ पगसे चलके तारी ब्राह्मणी को चरण छुआया इस बातका पीछे ताप हुआ है॥ यथा विनय पत्रिका शिला साप संताप विगत भई परसत पावन पांव। दई सुगती सो न हेरि हरष हिय चरन छुवे को पछिताव॥ इत्यादि कहा है॥ ३॥

रिषिहित राम सुकेतसुताकी। सहितसेन सुतकीन्हि विवाकी॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजी ने तो ऋषिजो विश्वामित्र हैं तिनके हित अर्थात् यज्ञके रक्षार्थ सुकेत नाम राक्षसकी सुता नाम पुत्री जो ताडका रही तिसके सहित सेननाम फौजन के सहित सुतजो रहा मारीच सुबाहु तिनको विवाकी नाम बाकी से रहित कीन्हनाम कर दिये। (प्रश्न) हे स्वामीजी, मारीच तो रहा फिर विवाकी कैसे भया सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य मारीच रहा तो क्या भया विश्वामित्र जी के सिद्धाश्रम से तो विवाकी किया (प्रश्न) हे स्वामीजी ऋषिहित क्यों कहा सो कहिये (उत्तर) हे शिष्य, ऋषिहित कहने का भाव यह है कि स्त्री को मारना शूरवीरों का काम नहीं है शास्त्र में दोष है इससे ऋषिहित कहा भाव अपने हित नहीं मारा मुनिजी की आज्ञा पाकर के परोपकार पुण्याय) मारा इससे ऋषिहित कहा॥ ४॥

सहितदोषदुखदास दुरासा। दलइनाम जिमि रवि निसिनासा॥

अर्थ—हेशिष्य, वहां सुकेत राक्षसकी पुत्री ताड़का रही इहां मन करके उत्पन्न दुरासा नाम दुर्वासना वहां पर ताड़का के पुत्र मारीच सुबाहु इहां पर दुर्वासना करके दोष और दुःख वहां पर विश्वामित्रजी के हितार्थ श्रीराम जीने विवाकी किये इहां पर दासन के हितार्थ श्रीरामनाम दलइ नाम नाश कर देते हैं कैसे नाश कर देते हैं कि जिमि नाम जिस प्रकार से रवि नाम सूर्य भगवान् दोष और दुःखों के सहित निशि जो रात्रि है तिसको नाश कर देते हैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, दोष और दुःख तथा दुर्वासना क्या है सो विस्तार पूर्वक कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, दोष त्रिताप हैं यानी दैहिक देह करके उत्पन्न फोडादिक और दैविक दैव करके उत्पन्न रोग वृक्षादि से गिर परना और भौतिक किसी जीव करके क्लेश यानी शस्त्रादिक से घात होना यही तीनों तो त्रिदोष हैं। यथा (त्रिविधि दोष दुख दारिद दावा) इत्यादि कहा है इससे त्रिताप ही को इहां दोष जानना और दुःख कामक्रोध लोभादि हैं काहे से कि जिन करके नाना प्रकार के मनोरथ होना और प्राप्ति न होने से दुःख होना इति दोष दुःख और दुर्वासना अर्थात् बुरी वस्तु की चाहना तिनके सहित दास हो परन्तु रामनाम सबको नाश करते हैं जैसे सूर्य दोष दुःख के सहित रात्रिको नाश कर देते हैं। यथा—(उघरहिं विमल विलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के॥ इत्यादि कहा है। भाव वहां पर रात्रि है इहां पर दुर्वासना सोई रात्रि है वहां पर दुष्टरात्रि का दोष अर्थात् मलमूत्रादि भ्रष्ट बस्तु का स्पर्श होना इति दोष इहां पर त्रिताप यही दोष है वहां पर रात्रि का दुःख अर्थात् सर्प बृश्चिक चोर कएट ऊँच नीच इत्यादि की जिन करके दुःख होना सोई तो दुःख है इहां पर काम क्रोध लोभादि षड्विकार सोई रात्रिका दुःख है वहां पर सूर्य सब लोकों के हितार्थ नाश कर देते हैं इहां पर दासन के हितार्थ दुर्वासनारूपी रात्रि को दोष दुःख के सहित राम नाम नाश कर देते हैं इससे यह दिखाया कि रामजीने तो परिश्रम से रणभूमि में सबको मारि के तब एक विश्वामित्रजो को सुखी किये और रामनाम तो विनाश्रम ही सब दासन को सुखी कर देते हैं इससे नाम रामजी से बड़ा है॥ ५॥

भंजेउ राम आपु भवचापू। भवभयभंजन नाम प्रतापू॥६॥

अर्थ—पुनः—श्रीरामजीने तो स्वयं आप भाव जो श्रीशिवजी हैं तिनके जो चाप नाम धनुष है सो भंजेउ नाम तोड़ेउ। हे शिष्य, इहांपर आप कहने का भाव यह है कि कोई उपाय से नहीं तोड़ा स्वयं आप अपने हस्तकमलसे तोड़ा इससे आप कहा और भव जो संसार है तिनके जो भय है जन्ममरण सो केवल नाम के प्रताप से भंजन नाम टूट जाते हैं इहाँपर परिश्रम यह है कि मुनि के संग २ पैदल चलना कंद मूलादि खाना पृथ्वीपर सोना तब जनकपुर आकर के अपने करकमल से कमठपृष्ठसम महाकठोर शिव धनुष तोड़ना सब परिश्रम ही जानना और रामनाम विना श्रमही जन्ममरण से रहित कर देते हैं॥ ६॥

दंडकवनुप्रभुकीन्हसुहावन। जनमनअमितनामकियेपावन॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजीने तो एक दण्डकवनको सुहावन नाम पवित्र किये काहेसे कि प्रभु नाम समर्थ हैं। यथा (अकर्तुमपि कर्तुं समर्थः) भाव जो नहीं करने योग्य है उसको जो करने को समर्थ हों उसको प्रभु कहते हैं यह श्रुति है और सुहावन का अर्थ इहां पवित्रही जानना चाहिये काहे से कि इहां पवित्रहीका प्रयोजन है सो आगे इसी चौपाई में पावन पद कहा है और भी रामायण में सर्वत्र कहा है। यथा (दंडकवन पुनीत प्रभु करहू। उग्र साप मुनिवर कर हरहू। पुनः-जेपद परसितरी ऋषिनारी। दंडक कानन पावनहारी॥ पुनः-कहि दंडकवन पावन ताई) इत्यादि बहुत कहा है इससे पवित्रही जानना चाहिए और रामनाम ने तो अमित नाम बहुत से जन जो दास हैं तिनके मन जो है वनरूप विस्तार तिनको पावन नाम पवित्र किया। भाव मनकी जो दुर्वासना रही तिनको नाश करके निर्मल कर दिए। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां पर सब छोड़ करके मनही क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, मन कहने का भाव यह है कि मन जो है सोई सबका कारण है। यथा [मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः] अर्थात् मनही मनुष्यों को बंधन और मोक्ष का कारण है इससे मन कहा और वासना से रहित होना सोई मनकी पवित्रता है विना वासना से रहित हुए संसार छूटना कठिन है। यथा (नहिं मुक्ति आकाश नहिं मुक्ति पाताल। जब मनकी मनसा मिटै तबहीं मुक्ति विशाल) इत्यादि कबीरजी ने भी कहा है इससे मनही सबका कारण है इससे मन कहा। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर गोस्वामीजी ने अयोध्याकाण्ड को छोड़कर आरण्यकाण्ड

क्यों कहा सो कृपा करके कहिए। (उत्तर) हे शिष्य, इसका मुख्य हेतु तो यह है कि श्रीगोस्वामीजी श्रीरामजीके मुख्य २ चरित्र को कहते हैं कि जिसमें रामजीका प्रताप ऐश्वर्य दर्शा हो और दासन का भी उद्धार भयाहो जैसा कि अहल्याका उद्धार किया पुनः-विश्वामित्रजी के यज्ञ रक्षार्थ राक्षस मारे शिव धनुष तोड़कर सबको सुखी किए। पुनः--दंडकवन शुक्राचार्यजीके शाप से नष्टभ्रष्ट होगया रहा तिनको प्रभुने पावन किया। हे शिष्य, देखो जैसे इन सब कार्यों में श्रीरामजीका ब्रह्मत्व ऐश्वर्य प्रगट भया है तैसा अयोध्याकाण्डमें कहीं नहीं प्रगट भया है और सबको दुःखही भया है इससे अयोध्याकाण्ड नहीं कहा जो कहो कि निषादराज को तो कहना रहा काहे से कि रामजीने गुहको अपनाया है दूसरे आगे शबरी गृध्रराजको सुग्रीव बिभीषण आदिको कहा है इससे निषादराज को अवश्य कहना रहा तो इसका भाव यह है कि शबरीको और गृध्रराज को तो भी उसी समयमें गति देदीहै इससे कहा और सुग्रीव बिभीषण को तो दुखी जानि के अपनाया है इससे कहाहै और निषादराज को तो सामान्यरीति से अपनाए हैं कुछ दुखी जानिके नहीं इससे नहीं कहा अथवा अयोध्याकाण्ड में मुख्य भरतचरित्र है रामचरित्र सामान्य हैं। यथा--पूरन भरत प्रीति मैं गाई। मति अनुरूप अनूप सुहाई॥ अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे वन सुरनर मुनि भावन॥ इत्यादि वचन से आरण्यकाण्ड में प्रभु चरित्र है और अयोध्याकाण्ड में अवधपुरवासी के और भरतजी के चरित्र है इससे नहीं कहा॥ ७॥

निसिचर निकर दले रघुनन्दन। नाम सकल कलिकलुषनिकंदन

अर्थ--पुनः श्रीरघुनन्दन रामजीने तो जन स्थान के वासी निसिचर निकर नाम समूह अर्थात् खरदूषणादि लेकरके चौदह सहस्र राक्षसों को दले नाम नाश कर दिए काहे से कि बड़े धर्मात्मा रघुराजाके समान आनंद देनेवाले हैं भाव जैसे धर्मात्मा रघुराजा रहे परोपकारी तैसेही रामजीने भी ऋषियों के उपकारार्थ दुष्टों को मारा और रामनामने तो सकल नाम संपूर्ण कलियुग के कलुष नाम पाप अथवा कलिनाम कलह को निकंदन नाम निर्मूल कर दिये भाव रामजीने तो संग्राममें परिश्रम करके युद्धमें मारे और सब ऋषियों को सुखी किया और रामनाम ने तो बिना परिश्रमही सब पापोंको निर्मूल करके सब दासको सुखी कर दिये इससे रामजी से नाम विशेष है॥ ८॥

दो०—सबरी गीध सुसेवकन्हि, सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित षल, वेदविदित गुनगाथ॥ ६॥

अर्थ—पुनः श्रीराम रघुनाथजी ने तो शवरी और गृध्रराज जटायुको सुगति नाम सुन्दर गति अर्थात् परमपद दीन्हि नाम दीही न का हे दीन्हि कि सुसेवकन्हि रही इससे देने योग्य ही रही यथा (तनु तजि तात जाहु मम धामा) पुनः—गीध अधम खग आमिष भोगी। गति दीन्ही जो जांचत जोगी इति। पुनः—शवरीको यथा। तजि योग पावक देह हरिपद लीन भइ जहँ नहिं फिरे इत्यादि। पुनः—जाति हीन अघ जन्म महि मुकुति कीन्ह अस नारि इत्यादि दूनों को सुगति दीन्हि और रामनाम ने तो अमित नाम बहुत से खल जो दुष्ट हैं तिनको उधारे नाम उद्धार किये सो यह नाम गुणकीजो गाथ यानी नाम यश है सो वेदमें विदित नाम प्रसिद्ध है। (प्रश्न हे स्वामीजी, इहां पर प्रथम शवरीको कहा पीछे गृध्रराज को सो क्यों कहा काहे से प्रथम तो गीधको सुगति दिये हैं पाछे शवरी को इससे प्रथम गीधही को कहना रहा सो नहीं कहा क्या कारण है। (उत्तर) हे शिष्य, इसका आशय यह है कि शवरी महाराज को बहुत ही प्रिय है। यथा सकल प्रकार भगति दृढ तोरे) इत्यादि नवधा भक्ति करके युक्त रही इससे प्रिय रही सोई महर्षिजी का कथन है। यथा (शवर्या पूजितः सम्यक्) इत्यादि प्रेमरूपी भक्ति करके सब प्रकार से पूजन किया ऐसा और ऋषि मुनि को नहीं कहा इससे प्रथम कहा दूसरे इस दोहा में भी सुसेवकन्हि शब्द करके शवरी ही सिद्ध है काहे से कि सुसेवकन्हि स्त्री वाचक हैं इससे अतिप्रिय जानि के प्रथम कहा इससे यह दिखाया कि रामजी ने तो महाकठिन वनमें चलके सुगति दी और रामनाम ने तो विना श्रमही कोटिन दुष्टों को उद्धार कर दिये हैं इससे नाम विशेष है॥ ६॥

राम सुकंठ विभीषन दोऊ। राषे सरन जान सब कोऊ॥११॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजीने तो सुकंठ जो सुग्रीवजी हैं और विभीषणजी इन दूनों को शरण में राखे सो यह बात सब कोई जानते हैं कि श्रीरामजी बड़े शरणागतवत्सल हैं और दीनबन्धु हैं काहे से कि जिन सुग्रीव को बाली के

भयके मारे कहीं ठिकाना नहीं रहा यथा (ताके भय रघुवीर कृपाला ॥ सकल भुवन मैं फिरेउँ विहाला) इत्यादि स्वयं आप कहा है सो सुग्रीव को रामजीने शरण में राखे और अखण्ड राज दे दिया ऐसे दयालु हैं । यथा (वालित्रास ब्याकुल दिन राती । तन बहु व्रन चिन्ता जर छाती ॥ सोइ सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ । अति कृपालु रघुबीर सुभाऊ इत्यादि—शरण में राखे सो सब कोऊ जानते हैं । पुनः—विभीषण को यथा (रावन क्रोधअनल निज, स्वास समीर प्रचंड । जरत विभीषन राखेउ दीन्हों राज अखंड ॥ जो संपति सिव रावनहिं, दीन्ह दिये दसमाथ । सोइ संपदा विभीषनहिं सकुचि दीन्ह रघुनाथ इत्यादि-शरण में राखे सो सब जानते हैं भाव छिपा नहीं है ॥१॥

नाम गरीब अनेक निवाजे । लोक वेदवर विरद विराजे ॥

अर्थ—और शरण में राखे हैं सो यह बात लोक में और वेद में वरनाम श्रेष्ठ विरद नाम वाना विराजे नाम विशेष राजे नाम शोभित होरही है भाव रामनाम बड़े ग़रीबनिवाज हैं यह सर्वत्र प्रसिद्ध होरहा है इहां पर लोक वेद कहने से दूनों परस्पर है काहे से कि लोक विना बेद सिद्ध नहीं है वेद बिना लोक सिद्ध नहीं है इस से दूनों कहा इससे यह दिखाया कि रामजी ने तो परिश्रम करके राखे और रामनाम ने तो बिना श्रम ही सब गरीबों को राखेहैं । इससे नाम विशेष है ॥ २ ॥

राम भालु कपि कटक बटोरे । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरे ॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजी ने तो भालु और कपि नाम वानरों के कटक नाम सेना बटोरे अर्थात् १८ पद्म यूथप सेना एकत्र किये और समुद्र में सेतु बाँधने के वास्ते थोरे श्रम नहीं किये भाव भारी परिश्रम किये तब ५ पांच दिन में सौ योजन विस्तार लंबा और दशयोजन चौडा सेतु बांधे तब सब कटक पार भये ॥ ३ ॥

नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं । करहु विचार सुजन मनमाहीं ॥

अर्थ—और रामनाम को तो लेतेही मात्र में भवसिंधु अर्थात् संसार रूप समुद्र सुखजाते हैं इस बात को सुजनजन अर्थात् तत्त्ववेत्ता जो जन हैं सो अपने मनमें विचार करहु कि रामनाम के लेने से जन्म मरण छूटजाता है कि

नहीं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहां सुजन जन क्यों कहा। [उत्तर] हे शिष्य, सुजन जन इससे कहा कि वे तत्वज्ञ होते हैं सब शास्त्रको भली प्रकार से देखे हैं इससे कहा और दुष्टजन जो है मूर्ख सो क्या जाने वह तो दुर्मदान्ध हो रहा है। यथा (अबुधा नैव जानन्ति नाममाहात्म्यमुत्तमम्) इत्यादि कहा है इससे यह दिखाया कि रामजी ने तो बहुत परिश्रम किये तब शतयोजन के समुद्र में सेतु बांधे कुछ सुखाये नहीं और राम नाम को तो लेतही मात्र में महादुस्तर संसार रूप समुद्र कि जिसमें चौरासीलक्ष योनि में वर्ष प्रमाण से भ्रमण करना यही अगाधजल भरा है और कामक्रोध लोभादि मगर हैं सो सूख जाते हैं विना श्रमही भाव जन्म मरणसे रहित होना सोई इहाँ सूखना है इससे नाम विशेष है ॥ ४ ॥

रामसकुल रन रावन मारा। सीय सहित निजपुर पगुधारा ॥

अर्थ—पुनः श्रीरामजीने तो कुल के सहित रण में रावण को मारा हे शिष्य रण में कहने का भाव यह है कि बड़े परिश्रम से कई एक मास में युद्ध करते २ तब मारा कुछ सहज ही में नहीं और सीय जो श्रीजानकीजी हैं तिनके सहित निज नाम अपना पुर जो अयोध्याजी है तहां पगु धारा नाम पधारे। (प्रश्न) हे स्वामी जी, इहां सीयसहित क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, सीय सहित कहने का भाव यह है कि जानकीहीजी के वास्ते रामजीने कुल सहित रावण को मारा दूसरे के वास्ते नहीं न जानकीजी हरीं जाती न रावण मारा जाता इससे सीय सहित कहा ॥ ५ ॥

राजा रामु अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनिवर बानी ६

अर्थ—और अवध राजधानी में श्रीरामजी राजा भये, अथवा सब के राजा रामजी अवध राजधानी के राजा भये। (प्रश्न) हे स्वामी जी, इहाँ अवधराजधानी क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, इसमें शंका करने का क्या प्रयोजन है काहे से कि अयोध्यापुरी तो तीनों लोक में प्रसिद्ध है कि स्वायंभु-मनु को बसाई हुई राजधानी है जहाँ पर एक से एक प्रतापी और धर्मात्मा राजा हो गये हैं तहाँ के राजा राम जी भए और जानकी जी रानी भईं इससे अवध राजधानी कहा। अथवा यह दिखाया कि जिन के रोम २ में कोटि २ ब्रह्माण्ड स्थित हैं सो प्रभु सर्वेश्वर अयोध्याजी के राजा भए और सप्तद्वीप के

स्वामी कहाए ऐसी भगवल्लीला विचित्र है। यथा (भूमि सप्त सागर मेखला एक भूप रघुपति कोसला॥ भुवन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥ सो महिमा समुझत प्रभुकेरी। यह वरनत हीनता घनेरी॥ सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरि यह चरित तिन्हहु रतिमानी॥ सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहिं महामुनिवर दम सोला॥ इत्यादि कहा है। इससे यह दिखाया कि पूर्ण ऐश्वर्य्य के जानने वाले भी मुनि लोग माधुर्य लीला को मानते और वर्णन करते हैं। क्योंकि विना माधुर्य्य लीला को श्रवण किए भक्ति नहीं होती है। यह निश्चय है यथा शिव संहिता याम्।

पूर्णैश्वर्य बुधस्यापि माधुर्य्य श्रवणंबिना।
भक्तिर्नजायते पूर्णा शुष्क ज्ञानंतु निष्फलम्॥

अर्थात् शिव जी कहते हैं कि पूर्ण ऐश्वर्य्य भी माधुर्य्य श्रवण किए बिना पूर्ण भक्ति उत्पन्न नहीं होती है, क्योंकि ऐश्वर्य्य सूखा ज्ञान है बिना भक्ति निष्फल है। इत्यादि कहा है इससे अवधराजधानी कहा। भाव सामान्य राजा की राजधानी में, राजा भए और जिनके विमल गुण को आज पर्य्यन्त सुर जो देवता हैं और मुनि जो मननशील हैं सो सब वर नाम श्रेष्ठ वाणी में अर्थात् देववाणी में गाते हैं भाव जब देवता मुनि लोग गाते हैं तो दूसरे की क्या कथा है इससे सब को गाना चाहिए न गाने वाले को धिक् है॥ ६॥

सेवक सुमिरत नामसप्रीती। बिनुश्रम प्रबल मोह दल जीती॥

अर्थ—श्रीगोस्वामीजो कहते हैं कि सेवक जो दास हैं सो राम नाम को सप्रीती नाम प्रीति के सहित सुमिरत नाम स्मरण करत मात्र में विनु श्रम नाम बिना परिश्रम ही प्रबल यानी प्रकर्ष करके बली जो मोहका दल है कामक्रोधादि जो कि पूर्व में कहि आए हैं तिनको जोता। (प्रश्न) हे स्वामी जो, इहां मोह को प्रधान क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, इसका कारण तो विस्तार से पूर्वही में कह आए कि मोह रावण का अवतार है इसी से इहांपर गोस्वामी जीने रावण के बराबर मोह को कहा दूसरा कारण कुछ नहीं है काहे से कि मोह जो है सोई दुःखका कारण है। यथा—मोह सकल व्याधिन कर मूला इति। पुनः—मोह मूल वहु सूलप्रद त्यागहु तम अभिमान। इति। पुनः—मोह निसासब सोवनिहारा इति। पुनः—पुरुष कुजोगो जिमि उर गारी॥ मोह

बिटप नहिं सकहिं उपारी इति। पुनः—सुनु मुनि मोह होय मन ताके। ज्ञान विराग हृदय नहिं जाके॥ इत्यादि बहुत कहा है। इससे मोह अज्ञानका कारण है और सब दुखोंका मूलहै, इससे मोहको प्रधान कहा। इससे यह दिखाया कि श्रीरामजीनेतो बड़ा परिश्रम करके रणस्थलमें रावणको परिवार सहित मारा और इहांसेवकने प्रेमपूर्वक श्रीरामनाम को स्मरण करके बिना श्रमही मोहरूप रावण जो बड़ा प्रबल है जिनके दशों इंद्रियाँ दशोशिर हैं तिनको संसाररूप रण स्थान में जीतिके॥ ७॥

फिरत सनेह मगन सुष अपनें। नाम प्रसाद सोच नहिं सपनें॥८॥

अर्थ--और अपने स्नेहके सुख में मगन नाम बूड़िके फिरत नाम घूमते हैं और रामनामके प्रसाद नाम कृपानुग्रह से जिनको प्रत्यक्ष तो को कहै स्वप्न में भी कोई प्रकार का शोच नहीं है। भाव रामजीने तो संपूर्ण दुष्टों को मारि के तब अयोध्या राजधानी में बैठकर निष्कंटक राज किये और सब प्रजा व महात्मन को सुखी देखि आप सुखी भए और दास तो रामनाम को प्रीतिपूर्वक जप कर विना श्रमही मोहरूप रावणको सदल जीति के दशों दिशा में निर्द्वन्द्व होकर घूमते हैं। भाव नाम जापक जनको चारों खूट राज है चाहै जहां जावें सर्वत्र आन्द है। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां फिरत क्यों कहा इसका क्या हेतु है? (उत्तर) हेशिष्य, फिरत कहकर यह दिखाया कि नाम जापक संतन को संसार में विचरना ही चाहिए एक स्थान में नहीं रहना चाहिए यदि एक जगह में रहैगा तो अबश्य माया में फंसैगा यानी किसी न किसीसे प्रीति विरोध अवश्य होजावेगा इससे उत्तम सन्त का यही लक्षण है कि विचरना यह वेद शास्त्र का सिद्धांत है और गोस्वामीजी का भी यही सिद्धांत है। यथा (सम मानि निरादर आदरही। सब सन्त सुषी विचरन्त मही) इत्यादि कहा है। पुनः—ये नाम युक्ता विचरन्ति भूमौ। इत्यादि आदिपुराणमें श्रीकृष्णचन्द्रजीने अर्जुनजी से कहा है सो ग्रन्थसमाप्ति में स्तोत्रहि लिख देगें !देख लेना कि रामनाम कैसा सर्वोपरि है इससे फिरत कहा॥ ८॥

दोहा—ब्रह्म राम तें नामबड़, वरदायक बरदानि।
रामचरित सतकोटि महँ, लिय महेस जिय जानि॥५॥

अर्थ—हेशिष्य, श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि इसी प्रकार से ब्रह्म राम तें रामनाम बड़ा है. अथवा ब्रह्म जो पूर्वोक्त निर्गुण हैं और रामजी जो सगुण ब्रह्म हैं तिन दोउन तें रामनाम बड़ा है और वरदायक जो हैं अर्थात् दुसरे को जो वरदान देने वाले हैं (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहांपर वरदायक का भी वरदायक नाम है ऐसा गुप्त क्यों कहा वरदायकन के नाम खोलि के कहते तो क्या होता इस से आप वरदायक के नाम खोलिके कहिए क्योंकि आप सब गुप्त भेद को जानते हैं। [उत्तर] हे शिष्य, वरदायकन के नाम खोलि के इससे नहीं कहा कि मूर्ख लोग विरुद्ध मानेंगे इससे गुप्त कहा तत्त्वज्ञाता जो होंगे सो आपही जान लेंगे इससे वरदायक इहां पर ब्रह्मा विष्णु शिव नारायण परनारायण ज्योतिरूप नारायण क्षीरसमुद्रवासी अष्टभुजी भूमापुरुष शिव सदाशिव महाशिव महाविष्णु ज्योतिरूप विष्णु वासुदेव परवासुदेव गोलोकवासी तथा चौवीसोअवतार देवि दुर्गा गणेश भैरव अर्थात् जो कोई दूसरे को वर देने वाले हैं तिन सबको भी श्रीरामनाम वर देने वाले हैं। भात्र रामनामही को जपि के वरदायक भये हैं इससे रामनाम सर्वोपरि है और सबका सार है। यथा प्रमाण पुलस्त्यसंहितायाम्—

सावित्री ब्रह्मणा सार्द्धं लक्ष्मीर्नारायणेन च।
शंभुना राम रामेति पार्वती जपति स्फुटम्॥ २९२॥
महाशंभुर्महामाया महाविष्णुश्च शक्तयः।
कालेन समनुप्राप्ता राघवं परिचिन्तियन्॥ २९३॥

अर्थ—सावित्रीजी ब्रह्माके सहित लक्ष्मीजी नारायण के सहित शिवजी पार्वती के सहित अतिप्रेम से स्पष्ट रामराम ऐसा जपते हैं और महाशिव, महामाया, महाविष्णु भगवान् और शक्ति देवि दुर्गादि सब समय प्राप्त होकर रामजी को चिंतवन करते हैं इत्यादि बहुत कहा है सो विस्तारपूर्वक पूर्वही में कह आये हैं इससे नाम सर्वोपरि है। हेशिष्य, इहांपर दूसरा अर्थ नहीं जानना काहेसे कि रामनाम के समान कुछ नहीं है इस वचन को पक्षपात छोड़ करके समझो और सब साधन धोखादायी हैं इससे रामनाम जपो यह मेरी शिक्षा सत्य २ करके मानो नहीं तो अन्त में पछताना परेगा। पुनः—जेहि

रामनाम को रामजी के शत नाम सौ कोटि चरित्र में से महेश जो शिवजी हैं यानी महाईश्वर योगिराज बड़े तत्त्व के ज्ञाता सो लिय नाम प्राण जानिके लिय हैं भाव सौ कोटि रामचरित्र में रामनाम ही एक सार है काहे से कि चरित्र धर्म मार्ग का उपदेशक है और नाम ज्ञानमार्ग का उपदेशक है। यथा [धर्ममार्गं चरित्रेण ज्ञानमार्गञ्च नामतः] पुनः [ऋते ज्ञानान्न मुक्तिर्नान्यः पन्था विद्यते-] इत्यादि श्रुतिप्रमाण है इससे सौ कोटि रामायण का प्राणनाम है। (प्रश्न) हे स्वामी जी, प्राण क्यों कहा। (उत्तर) हे शिष्य, प्राण कहने का भाव यह है कि वेद जो हैं सोई रामायण जी हैं यथा (वेदः प्राचेतसदासीत्साक्षाद्रामायणात्मना। तस्माद्रामायणं देवि वेद एवनसंशयः।) इत्यादि कहा हैं इससे जैसे पूर्व में वेद का प्राण रामनाम को कहाहै। यथा (विधि हरिहरमय वेद प्रान सो) इत्यादि कहा तैसेही इहाँ प्राण कहा भाव सबका सार एक नामही है यह गोस्वामीजी का सिद्धांत है। हे शिष्य, इस बात को ठीक ठीक अपने मन में विचार करो कि कहां सौ कोटि चरित्र कहों दो अक्षर रामनाम इसी से रामायण के अन्त में कहा हैं कि (सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उरधरै) सो यही रामनाम की बन्दना वाली नवौ दोहा की चौपाइयां हैं दूसरी नहीं यह निश्चय करके जानो इस में सन्देह करना अथवा दूसरा अर्थ करना अयोग्य है काहे से कि जब सौ कोटि रामचरित्र के प्राण ही रामनाम है तो दूसरी कौन सी चौपाई सत्यपंच है इससे यही अर्थ सिद्धांत है। हे शिष्य, यह कथा (आदि रामायण में) है जब सौ कोटि रामायण के वास्ते तीनों लोक के देवता ऋषि नागादि एकत्र हुए उस समय में बांटने के वास्ते शिवजी नियत किये गये हैं तब शिवजीने सौ कोटि श्लोक) में ३३ कोटि का भाग दिया बाकी रहा एक कोटि तिसमें भी ३३ लक्ष का भाग दिया बाकी रहा एक लक्ष [श्लोक] तिसमें फिर भी ३३ सहस्र का भाग दिया बाकी रह गया एक सहस्र (श्लोक) तिसमें भी ३ सौ का भाग दिया वाकी रहा सौ (श्लोक) तिसमें भी ३३ (शेलक) का भाग दिया बाकी रहा एक (श्लोक) ३२ अक्षर का अनुष्टुप् छंद तिसमें भी दश अक्षर का भाग दिया बाकी रहा दो अक्षर रामनाम उसी से शिवजी काशी पुरी में सब चराचरों को मोक्ष देते हैं जो श्रुति कहती है कि [काश्यां मरणान्मुक्तिः) सो सत्य है इससे यह दिखाया कि सौ कोटि रामचरित में भी एक राम नामहीं सार है। हे शिष्य, इहां तक तो सगुण ब्रह्म श्रीरामजी से नामबड़ा

कहा अब इहां से आगे दो दोहा पर्य्यन्त नाम माहात्म्य कहते हैं तिसमें चतुर्युगी नाम जापकों के नाम वर्णन करते हैं। इसी प्रकार से श्री सीतानाम को भी जानना ॥ ७ ॥

नाम प्रसाद संभु अविनासी । साज अमंगल मंगलरासी ।।

अर्थ—हे शिष्य, अब पुनः श्रीगोस्वामीजी प्रथम नाम जापकशिवजी को बणन करते हैं कि जिन्होंने सौ कोटि रामचरित्र से सार नाम को ले लिया और एकासन से स्थित होकर के काशी पुरी में सहस्र मन्वंतर रामनाम को जाप किया पीछे रामजीने प्रकट होकर के काशीपुरी में मोक्ष होने के वास्ते अपना महामंत्रराज षडक्षर दिया और अविनाशी पद भी दिया सोई गोस्वामी जी कहते हैं कि रामनामही के प्रसाद नाम कृपानुग्रह से शंभु जो शिवजीहैं सो अविनाशी भये हैं और साज अमंगल हैं अर्थात् सांप विच्छू मुण्डमाल श्मशान का भस्म अस्थि जटादि को धारण किये हैं और हैं कैसे कि मंगल केराशीनाम स्थान हैंभाव जितने ज्ञान वैराग्यादिमंगल हैं सो सब जिन शिवजी में निवास करते हैं। यथा प्रमाण निर्वाणखण्डे शिव उवाच—

भवन्नामामृतं पीत्वा गीत्वा च भवतां यशः ।
शिवोऽहं सर्वदेवैश्च पूजनीयो दयानिधे ॥ २६४ ॥
निराकारञ्च साकारं सगुणं निर्गुणं विभो ।
उभौ विहाय सर्वस्वं तव नाम स्मराम्यहम् ॥ २६५ ॥
मंदात्मानो न जानन्ति बहिरर्थस्पृहायुताः ।
रामनाम परं ब्रह्म सर्ववेदान्तसम्मतम् ॥ २६६ ॥
जगत्प्रभुं परानन्दं कारणं सदसत्परम् ।
रामनाम परेशानं सर्वोपास्य परेश्वरम् ॥ २६७ ॥
सर्वेषां मतसाराणामिदमेकं महन्मतम् ।
जानकीजीवनस्याथ नामसंकीर्त्तनं परम् ॥ २६८ ॥

अर्थ—श्रीरामजी से शिवजी बोले कि हे प्रभु आप के रामनामामृत को पीकर के और आप के यश गाय करके हे दयानिधि मैं देवताओं करके पूजित

भया हूँ हेप्रभु, निराकार निर्गुणको और साकार सगुण दूनोंको छोड़कर सर्वस्व एक आपहीके नाम स्मरण करताहूँ। मंदमतिवाले जोहैं सारअर्थ से वाह्य और नानाप्रकारके विषयबासनासे युक्तसे रामनाम परब्रह्मको नहीं जानतेहैं कि सर्व वेदान्त करके संमत रामनाम है। भाव रामनामहीं परब्रह्महैं ऐसा सब वेद वेदान्त कहते हैं। संपूर्ण संसारके स्वामी परमानन्द के कारण सत्यासत्य से परे रामनाम परईश्वर हैं सब करके उपास्य हैं परब्रह्म हैं यह सब मतन को सार सिद्धांत एक महामत है कि जानकी जीवनका रामनाम कीर्तन सबसे परे है और सब वृथा है॥ १॥

सुकसनकादि सिद्धमुनि जोगी। नामप्रसाद ब्रह्मसुषभोगी॥२॥

अर्थ—पुनः शुक जो श्रीशुकदेव स्वामी परम हंसराज हैं और सनक सनंदन सनातन सनत्कुमार जो चारों भाई परम हंसराज हैं और भी बड़े २ सिद्ध लोग मुनि लोग मननशीलवाले सो सब रामनामही के प्रसाद नाम कृपानुग्रह से ब्रह्मानन्द को जो सुख है सो भोगी नाम भोगते हैं। हेशिष्य, इहांपर पूर्वोक्त ज्ञानी के नाम खोल दिये जोकि) नाम जीह जपि जागहिं जोगी। विरति विरंचि प्रपंच वियोगी॥ ब्रह्मसुषहिं अनुभवहि अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा) इत्यादि कहा है सो ज्ञानी इन्हीं सबको जानना चाहिये इससे यह दिखाया कि बड़े २ ज्ञानी परम हंसों का राम नाम आधार है तो दूसरे की क्या कथा है इससे राम नाम सर्वोपरि है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर गोस्वामीजी ने शिवजीके पीछे शुकचार्यजी को क्यों कहा और सनकादिक चारों भाई से प्रथम क्यों कहा प्रथम तो सनकादिकों को कहना रहा काहेसे कि सनकादिक सबके पूर्वज हैं और शुकदेवजी अपूर्वज हैं इसका क्या हेतु है। (उत्तर) हेशिष्य,शिवजी के पीछे शुकदेवजी को कहने का दो अभिप्राय है तिस में प्रथम अभिप्राय यह है कि शिवजी शुकदेवजीके आचार्य हैं काहे से कि जब शिवजी पार्बतीजी को अमर कथा राम नाम सुनाते रहे तव शुकदेवजी सुनते रहे यह यथा विस्तारपूर्वक (अमर रामायण) में है और शुकपुराण में भी है तथा (शुकदेवसंहिता) में भी है यथा प्रमाण शुकउवाच॥

यन्नाम वैभवं श्रुत्वा शंकराच्छुकजन्मना।
साक्षादीश्वरतां प्राप्तः पूजितोहं मुनीश्वरैः॥ २६६॥

नातः परतरं वस्तु श्रुति सिद्धांतगोचरे।
दृष्टं श्रुतं मया क्वापि सत्यं सत्यं वचो मम॥ २७०॥

अर्थ—शुकदेवजी ने सब ऋषियों से कहा कि जो राम नाम के माहात्म्य शिवजी के मुखसे हम शुकपक्षी के जन्म में सुनकरके साक्षात् ईश्वरत्व को प्राप्त होगये और सब मुनि यों करके हम पूजित भये इससे राम नाम से परे वस्तु वेद सिद्धान्तों के विषय में नहीं तो कहीं मैंने सुना है न देखा है यह मेरा बचन सत्य है सत्य है॥ हे शिष्य, इसी प्रकार से बहुत कहा है इससे शिवजी के कृपा पात्र जानकरके शिवजीके पीछे शुकदेवस्वामीजी को कहाहै काहेसे कि गुरु के पीछे शिष्य को कहना उचितही है। दूसरा हेतु यह है कि शुकदेवस्वामीजी शिवजीके अंश हैं। यथा (व्यासपुत्रः शिवांशश्च शुकश्च ज्ञानिनां वरः) इत्यादि (ब्रह्मवैवर्त्तपुराण) के दशवें अध्याय में प्रशिद्ध हैं इससे (आत्मा वै जायते पुत्रः) इत्यादि श्रुति प्रमाण से आत्मा जो है सोई निश्चयकरके पुत्र होता है इससे जैसे पूर्व में शिवजी के पीछे गणेशजी के कहा है तैसेही इहांपर आत्मा जान करके शिवजीके पीछे शुकदेवजी को कहा है और सनकादि से जो प्रथम कहा इसका हेतु यह है कि शुकदेवजी ज्ञान करके सब से बड़े हैं और मुक्तस्वरूप हैं यथा "शुको मुक्तो वामदेवो वै इति श्रुतिः" इत्यादि प्रमाण है इससे ज्ञान करके बड़ा जान के कहा काहेसे कि शास्त्रके कथन से ज्ञान ही करके बड़ा ब्राह्मण है कुछ अवस्थाकरके नहीं यथा "कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः" इत्यादि मनुजी का कथन है इससे ब्राह्मणों में ब्रह्मज्ञानी ही श्रेष्ठ हैं। इससे शुकदेवजी को प्रथम कहा॥ २॥

नारदजानेउँ नाम प्रतापू। जगप्रिय हरि हरिहर प्रियआपू॥

अर्थ—पुनः श्री नारदजी महाराज जो साक्षाद्देवर्षि हैं सोभी रामनाम के प्रताप जानेउँ हैं काहेसे कि नामहीके प्रतापसे जगत्प्रियजो हरि यानी संपूर्ण पाप के हरने वाले विष्णु भगवान् हैं और हर जो शिवजी हैं तिन हरि हर को आप प्रिय हैं भावसंसार को हरि हर क्यों प्रिय हैं तो हरि हर हैं यानी सब के दुःख हरने वाले हैं इससे प्रिय हैं तिनको भी नारदजी प्रिय हैं भाव विष्णु भगवान् भी नामजापक हैं और शिवजीभी नामजापक हैं और नारदजी भी नामजापक हैं इससे यह दिखाया कि नामजापकों को नाम जापक बहुत प्रिय होते हैं

इससे हरिहर प्रिय आपू कहा। भाव नाम जापक जब जगत्पूज्य विष्णु शिवको प्रिय होजाते हैं तो दूसरे की क्या कथा है इससे नाम जापकजन धन्य हैं और नारदजी के सिद्धांत [नारदीयपुराण) में प्रसिद्ध है। यथा प्रमाण नारदउवाच—

सर्वेषां साधनानां च संदृष्टं वैभवं मया।
परंतु नाम माहात्म्यं कलां नार्हंति षोडशीम् ॥ २७१॥
भवतापि परिज्ञातं सर्ववेदार्थ संग्रहम्।
नाम्नः परं क्वचित्तत्त्वं दृष्टं सत्य वदस्ववै ॥ २७२ ॥
बहुधापि मया पूर्वं कृतं यत्नं महामुने।
नैव प्राप्तं परानन्दसागरं जन्मकोटिभिः॥ २७३ ॥
यावच्छ्रीरामनाम्नस्तु प्रभावं वै परात्परम्।
नोभ्यस्तं हृदये ब्रह्मन् तावन्नानार्थनिश्चयम् ॥२७४॥

अर्थ—व्यासजी से बोले कि सब साधन के ऐश्वर्य मैंने अच्छी प्रकार से देखे परन्तु रामनाम के माहात्म्य की षोडशी कलाको भी नहीं होसके आपने भी तो संपूर्ण वेदार्थ को जाना कहीं रामनाम से परे सिद्धांत यदि देखा हो तो सत्य करके कहिये भाव रामनाम से परे सिद्धांत नहीं देखा होगा। हे मुनिराज मैंने भी पूर्वमें बहुत यत्न किया परमानन्द के समुद्र कोटिजन्ममें भी नहीं प्राप्त भया। जब तक कि रामनाम का परात्पर प्रभाव हृदय में नहीं प्रकाश होता है तब तक हे ब्रह्मन् नानाप्रकार के अर्थ का चिंतवन और निश्चय रहा जब रामनाम पाया तब सबसे मन हट गया। हे शिष्य इसी प्रकार के बहुत कहा है इससे नारदजीने भी निश्चय जाना है ॥ ३ ॥

नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू ४

अर्थ—पुनः श्रीरामनाम को जपत नाम जपते में अथवा जपतही मात्र में प्रभु श्रीरामजीने प्रसादू नाम कृपानुग्रह कीन्ह जिसे कि प्रहलाद जी सब भक्तों के शिरोमणि भये भाव सब भक्तों करके नमस्कृत भये (प्रश्न) हेस्वामी जी यहां प्रभु क्यों कहा (उत्तर) हे शिष्य, प्रभु कहने का भाव यह है कि हिरण्य-

कशिपु बड़ा बली रहा तिनको भी मारि के (प्रहलाद) जीकी रक्षाकी और सब भक्तनके शिरोमणि प्रहलादको किया ऐसे प्रभु समर्थ हैं इससे प्रभु कहा। (प्रश्न) हेस्वामीजी कौन भक्तोंकेशिरोमणि कहा सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, प्रहलाद जी प्रेमी भक्त हैं इससे नवधा भक्ति वाले जो भक्त हैं और पूर्वोक्त जो चार प्रकार के भक्त हैं अर्थात् आर्त १ जिज्ञासु २ अर्थार्थी ३ ज्ञानी ४ तिन सब भक्तों के शिरोमणि कहा हे शिष्य, यह कथा (नृसिंहपुराणमें) विस्तार से लिखी है यथा प्रमाण प्रहलाद उवाच स्वपितरंप्रति—

रामनाम जपतां कुतो भयं सर्वतापशमनैकभेषजम्।
पश्य तात मम गात्रसंगतः पावकोपि सलिलायतेऽधुना॥२७५॥
रामनाम प्रभावेण मुच्यते सर्वबंधनात्।
तस्मात्त्वमपि दैत्येश तस्यैव शरणं व्रज॥ २७६॥

अर्थ—जब प्रहलादजी को हिरण्यकशिपु ने अग्नि में डाल दिया है तब प्रहलादजी बोले कि रामनाम जपने वाले को कहां भय है रामनाम तो संपूर्ण तापके नाश करने के वास्ते एकही औषधि है हे तात मेरा शरीर देख अग्नि में भी जल के समान होगया है रामनाम सर्वोपरि है जिस रामनाम के स्मरण से सब बंधन से छूट जाते हैं तिससे हे दैत्येश तुम भी उसी रामनाम के शरण हो जाव। इत्यादि बहुत कहा है इससे प्रहलादजी अनन्य नाम जापक हैं, हे शिष्य, सोई प्रहलादजी कलियुग में कबीर जी होकर अखंड रामनाम का स्वरूप कहा है॥४॥

ध्रुवसग लानि जपेउ हरि नाऊं। पायेउ अचल अनूपम ठाऊँ॥५॥

अर्थ—पुनः ध्रुवजी महाराजने विमाता सुरुचि के निरादर करने से और अपनी माता सुनीति के कहने से राज के वास्ते सग्लानि नाम ग्लानि के सहित श्रीनारदजी के उपदेश से मथुराजी में जायके हरिनाऊँ याने सब दुःखके हरण करने वाला प्रभुका रामनाम जपेउ नाम जाप किये और नामही के कृपानुग्रह से जिसराज के वास्ते विमाता ने निरादर किया रहा सोभी राज ३० सहस्र वर्ष भोगिके पीछे अनूपम ठाऊं अर्थात् जिसकी उपमाकी तीनों लोकमें दूसरा स्थान कहीं नहींहै सो अचल नाम नाशसे

रहित स्थान पायउ जिसको विष्णु पद कहते हैं भाव राजही के वास्ते ग्लानिपूर्वक नामजपे सो अखंड अक्षय राजपायेतो समान्य राज्य वा अर्थकी प्राप्ति होना कौन दुर्लभ है इससे हे शिष्य ध्रुवजी को इहां अर्थार्थी भक्त जानना चाहिये ॥५॥

सुमिरि पवन सुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू॥६॥

अर्थ—पुनः पवनकुमार श्रीहनुमान्‌जी हैं सोभी पावन नाम जो श्रीराम नाम है तिसको सुमिरि नाम स्मरण करके श्रीरामजी को अपने वश करि राखे हैं (प्रश्न) हे स्वामीजी पावन नाम क्यों कहा [उत्तर] हे शिष्य पावक कहिके हनुमान्‌जी की अनन्यता देखाया है जो कहो अनन्यता क्याहै तो अनन्यत्व यह है कि और जितने नामजापक हैं सो विष्णु नारायणादि के भी नाम जपते हैं और हनुमान्‌जी तो ऐसे अनन्यजापक हैं कि दूसरे नाम रूप लीला धामको कभी स्मरण भी नहीं करते हैं इससे पावन नाम कहिकर रामनाम सूचित कियाहै काहेसे कि हनुमान्‌जी का यही सिद्धान्त है यथा (कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां) इत्यादि हनुमन्नाटक में प्रसिद्ध कहा है सोई गोस्वामीजी का मत है यथा ॥ ३ ॥ एहिमहुँ रघुपति नाम उदारा। अतिपावन पुरान श्रुति सारा ॥ पुनः-तीरथ अमित कोटिसम पावन। नाम अखिल अघ पूग नसावन॥ इत्यादि कहा है इससे पावन नाम रामनाम ही है दसरा नाम पावन है परन्तु रामनामके समान पावन नहीं है इससे पावन नाम कहा (प्रश्न) हे स्वामीजी रामजी को अपने वश में राखे हैं इसका हेतु क्या है सो कृपा करके कहिये (उत्तर] हेशिष्य वशमें राखने को जो कहा है इसका हेतु यह है कि रामजी महाराज घर भर हनुमान्‌जी के ऋणी हैं आपही हनुमान्‌जी से कहेहैं यथा विनय। कपि सेवा बस भए कनौडे कह्यो पवन सुत आउ। देवे कोन कछूरिनियां हौं धनिकतु पत्र लिखाउ॥ इत्यादि कहा है पुनः रामायण में। सुन सुत तोहि उऋण मैं नाहीं॥ देखेउं करि बिचार मन माहीं। इत्यादि पुनः भरतजी के बचन॥ नाहिन तात उऋण मैं तोही। इत्यादि कहाहै इससे घरभर कर्जदार हैं इससे वश करि राखे हैं हे शिष्य, [आदि रामायण] में लिखा है कि जब समुद्र में सेतु बांधते रहे उस समय में नील नल दोनों भाई जो पर्वत जल में डालते रहे सो सब अलग अलग होजाते रहे तब हनुमान्‌जी ने नल नील को युक्ति बताई कि एक पर्वत पर रकार लिखो एक पर्वत पर मकार लिखो तब काम सिद्ध होगा सोई नल नील ने किया है यथा प्रमाण ब्रह्मोवाच नारदं प्रति॥

संतरंतिस्म गिरयोराम नामांकिताजले ।
तद्दृष्ट्वा वानराः सर्वे बभूवुर्विस्मितास्तदा ॥२७७॥

अर्थ—ब्रह्माजी बोले कि जब रामनाम करके अंकित पर्वत जल में तरते हैं यह आश्चर्य देखिके सब बानर लोग विस्मय को प्राप्त होगये तब नल नील ने हनुमान्जी से रामनाम का माहात्म्य बूझा है और हनुमान्जी ने विस्तार से कहा है सो आदीरामायण में प्रसिद्ध हैं तेहिते थोरा लिखते हैं यथा—

सकृज्जप्तं धुनोत्याशु पाप माजन्म संभवम्
द्विरावृत्त्या पुनर्जप्त कोटियज्ञफलप्रदम् ॥ २६७ ॥
त्रिरावृत्त्यापुनर्जप्तं स्वरूपस्थं करोत्ययम् ।
चतुरावृत्तिजप्त्वातु ऋणी भवतिराघवः ॥ २७९ ॥
चिंतामणिः कल्पतरुः कामधेनुश्चवै नृणाम् ।
अनन्यफल संदोहभवनंरामनामवै ॥ २८० ॥

अर्थ-हनुमान् जी बोले कि एक बार रामनाम जपने से जन्म भरके पाप शीघ्र नाश होजाते हैं दो वेर रामनाम जपने से कोटि यज्ञ का फल मिलता है तीनबेर रामनाम जपने से अपने शुद्ध स्वरूपको प्राप्त करदेते हैं चार वेर रामनाम जपने से श्रीरामजी ऋणी हो जाते हैं श्रीरामनाम मनुष्यों के लिये निश्चय करके चितामणिहैं कल्पवृक्षसम है कामधेनु है भाव सब कामप्रद और अद्वितीय फल का स्थान श्रीरामनाम है इससे नाम समान कुछ नहीं है गोस्वामीजी के दोहा। नाम लिया जिन्ह सब लिया छओं शास्त्र का भेद ॥ नाम विना नरकहि गये पढि पढि चारिउ बेद ॥ पढि पढि के सब जग मुवा पंडित भया न कोय ॥ ढाई अक्षर प्रेम से पढ़े सो पंडित होय ॥ इत्यादि कहा है इससे हनुमान्जी बड़े अनन्य जापक प्रेमी भक्त हैं इससे अपने बश करि राखे रामू कहा इहा प्रेमी भक्त हनुमान्जी को जानो ॥ ६ ॥

अपत अजामिलु गजुगनिकाऊ। भए मुकत हरि नाम प्रभाऊ ॥

अर्थ—श्रीगोस्वामी जी कहते हैं अपर नाम और भी अजामित्र ब्राह्मण गजराज तथा गणिकाऊ भाव बड़े आश्चर्य की बात है कि महा नीचाचरण

करने वाली वेश्याभी हरि नाम के प्रभाव करके मुक्त होगई भाव अजामिल और गजेन्द्रजी मुक्त भये वेश्या भी मुक्त होगई ऐसा नामका माहात्म्य भारी है [प्रश्न] हेस्वामीजी अजामिल और गजेन्द्र की कथा मालूम है परन्तु गणिका की कथा मेरे को नही मालूम है सो कृपा करके कहिए (उत्तर) हेशिष्य। पूर्व में एक रघुनाम करके वैश्य रहा तिसकी पुत्री सुन्दरी रही सो समय पाकर के विधवा होगई पीछे कुविचार से नीचाचरण करने लगी कुछ दिन के बाद माता पिता के घर आई तहां भी वही कर्म करने लगी तब पिता के क्रोध भए पर घरसे निकल के कोई शहर में जायके वेश्या हो कर रहने लगी तहां एक सूगा लिया और महात्मा के उपदेश से सर्वोपरि जो रामनाम है सो पढ़ाने लगी यथा प्रमाण पद्मपुराणोक्त (क्रियायोगसारखण्डे)

रामेति सततं नाम पठ्यते सुंदराऽक्षरम्।
राम नाम परंब्रह्म सर्ववेदाधिकं महत् ॥२८१॥
समस्तपातकध्वंसी स शुकस्तत्तदा पठेत्।
नामोच्चारणमात्रेण तयोश्च शुक वेश्ययोः ॥२८२॥
विनष्टमभवत्पापं सर्वमेव सुदारुणम्।
रामनामप्रभावेणतौ गतौ धाम सत्वरम् ॥२८३॥

अर्थ—श्रीराम ऐसा सुन्दर नाम दो अक्षरको सदा पढ़ते हैं। सो धन्यहै काहे से कि राम नाम परब्रह्म है और सब वेद करके अधिकमहत्व है। सब पापों के नाशक रामनाम को वेश्या शुक पक्षीको पढ़ाने लगी सो सूगा पढ़े राम नाम के कहिने ही मात्र करके वह वेश्या और सूगा दूनों महा कठिन पापों को नाश करके रामजी के परे धाम साकेत लोकको शीघ्र चली गई ऐसा नामका माहात्म्य हेशिष्य है इस प्रकार की वेश्या की कथा सर्वत्र प्रसिद्ध है इससे गणिकाऊ कहा हेशिष्य इहां पर पूर्वोक्त सब भक्तों को खोल दिया जैसे कि शुक सनकादिक तो ज्ञानी भक्त हैं और नारद प्रह्लाद हनुमान् जी प्रेमी भक्त हैं और ध्रुवजी अर्थार्थी भक्त हैं अजामिल और गजेन्द्र आर्त्त भक्त हैं और जिज्ञासुभक्त उसको कहते हैं कि जो गूढ अर्थात् निर्गुण सगुण को जानने के वास्ते रामनाम जपे सो भी इन्हीं सबको जानना काहे से कि जिज्ञासु

प्रथम सब को होना परता है दिना जिज्ञासु भये निर्गुण सगुणको कोई जान नहीं सकता है इससे पूर्वापर दूनों जानना और गणिका जो है सो भक्त में नहीं है वह तो स्वाभाविक सूगा पढाके तरी है इसीसे गोस्वामीजी ने गणिकाऊ कहा इस से अजामिल और गजेन्द्र के द्वारा यह दिखाया कि दुःख में जो नाम जपते हैं सो भी सुखी होजाते हैं ताते कैसा भी दुःख हो तो राम रामही जपना चाहिये हाय २ नहीं करना चाहिये और गणिका के द्वारा यह देखाया कि सूगा मैना को भी राम नाम ही पढाना चाहिये और अजामिलके द्वारा एक यह भी देखाया कि जो कोई अपने पुत्र पौत्र भाई आदि के राम नाम कृष्ण वासुदेव वलदेव नारायण विष्णु हरि गोविंद माधव मधुसूदन जनार्दन जगन्नाथ जगदीश भरत शत्रुघ्न लक्ष्मण केशव रघुनाथ रघुवर रघुनन्दन दाशरथी इत्यादि नाम धरत हैं सो भी धन्य हैं काहे से कि पुत्रही के संबन्ध से भगवन्नाम उच्चारण होना धन्य है काहे से कि अजामिलजी ने नारदजी के कहने से पुत्र का नारायण नाम धरा है उसीसे गति होगई इससे (योजयेन्नाम दासांतं भनवन्नाम पूर्वकम्) इत्यादि शास्त्रकी आज्ञाहै ताते दूसरा नामधरना वृथाहै।७।

कहौं कहां लगि नाम बडाई । राम न सकहिं नाम गुनगाई ॥८॥

अर्थ—श्रीगोस्वामी जी, कहते हैं कि रामनाम की वड़ाई नाम प्रशंसा मैं कहां लगि कहौं कि इतनी है श्रीरामनाम के दिव्य जो गुण हैं अर्थात् क्षमा वात्सल्य करुणादिक गुण हैं सो स्वयं श्रीरामजी भी नहीं गा सकते हैं तो दूसरे की क्या कथा है । यथा प्रमाण (वशिष्ठतंत्रे) वशिष्ठ उवाच—

रामनाम परा ये च रामनार्थचिंतकाः ।
तेषां पादरजस्पर्शात्पावनं भुवनत्रयम् ॥२८४॥
कृष्णनारायणादीनि नामानि जपतो निशम् ।
सहस्रजन्मभी राम नाम्नि स्नेहो भवत्युत ॥२८५॥
राम एवाभिजानाति रामनाम फलं हृदि ।
प्रवक्तुं नैव शक्नोति ब्रह्मादीनां तु का कथा ॥२८६॥

(पुः—महारामायणे शिव उवाच)

वेदास्सर्वे च शास्त्राणि मुनयो निर्जरर्षभाः।
नाम्नः प्रभावमत्युग्रं ते न जानंति सुव्रते ॥२८७॥
राम एवाभिजानाति कृत्स्ननामार्थमद्भुतम्।
ईषद्ददामि नामार्थं देवि तस्यानुकम्पया ॥२८८॥

अर्थ—श्रीरामनाम में जे तत्पर हैं और नामार्थ के चिंतन करने वाले हैं तिनके चरण कमलकी रजसे तीनों लोक पवित्र होजाते हैं कृष्ण नारायणादि लेकरके जितने बिष्णु भगवान् के नाम हैं सो सब नाम सहस्र जन्मपर्यन्त भी जपेगा जबकहीं श्रीरामनाम में प्रेम होता है ऐसा रामनाम है। श्रीरामनाम के फल केवल एक श्रीरामहीजी हृदय में जानते हैं परन्तु कह नहीं सकते हैं काहेसे कि राम नामका महात्म्य भारी है तो ब्रह्मादिकनका क्या कहना है। पुनः—महारामायण में शिवजी ने पार्वतीसे कहा है कि वेदशास्त्र पुराण मुनिलोग देवतालोग सब श्रीरामनाम के जो अति उत्कृष्ट प्रभाव हैं सो नहीं जानते हैं। हे प्रिये, रामनामके अद्भुत अर्थ सम्पूर्ण केवल एक रामहीजी जानते हैं। हे देवि, तिनरामजी की कृपासे नामके अर्थ थोरासा मैं कहता हूँ तुम सुनो। इसी प्रकार से बहुत कहाहै इससे रामजीभी नाम माहात्म्य नहीं कह सकतेहैं। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहांपर सब बक्ताओं को छोड़कर रामही जी, को क्यों कहा (उत्तर) हे शिष्य, इसका हेतु केवल इतनाही है कि और जितेने वेदशास्त्र पुराण शेष शारदा शिबादिक हैं सो सब रामजी की ही कृपा से वक्ता हैं और रामजी जो हैं सो स्वयं वक्ता हैं इससे रामही जी को कहा इहांपर मुख्यार्थ इतनाही है कि श्रीरामनामका महात्म्य गुण बड़ाभारी है इससे परे सिद्धान्त दुसरा कुछ नहीं है ताते सब छोड़िके श्रीरामनाम जपो। (प्रश्न) हे स्वामीजी इहां कोई कोई यह अर्थ करते हैं कि राम जो परशुराम जी हैं बलराम हैं और विष्णु अवतार वाले जो राम हैं सो सब रामनाम के महात्म्य नहीं कह सकते हैं ऐसा कहते हैं सो कैसा है कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इस अर्थका इहां कुछ प्रयोजन नही है केवल वाग्विलास है अर्थ पूर्वोक्तही ठोक है काहेसे कि इहां शास्त्रमें प्रमाण सिद्ध है ॥ ८ ॥

दोहा—नाम राम को कल्पतरु, कलि कल्याननिवास।
जो सुमिरत भयो भांगतें, तुलसी तुलसीदास ॥९॥

अर्थ—श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि नाम जो श्रीरामजीका है सोई तो कल्पवृक्ष है भाव जो मांगे सोई मिले और कलियुग में सम्पूर्ण कल्याण जो ज्ञान वैराग्य शान्ति क्षमा दया योग जपादिक हैं तिनके निवास नाम स्थान हैं भाव जितने कल्याणकारी साधन हैं सो सब कलियुग के भयके मारे श्रीराम नाम के आश्रित निवास किये हैं इससे जो कोई कल्याण चाहै सो श्रीरामनाम के आश्रित हो जावे नहीं तो पापरूप कलियुग से वचना महा कठिन है। हेशिष्य, अब श्रीगोस्वामीजी अपनी साक्षी देते हैं कि जो श्रीरामनाम कल्पतरु को सुमिरत मात्र में महानिषिद्ध [भांगतें] नाम भांगसे मैं तुलसीदास महा पवित्र तुलसी भयो भाव तुलसीजीके समान रामजो को प्रियभयो। हे शिष्य, इहांपर गोस्वामीजी ने दो वात दिखाई एक बात तो यह दिखाई कि तुलसीजीके समान पवित्र दुसरा कोई वृक्ष नहीं है। यथाप्रमाण गर्गसंहितायाम्-

पुष्कराद्यानि तीर्थानि गंगाद्याः सरितस्तथा।
वासुदेवादयो देवा वसन्ति तुलसीदले॥ २८६॥

अर्थ--पुष्करादि जितने साढे तीन कोटि तीर्थ हैं और गंगादि जितनी सब नदीयर हैं और वासुदेवादि जितने ३३ कोटि देवता लोग हैं सो सब तुलसी के एक दलमें निवास करते हैं ऐसा माहात्म्य है सो सर्वत्र प्रसिद्ध है, और पूर्णिमा अमावस्या द्वादशी संध्या काल प्रातःकाल मध्यान्ह में विना स्नान किये रात्रि के वस्त्र पहिन करके तेल लगाकर अशौच में अशुद्धता में हे शिष्य, इतने काल में तुलसी नहीं तोडना चाहिये यदि मूर्खता से तोडे तो जानो भगवत् का शिर छेदन किया ऐसा शास्त्र में कहा है इससे तुलसी सर्वोपरि है ताते तुलसी का पूजन धारण सेवा जलदेना दीपदान इत्यादि सब करना चाहिये इससे यह दिखाया कि भांगके समान दूसरा निषिद्ध कोई नही इससे (भंग) नहीं पीना चाहिये। [प्रश्न] हेस्वामीजी, भंग और तमाखू तो बड़े २ विद्वान् और महात्मालोग खातेपीते हैं और आप कहते हैं कि दोषहै सो कहां लिखा है कृपा करके कहिये। (उत्तर) हेशिष्य, आजकाल कलियुग में विद्वान् लोग महात्मालोग येही सब प्रथम अनीति करते हैं जिसको देखा देखी सब कोइ करते हैं और यथार्थ जो विद्वान् अथवा महात्मा होंगे वे शास्त्र के प्रतिकूल कर्म क्यों करेंगे। हे शिष्य यह कथा [पद्मपुराण) में लिखी है कि एकदिन श्रीकृष्णभगवान सत्यभामा के सहित कल्पवृक्ष के निमित्त इन्द्र

लोकको गये तहां इन्द्रसे कल्पवृक्ष मांगासो नहीं दिया तब गरुड जी से और कामधेनु गौसे खूब युद्ध भया पीछे गरुडजो ने तीन वस्तु गौकी काट डारीं एक तो कान सो [तमाखू] भया दूसरा पुच्छ सो [गोभी] भया तीसरे खून की धारा निकली उससे (मेहदी) भई और कहीं २ लिखा है कि स्तनभी काट डारे हैं उससे (रक्तमूलि) भया है । यथाप्रमाणपद्मपुराणे कार्तिक माहात्म्ये—

कर्णेभ्यश्च तमालं च पुच्छाद्गोभी बभूह ।
रुधिरान्मेहदी जाता मोक्षार्थी दूरतस्त्यजेत् ॥ २९० ॥
तस्मादेतत्त्रयं चैव नहि सेव्यं नरैः प्रिये ।
त्रयं मध्ये तमालोऽपि न सव्यं सुमते मतम् ॥ २९१ ॥

अर्थ—कानसे तमाखू और पुच्छ से गोभी भई और रुधिर से मेहदी भई इससे मोक्षकी चाहने वाला इनको दूरहीसे छोड देवे । तिससे हे प्रिये, मनुष्यको इन तीनों वस्तु की सेवा नहीं करनी चाहिये तिन तीनों के मध्यमें तमाखू को तो अबश्य करके नहीं खाना पीना चाहिये इसी प्रकारसे बहुत कहा है । हे शिष्य, यही स्कंदपुराणमें भी ब्रह्माजीने नारदजीसे कहा है । यथा ब्रह्मोवाच—

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च मुनिसत्तम ।
श्वपचैः सदृशा ज्ञेयास्तमालपानमात्रतः ॥ २९२ ॥
अभक्षणाच्च यत्पापं अगम्यागमनाच्च यत् ।
मद्यपानाच्च यत्पापं तत्पापं च तमालतः ॥ २९३ ॥
तमाखूभंगमद्यानि ये पिवंति नराऽधमाः ।
तेषां हि नरके वासो यावद्ब्रह्मा चतुर्मुखः ॥ २९४ ॥
गृहीत्वा वैष्णवी दीक्षां तमालं प्रपिवंतिये ।
मिथ्या जाप्यं च मौनं च वृथादीक्षाफलं श्रुतेः ॥ २९५ ॥
स्नानदानानि तीर्थेषु प्रयागादिषु कोटयः ।
वृथैव तानिसर्वाणि धूम्रपानाच्च नारद ॥ २९६ ॥

दत्तानि येनदानानि सुवर्णादीन्यनेकशः ।
तानिसर्वाणि नैष्फल्यं धूम्रपानाच्च नारद ॥ २६७ ॥
सत्येयुगेतु त्रेतायां न भवेद्द्वापरे युगे ।
इदानीं तु कलौ जातं तमाखं कलिरूपतः ॥ २६८ ॥
प्राप्ते कलियुगे घोरे नरकार्णवहेतवे ।
नराणां धर्मनाशाय सोभ्राम्याति महीतले ॥ २६९ ॥
तमालविटपश्चापि यत्र यत्र भवेन्मुने ।
तत्र श्राद्धं न कर्तव्यं पितॄणां ददते क्षयम् ॥ ३०० ॥
तेषां संध्या वृथा ज्ञानं वृथा वैराग्यसेवनम् ।
तीर्थस्नानं व्रतंदानं धूम्रपानाद्वृथा सदा ॥ ३०१ ॥

अर्थ—ब्रह्माजी बोले कि हेमुनिसत्तम, उन ब्राह्मणन क्षत्रियन वैश्यन शूद्रनको भंगी समान जानना जो तमाखू खाते पीतेहैं।अभक्ष खानेसे, जो पाप होताहैऔर अगम्य यानी नीच जातिसे प्रसंग करनेसे जो पाप होताहैं मदिरा पीनेसे जोपाप होताहै सोपाप तमाखू खानेपीने से होताहै । तमाखू भंग मदिरागांजा चरस चुरट अफीम इत्यादिक जो खातेपीते हैं वेपापी हैं तिनको निश्चय पूर्वक नरक में वास होगा कबतककि जबतक ब्रह्मा चतुर्मुख हैं जो कोई वैष्णवी दीक्षाको लेकरके याने वैष्णव होकर तमाखु खातेपीते हैं उनके जाप योग मौन ध्यान पूजापाठ दीक्षाके फल सबही वृथा हैं। हे नारदजी, प्रयागादि तीर्थमें स्नान दानका जो कोटिन फल है सो सब धूम्रपान याने (चिलम) पीनेवाले के वृथा हैं वृथा हैं। जो कोई नानाप्रकार के सुवर्णादिक दानदिये हैं सो सब उनके (हुक्कावाचिलम) पीनेसे वृथा होजाते हैं। सत्ययुग त्रेता द्वापरमें नहींरहा केवल इसी कलियुग में पापरूप तमाखू उत्पन्न हुई है सो कलिरूप हीं है। महाघोर कलियुग के आतेही नरकों के स्थान सब मनुष्यों के धर्मनाश के लियेही संसार में सर्वत्र घरघर तमाखू घूमरही है। हे नारदजी, जहां २ तमाखू के बृक्षहों तहां श्राद्ध कर्म नहीं करना जो कुछ पितृन को देवै तो भी नाश होजाता है उनकी संध्या ज्ञान ध्यान वैराग्य सेवन तीर्थ स्नान ब्रत दान पूजा पाठ सब धुवांपानसे वृथाहै सदा सबदिन इससे जज्जन पुरुषों को उचित है कि छोड़देना

चाहिये। [प्रश्न] हेस्वामीजी गांजाभांग तमाखू के खानेपीने वाले कहते हैं कि शिवजी की बूटीहै इसमें कुछदोष नहीं है सो क्या है [उत्तर) हे शिष्य, यही उपमा देकर के सब संसार चौपट होंगया काहेसे कि साधु ब्राह्मण जोजो काम करते हैं उसीको मूर्खलोग प्रमाण समझ कर परस्पर कहने लगते हैं कि इसमें क्या दोषहै बड़े २ साधु पण्डित लोग खातेपीते हैं दोषहोता तो क्यों खातेपीते ऐसो २ सहस्त्रों मूर्खता की बातें करते हैं सो सबवृथा है और शिवजी की उपमा देना भूल है काहेसे कि शिवजी ईश्वर हैं समर्थ हैं चाहैं जो करैं विधि निषेधसे रहित हैं इससे ईश्वरकी उपमाजीव को देना अथवा उनकी बराबरी करना महा अयोग्य है। यथा—जो विवाह शंकरसन होई। दोषौ गुनसम कह सब कोई॥ जो अहिसेज शयन हरि करहीं। बुध कछु तिन्हकर दोष न धरहीं॥ भानु कृशानु सर्व रस खाहीं। तिन्ह कहँ मन्द कहत कोउनाहीं॥ शुभ अरु अशुभ सलिल सबबहहीं। सुरसरि कोउ अपुनीत न कहहीं॥ समरथ को नहिं दोष गुसांई। रवि पावक सुरसरि की नाहीं॥

दोहा—जो असि हिसिषा करहिं नर, जड़ विवेक अभिमान।
परहिं कल्प भर नरक महँ, जीवकि ईस समान॥

इत्यादि गोस्वामीजीने कहा है इससे ईश्वर की बराबरी करने से नरक भोगना पड़ता है दसरे शिवजी तमोगुणी हैं इससे उनका आचरण नहीं करना चाहिये और शिवजीका खाना पीना भी किसी शास्त्रमें नही लिखा है ऐसही मूर्ख लोग कहते हैं। आगे जो हो काहेसे कि गुन अवगुन जानत सबकोई। जो जेहि भाव नीक तेहिसोई॥ हे शिष्य इहांपर गोस्वामीजीने चहुँयुग के नाम जापक खोलदिये जैसे कि सनकादि चारोंभाई और नारदजी प्रह्लादजी ध्रुवजी अजामिल गजेन्द्र गणिका इत्यादि तो सत्ययुग के नाम जापक हैं और त्रेतायुग के सर्वोपरि जापक शिरोमणि श्रीहनुमान्‌जी हैं और कलियुग के जापक तो स्वयं आपही हैं सो लिखदिया कि, जो सुमिरतभयो भांगतें तुलसी तुलसीदास इत्यादि (चहुंजुग चहुँश्रुति नाम प्रभाऊ जानना चाहिये। हेशिष्य, इहां पर केवल जानने के वास्ते गोस्वामीजीने चहुँयुग के मुख्य २ दोचार नाम जापक लिख दिये हैं परन्तु नामजापक बहुत हैं और यह तो प्रसिद्ध हो दिखाया कि भांगके समान निषिद्ध दसरा कूछ नहीं है और तुलसी के समान पवित्र दूसरा कुछ नहीं है॥ ८॥

चहुँजुग तीनि काल तिहुँलोका । भये नामजपि जीवविसोका ॥

अर्थ—हे शिष्य, अब श्रीगोस्वामीजी विशेष एक रामनामही मोक्षप्रद दिखाते हैं कि चहुंयुग अर्थात् सत्ययुग त्रेता द्वापर कलियुग इति चहुंयुग और तीनकाल अर्थात् भूत जो होगया भविष्य जो होनेवाला वर्तमान जो हैं इति तीन काल और स्वर्गलोक मृत्युलोक शेषलोक इति तिहुंलोक में केवल एक श्रीराम-नामही को जपि के जीव बिशोक नाम जन्ममरणरूप शोक से रहित हुये हैं भाव सत्ययुग में जिनकी मोक्षभई तिनकी रामनामही से दूसरेसे नहीं और त्रेतायुग में जिनकी गतिभई सोरामनामही से दूसरे से नहीं पुनःद्वापरयुग में भी जिनकी मुक्ति हुईसो रामनाम हीसे दूसरे से नहीं कलियुग में जिनकी गतिभई सो रामनामही से दूसरे से नहीं और भूत भविष्य वर्त्तमाम इति तीनों कालमें नामहीसे जीवका कल्याण भया है दूसरा सब वृथा है और स्वर्ग लोक में जिनसब की गति हुई है सो नामही से दूसरे से नहीं। पुनः मृत्युलोक में जिनकी गतिभई है सो नामही से दूसरे से नहीं और पाताल में जिनकी गतिभई है सो रामनाम ही से दूसरेसे नहीं। भावार्थ यह है कि जिनकी गति होगई और आगेमें होगी और होरही है सो सब रामनाम ही से जानना नाम विना वृथा है। हे शिष्य, गोस्वामीजी का अगम सिद्धांत है देखो इहां क्या कहा है इससे रामनाम विना परमार्थ की आशा करना कैसा है कि जैसे कोई बर्षते हुये जल बुन्द पकड़के आकाश चढ़ना चाहै तो वृथा है। यथा—रामनाम अवलंब विनु परमारथ की आश। वरषत बारिद बूंदगहि चाहत चढन अकाश ॥ इत्यादि गोस्वामीजोने दोहावली में कहा है इससे रामनाम सर्वोपरि है तुमसब छोड़ि के रामनाम ही जपो नामही सार है। यथाप्रमाण आदित्यपुराणे—

रामनामजपादेव भासकोहं विशेषतः ।
तथैव सर्वलोकानां क्रमेण शक्तिवाहनम् ॥३०२॥
नामविश्रब्धहीनानां साधनांतरकल्पना ।
कृता महर्षिभिस्सर्वैः परानन्दैकनैष्ठिकैः ॥३०३॥

अर्थ—सूर्य भगवान् के बचन है कि रामनाम के जपने हीसे मैं विशेष करके प्रकाशक हूं तैसेही क्रम करके सब लोकन को शक्ति सहित प्रकाश करते

करते हैं। जिनको रामनाम में श्रद्धा विश्वास नहीं है उन्ही सब के वास्ते परमानन्द के निष्ठावाले ऋषि लोगोंने नाना प्रकार के ज्ञान वैराग्य योगादि साधन कल्पना किये हैं। भाव अन्यधर्म जीवको भटका देनेवाले हैं और ज्ञान वैराग्यादि साधन सब नाम के आधीन हैं। यथा—भक्तिवैराग्यविज्ञान समदानदमनाम आधीनसाधनअनेकम्—इत्यादि विनय में कहा है, इससे नामही सार है॥ १॥

वेद पुरान संतमत एहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥२॥

अर्थ—जो कदापि कहो कि यह मत आपही का है कि (चहुंजुग तीनि काल तिहुँ लोका। भये नाम जपि जीव अशोका) कि और कोई का मत है तिसपर गोस्वामी जो कहते हैं कि यह पूर्वोक्त सिद्धान्त केवल मेराही नहीं हैं एहू नाम यह मत वेदपुराण और सब सन्त का है कि मोक्ष दायक एक राम नामही है दूसरा कोई नहीं और सकल नाम सम्पूर्ण सुकृत जो पुण्य हैं तिनका भी फल रामनामही है। भाव रामनाम में प्रेम होना यही सब पुण्य के फल है और रामजीमें स्नेह नाम प्रीति होनेका भी रामनाम ही कारण है भाव जिन का प्रेम रामनाम से है उनका प्रेम श्रीरामजो से होचुका काहे से कि राम जी नाम ही करके मिलते हैं। अथवा दूसरा अर्थ यह है कि वेदपुराण और सन्त का मत यही है कि सम्पूर्ण पुण्य के फल रामजी में प्रेम होना परन्तु अर्थ पूर्वोक्तही ठीक है काहे से कि नाम का प्रकरण है ताते रामनाम सर्वोपरि है। यथा प्रमाण मत्स्यपुराणे—

ध्येयं ज्ञेयं परं पेयं रामनामाक्षरं मुने।
सर्वसिद्धान्तसारेदं सौख्यसौभाग्यकारणम्॥३०४॥
नामैव परमं ज्ञानं ध्यानं योग तथा रतिम्।
विज्ञानं परमं गुह्यं रामनामैव केवलम्॥३०५॥

अर्थ—ध्यान धरने योग्य रस पीने योग्य हे मुनि, एक रामनाम ही दो अक्षर हैं और सब सिद्धान्त का सार है यह नाम सब सुख सौभाग्य का कारण है नाम के समान कुछ नहीं हैं नाम ही परमज्ञान ध्यान योग प्रीति सब है नाम ही केवल गुप्त से भी गुप्त श्रेष्ठ ज्ञान है रामनाम बिना सब वृथाहैं॥ २॥

ध्यान प्रथम जुग मष बिधि दूजें । द्वापर परितोषत प्रभु पूजें ॥

अर्थ-हे शिष्य, अब श्रीगोस्वामी युगांतर धर्म को वर्णन करिके कलियुग मे केवल नाम ही दिखाते हैं कि प्रथम युग जो सत्ययुग है तिसमें भगवत ध्यान रहा इसी को करके सब ज्ञानी लोग तरते रहे । यथा (कृतजुग सब जोगी विज्ञानी । करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी) इत्यादि कहा है और मख बिधि दूजे अर्थात् दूजे जो त्रेतायुग है तिसमें विधिपूर्वक मख नाम यज्ञ करते रहे और उसका फल भगवदर्पण करके जीव कृतार्थ होते रहे । यथा (त्रेता विविध जज्ञ नर करहीं । प्रभुहिं समर्पि करम भवतरहीं-इत्यादि कहा है। पुनः द्वापरयुग में नारदपंचरात्रादि की विधि से षोडशोपचार से भगवत्पूजन करके जीव तरते रहे, और पूजन ही से प्रभु प्रतोष नाम प्रकर्ष करके संतुष्ट होते रहे । यथा [द्वापर करि रघुपतिपद पूजा । नर भव तरहिं उपाय न दूजा] इत्यादि कहा है । हे शिष्य, यहां पर दूजा उपाय नहीं रहा इससे यह नहीं जानना कि सत्ययुग में केवल ध्यान ही रहा रामनाम नहीं त्रेता में यज्ञ ही रहा द्वापर में पूजन ही रहा नाम नहीं रहा सो नहीं जानना काहे से कि [चहुँयुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ] कहा है यह बात शास्त्र में प्रसिद्ध है।

यथा प्रमाण शारदारामायणे—

चतुर्य्युगेषु श्रीरामनाममाहात्म्यमुज्ज्वलम् ।
सर्वोत्कृष्टं न संदेहः कलौ तत्रापि सर्वथा ॥ ३०६ ॥

अर्थ—श्रीरामनाम के उज्ज्वल माहात्म्य चारों युग में सर्वोपरि हैं इसमे संदेह नहीं है और कलियुग में तो सर्वथा एक नाम ही है दूसरा कुछ नहीं इससे सबयुगमें प्रधान रामनाम ही रहा उपाय दूसरा रहा यह भाव यहां जानो ॥ ३ ॥

कलि केवल मलमूल मलीना । पाप पयोनिधि जनमनमीना ॥

अर्थ—हे शिष्य, अब इहाँ से दोहा पर्यंत कलियुग को वर्णन करके सर्वोपरि अवलम्ब एक श्रीरामनामही को दिखाते हैं काहे से कि यह सतपंच चौपाई कलियुगीही जीवके वास्ते उपदेश है क्योंकि कलियुग में एक रामनाम ही मुख्य है इसीसे नाम वन्दना के अन्त में कलियुग को विधिपूर्वक वर्णन करते हैं । श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि कलियुग तो केवल मल नाम पाप का

मूल नाम जड़ है। भाव सब पापका सजीव कर्त्ता कलियुग ही है इससे यह दिखाया कि कलियुगी जीवका कुछ दोष नहीं है जो दोष है सो कलियुग ही का है काहे से कि कलियुग बड़ा मलीन नाम पापी है रात्रि दिन पाप ही में लीन रहता है ऐसे घोर पापरूप कलियुग में पाप के पयोनिधि नाम समुद्र में जन जो प्राणी हैं तिनका जो मन है सो मीन नाम मछरी हो रहा है भाव सब पापमय होरहे हैं इससे यह दिखाया कि जब स्वयं कलियुगही पाप का मूल है और बड़ा पापी है तो कलियुग के प्रजा लोग क्यों न पापमय होंगे काहे से कि [यथाराजा तथा प्रजा] क्यों न होंगे राजा के अनुकूल प्रजा को होना सनातन धर्म है न होवें तो दण्ड मिले इसका मुख्यार्थ यह है कि कलियुग ने सब को बश कर लिया है किसी का अन्तःकरण शुद्ध होने नहीं देता है तो पूर्वोक्त युगांतर धर्म ध्यान, यज्ञ, पूजा कैसें बनै भाव अन्ययुगका धर्म कलियुग अपने राज्य में नहीं प्रचार होने देता है काहे से कि कलियुग शूद्र वर्ण राजा है और सत्ययुग त्रेता द्वापर द्विजाति हैं। यथा—

ब्राह्मं कृतयुगं प्रोक्तं त्रेता तु क्षत्रियं युगम्।
वैश्यं द्वापरमित्याहुः शूद्रं कालियुगं स्मृतम् । ३७ ।।

अर्थ-ब्रह्माण्ड पुराण के तीसरे पाद में कहा है कि कृतयुग को ब्राह्मण कहा है त्रेतायुग को क्षत्रिय कहा है द्वापर को वैश्य कहा है शूद्र कलियुग को कहा है ऐसा शास्त्र सिद्ध है इससे कलियुग तीनों युगका धर्म देखि के नहीं सह सकते हैं कलियुग में जितने ही पाप करो अनीति करो उतनेही कलियुग प्रसन्न होते हैं इसीसे कलियुग में सब धर्म विपरीत होजाते हैं और ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य के धर्म शूद्र करते हैं वेदपुराण शूद्र पढ़ते हैं। जप, तप, पूजा, पाठ, तीर्थ, व्रत, दान, सब शूद्रही लोग करते हैं, शूद्र ही राजा होते हैं, शूद्रही जनेऊ पहिर लेते हैं, यानी सब प्रकार से शूद्रों की प्राबल्यता हो जाती है काहेसे कि कलियुग शूद्र है इससे सजाति पर प्रसन्न रहते हैं इससे पापी कहा ॥ ४ ॥

नाम कामतरु काल कराला। सुमिरत समन सकल जगजाला ५

अर्थ—श्रीगोस्वामी जी कहते हैं कि, पूर्वोक्त जो पापरूप समुद्र में जनका मन जो मीन हो करके डूब रहा है तिनको जो नाश करने वाला कराल नाम भयंकर कालनाम मृत्यु है सोई तो धीमर है जो मोहरूप जाल में नानाप्रकार

के जगजाल नाम दुःख रूप फन्दा लगा के सब के मन मीन को फँसा कर मार रहे हैं ऐसे पापमय कलियुग में पूर्वोक्त जो रामनाम है कि; नाम रामको कल्पतरु कलि कल्यान निवास) इत्यादि कहा है सो सुमिरत ही मात्र में सकल नाम सम्पूर्ण जो जगजाल नाम दुःख हैं अर्थात् जन्म मरण सो सब शमन नाम नाश होजाते हैं और नामरूप कल्पवृक्ष के प्रताप से सम्पूर्ण कल्याण के निवास स्थान होजाते हैं, भाव कराल काल और पापमय कलियुग कुछ नहीं कर सकता है इससे यह दिखाया कि कलियुग में जो प्रताप और माहात्म्य नाम का है सो दुसरे साधन का नहीं इससे कलियुग काल से वचने वाला नाम जपै । यथा प्रमाण—

कलौ श्रीरामनामैव सर्वेषां सम्मतं परम् ।
आर्त्तानां जीवनं नित्यं तृप्तानां वै मनोददम् ॥३०८॥
भक्तानां त्राणकर्तारं रामनामसमाश्रयम् ॥

पुनः—अत्रिसंहितायां शिवउवाच)

अहो भाग्यमहोभाग्यं कलौ तेषां सदा शिवे ।
येषां श्रीरामनाम्नस्तु नियमं समखण्डितम् । ३०९ ॥

अर्थ—मार्कण्डेय संहितामें कहा है कि कलियुगमें श्रीरामनाम जपना सब का श्रेष्ठ संमतहै दुखियों का नित्य जीवन है तृप्ति वालेके मन देनेवाले हैं भक्तन की रक्षा करनेवाले हैं श्रीरामनाम सबके सारहैं अत्रिसंहितामें शिवजीका वचन है कि, हे शिवे, तिनके अहोभाग्य हैं अहोभाग्य हैं सबदिन जिनका कलियुग में अखंडप्रेम श्रीराम नाम से है, भाव रात्रि दिन जो सीताराम सीताराम कहते हैं सो जीव धन्य हैं । हे शिष्य, लिखा है कि (षण्मासात्सिद्धिमाप्नोति कलौ विश्वासपूर्वकम्) अर्थात् कलियुगमेंविश्वास पूर्वक रामनाम जपने से छः महीने में सिद्धि प्राप्त होजाती है ऐसा नाम है सोई सिद्धांत गोस्वामीजीके हैं । यथा-पय अहाइ फल खाइ जपु, राम नाम षट्मास । सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास इत्यादि कहा है, इससे कलियुग में उक्त रामनामही गति देनेवाला है दूसरा सब वृथा है ॥ ५ ॥

रामनाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितु माता ॥

अर्थ-श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि श्रीरामनाम जो है सोई कलियुगमें कल्पवृक्ष के समान अभिमत नाम मनवाञ्छित फलके देनेवाले हैं (प्रश्न) हेस्वामी जो, यहां पर कल्पवृक्ष का नाम नहीं है आपने कहां से कहा (उत्तर) हेशिष्य, यहां पर नहीं भी कहा है तो भी अभिमत कहने से कल्पवृक्षही सूचित किया है काहेसे कि यहाँ पर पूर्वहीसे कल्पवृक्ष कहते आये हैं। यथा (नामराम को कल्पतरु पुनः नाम काम तरु इत्यादि कहा है इससे कलियुग के प्रकरण में कल्पवृक्ष ही बार २ कहते हैं इससे यह दिखाया कि नाम ही मन वांछित फलके देनेवाले हैं दूसरा नहीं। पुनः-वह रामनाम कैसा है कि परलोकमें हितकरने वाला है और इसलोक में माता पिता के समान पोषण पालन करने वाला है। हेशिष्य, यहां पर माता पिता कहनेका भाव यह है कि पुत्र का हितकारो माता पिता से बिशेष कोई नहीं है इससे माता पिता कहा, भाव जीव का यथार्थ माता पिता नामही है इससे श्रीरामनाम सर्वोपरि है। यथा विश्वामित्र संहितायाम् –

धन्याःपुण्याः प्रपन्नास्ते भाग्ययुक्ताः कलौयुगे। संविहाया-थयोगादीन् रामनामैकनैष्ठिकाः ॥ ३१० ॥ सर्वमन्त्रमयं नाम यंत्रास्पदमनूत्तमम्। स्वाभाविकीं परां सिद्धिं दुर्ल्लभां तज्ज पाल्लभेत् ॥ ३११ ॥ वृथा नानाप्रयोगेषु मन्त्र तन्त्रेषु मानवाः। यत्नं कुर्वन्त्यहो मूढास्त्यक्त्वा श्रीनाम सुन्दरम् ॥ ३१२ ॥

अंधानां नेत्रमुत्कृष्टं स्वच्छं श्रीनाम मंगलम्। बधिराणां तथा कर्णौ पंगूनां हस्तपादकौ ॥ ३१३ ॥

अर्थ—वह दास कलियुग में धन्य हैं पुण्यात्मा हैं भाग्ययुक्त हैं जो सब ज्ञान वैराग्य योगादि को छोड़कर श्रीरामनाम में निष्ठाकिये हैं। सब मन्त्रमय श्रीरामनाम यन्त्र के समान उत्तम हैं उस रामनाम को जपने से स्वाभाविकी परे सिद्धि को प्राप्त होजाते हैं। नानाप्रकार के प्रयोगों में मन्त्र में मनुष्य वृथा यत्न करते हैं, बड़े मूर्ख हैं, श्रीरामनाम सुन्दर छोड़कर क्यों खाली मत्था कूटते हैं। अंधेके श्रेष्ठ दूनों नेत्र श्रीरामनाम हैं और बहिरे के दूनों कान हैं पंगू के रामनाम दूनों हाथ पांव हैं, इससे रामनाम सर्वोपरि है नाम विना सब वृथा है यह सिद्धान्त अनादि है बाकी सब सिद्धान्त बीचमें ऋषिने आप आपके किये हैं सो मूर्ख पशुवों को भटका देने के हैं बाकी नाम सत्य है ॥ ६ ॥

नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। रामनाम अवलंब न एकू॥

अर्थ—अब कलियुग में विशेष करके एक नाम ही अवलंब दिखाते हैं। श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि, नहिं तो कलियुग में सन्ध्या तर्पणादिकर्म ही है, और न कलियुग में श्रवणादि नवधा भक्ति ही है और न कलियुग में (तत्त्वमसि) आदि विवेक नाम ज्ञान ही है। कलियुगमें तो केवल रामनाम ही एक अवलंबन नाम आधार है। हेशिष्य, इससे यह दिखाया कि कलियुग में न तौ कर्मकाण्ड है, न उपासनाकाण्ड है, न ज्ञानकाण्ड है जो है सो एक रामनाम ही आधार है। (प्रश्न) हे स्वामीजी, कलियुग में त्रिकाण्ड क्यों नहीं है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर) हेशिष्य, इसका हेतुतो मैंने पूर्व ही में कहा कि कलियुग शूद्र वर्ण राजा है इनके राज्यमें त्रिकाण्ड का अधिकार नहीं है त्रिकाण्ड का अधिकार पूर्वोक्तही तीनों युगमें है यानी सत्ययुगमें ज्ञानकाण्ड रहा, त्रेतामें यज्ञादि कर्म काण्ड रहा, द्वापरमें पूजादि उपासनाकाण्ड रहा और कलियुगतो महापापी धूर्त है केवल रामनाम ही से जीता जाता है नहीं तो पार पाना कठिन है इससे त्रिकाण्ड नही हैं। हेशिष्य, इसीको (सतपंच चौपाई मनोहर) जानना काहेसे कि कलियुग है इसमें एक नाम छोड़कर दूसरा अधिकार नहीं है। यथा प्रमाण—

नास्ति नास्ति महाभाग कलेर्युगसमं युगम्॥ स्मरणात्-त्कीर्त्तनाद्यत्र लभते परमं पदम्॥ ३१४॥ घोरे कलियुगे प्राप्ते सर्वदोषैकभाजने॥ रामनामरता जीवास्ते कृतार्थाः सुजीविनः॥ ३१५॥ रामनामपरा ये च घोरे कलियुगे द्विजाः॥ त एव कृतकृत्याश्च न कलिर्बाधते हि तान्॥ ३१६॥ समस्तजगदाधारं सर्वेश्वरमखण्डितम्॥ रामनाम कलौ नित्यं ये जपन्ति समादरात्॥ ३१७॥ ते धन्याः पूजनीयाश्च तेषां नास्तिभयं क्वचित्। सत्यं वदामि विप्रेन्द्र नान्यथा वचनंमम ३१८

अर्थ—हेमहाभाग, कलियुग के समान दूसरा युग नहीं है नहीं है। जहां स्मरण कीर्त्तन से परम पद प्राप्त होजाता है। घोर कलियुग के आने ही पर

सब पाप के स्थान जीव रामनाम में रत होने हो से कृतार्थ होजायँगे। जो ब्राह्मण घोर कलियुग में सर्वोपरि रामनाम जपैंगे सोई कृतकृत्य होजायँगे तिनको कलियुग कुछ बाधा नहीं करैगा। संपूर्ण संसार के आधार अखण्ड ईश्वर श्रीरामनाम को जो कोई आदर से कलियुग में नित्य नेम से जपते हैं वह धन्य से भी धन्य हैं सब के पूजनीय हैं तिनको कलियुग का भय कुछ नहीं है। हे विप्रेन्द्र, यह मेरा वचन सत्य है मिथ्या नहीं जानना यह वचन [वात्स्यायन संहिता] का है ॥ ७ ॥

पुनः पद्म पुराणे, पातालखण्डे, अध्याय ॥ ५० ॥
यज्ञब्रत तपोदानं सांगं नैव कलौयुगे।
गंगा स्नानं हरे र्नाम निर पायमिदं द्वयम् ॥

अर्थात् यज्ञ, ब्रत, तप, दान संगोपांग कलियुग में नही है कलियुगमें तो उपाय से रहित एक गंगा स्नान दूसरा भगवत् का नाम बस यही दोई साधन है। इत्यादि बहुत कहा है।

कालनेमि कलि कपट निधानू। नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥

अर्थ—हेशिष्य, अब श्रीगोस्वामीजी कलियुग को कपटी की उपमा देकर के वर्णन करते हैं कि कालनेमि राक्षस के समान कलियुग कपट के निधानू नाम स्थान है तिनको मारने के वास्ते रामनाम कैसा है कि सुमति नाम सुन्दर बुद्धिवाले समरथ नाम पराक्रमी हनुमान् जी हैं। (प्रश्न) हेस्वामीजी, इहां पर सब कपटियों को छोड़कर कालनेमि ही की उपमा क्यों दी सो कहिये। (उत्तर) हे शिष्य, इसका हेतु यह है कालनेमि को तत्काल ही हनुमान जी ने मारा है दूसरे नाम को हनुमान् जी के समान बली दूसरा कोई नहीं है यह बात सर्वत्र सिद्ध है इससे इन दूनों की उपमादी। (प्रश्न) हे स्वामीजी, इहाँ पर सुमति क्योंकहा, समर्थ कहा सो ठीक काहे से कि विनापराक्रम के मारना असंभव है परन्तु सुमति विशेषण देने का क्या हेतु है सो कृपा करके कहिये। (उत्तर)हे शिष्यसुमति कहनेका भाव यहहै कि कालनेमिने हनुमान्जी को मोहने

के वास्ते कपट किया रहा। यथा (राक्षस कपट वेष तहँ सोहा। मायापति दूतहिं चहमोहा) इत्यादि कहा है सो हनुमान्‌जी ऐसे बुद्धिमान् हैं कि कपटी कालनेमि के कपट में नहीं भूले काहे से कि चतुर हैं कपटी के फेर में तो मूर्ख लोगही भूलते हैं। यथा (तुलसी देखि सुवेष भूलहिं मूढ़ न चतुर नर) इत्यादि कहा है इससे सुमति कहा अथवा कालनेमिका कपट हनुमान् जी ने जान लिया है इससे सुमति कहा। (प्रश्न] हे स्वामीजी, कपट तो अप्सरा के कहने से जाना है यथा—(मुनि न होइ यह निशिचर घोरा। मानहु बचन सत्य कपि मोरा] इत्यादि कहा है तब जाना है। उत्तर—हेशिष्य, अप्सरा के कहने से जाना है सो सही है परन्तु जाने हैं प्रथम ही जो कहो कैसे जाने हैं तो सुनो जाने है ऐसे कि, जाइ पवन सुत नायउ माथा। लाग सो कहै राम गुन गाथा॥ होत महा रन रावण रामहिं। जितिहहिं रामु न संशय यामहिं॥ इत्यादि कहा। हे शिष्य, देखो इहां पर विना प्रश्न किये रामगुण अथवा ज्ञान वैराग्यादि कोई विषय कहना यह शास्त्र और महात्मनकी मर्य्यादा नहीं है। यथा (ना पृष्टः कस्यचिद्ब्रूयात्) इत्यादि शास्त्र की आज्ञा है कि बिना बूझे उत्तर नहीं देना यह सर्वत्र प्रमाण है विना प्रश्नोत्तरका कोई ग्रन्थ नहीं है सो कालनेमिने विना बूझे ही रामगुण कहा इस से हनुमान्‌जी ने जानलिया कि कोई धूर्त्त है साधु नहीं है जो साधु होता तो ऐसा कभी नहीं कहता। पुनः-यहां भये मैं देखौं भाई। ज्ञानदृष्टि बल मोहि अधिकाई इत्यादि कहा इससे भी जान लिया कि महात्मा नहीं है काहे से कि साधु लोग ऐसा कहां कह सकते हैं कि ज्ञान दृष्टिका बल मेरे को अधिक है इससे निश्चय कोई पाखण्डी है परन्तु हनुमान्‌जी बोले नहीं केवल जल मांगा। यथा—मांगा जलतेहि दीन्ह कमण्डल। तब हनुमानजी ने विचार किया कि दूसरे के पात्रमें जल पीना शास्त्र में दोष है ऐसा विचार कर बोले। (कइ कपि नहिं अघाऊँ थोरे जल) तव कालनेमि बोला कि—सर मज्जन करि आतुर आवहु। दीक्षा देउ ज्ञान जेहि पावहु-इत्यादि कहा तब हनुमान जी ने ठीक २ जान लिया कि महात्मा नहीं है काहे से कि साधु महात्मा लोग विना अधिकारी देखे और विना प्रश्न किये वेदान्तार्थ ज्ञान दीक्षा कभी भी नही दे सकते। यथा प्रमाण गीतायाम्—

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ॥
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥३१६॥

इत्यादि प्रमाणसे वेदार्थ रहस्यप्रश्न और सेवकाई करनेही से होना उचित है दूसरे वेदशास्त्र की ऐसी भी आज्ञा है कि (नासंवत्सरवासिने प्रब्रूयात्) अर्थात् विना एक वर्ष पर्यन्त सेवा करवाये और परीक्षा लिये ज्ञानोपदेश करना उचित नहीं इसी प्रकारके बहुत बचन हैं इससे कुछ दिन सेवा करनी चाहिये और परीक्षा लेनी चाहिये तब शिष्य करना चाहिये और इन्होंने तो कलियुगियागुरु के समान जैसे कोई अहीर गड़ेरिया मिला तहां झटपट जनेऊ डारके कान फूकदिया तैसेही अपनी तरफ से ज्ञानदीक्षा देता है इससे पाखण्डी है। हे शिष्य, इसीप्रकार के तीनो युक्तियों से हनुमान्जी ने जाना है इससे सुमति कहा ऐसे ही प्रसंग कपटी मुनि और भानुप्रताप राजा का जानना चाहिये तब ही तो गोस्वामीजी ने मूर्ख कहा कि—तुलसी देखि सुवेष भूलहि मूढ़ न चतुरनर। इत्यादि कहासे कि पाखण्डी लोग साधु का रूप तो बनालेते हैं सही कर परन्तु साधु का बोल चालस्वभाव वृत्ति कहां से ले आवैंगे इससे बोल चाल में चतुर लोग जान लेते हैं काहेसे कि साधुका बोल चाल कपट रहित है और दुष्टों का बोलचाल दंभभरा रहता इसी से कहा है कि—उघरहि अन्त न होहिं निबाहू। कालनेमि जिमि रावण राहू ॥ इत्यादि कहा है। हे शिष्य, इस से यह दिखाया कि कलियुग कैसा कपटी और धूर्त है कि जितने शुभाचरण हैं अर्थात् ज्ञान वैराग्य योग जप तप सन्ध्यातर्पण सो सब ग्रसलिये हैं। यथा (कलिमल ग्रसेउ धरम सब गुप्तभये सद्ग्रन्थ) इत्यादि कहा है इससे महाकपटी है। पुनः—जेहि कलियुगने प्रवेश होते ही समय में बड़े भारी धर्मात्मा राजा परीक्षितजी तिनको कपटही कर के नाश कर दिया सोई कपटी कलियुगने अपने राज्य में श्रीराम नाम का भारी प्रताप देखके विचार कियाकि मैंने तो सब धर्म को ग्रसलिया परन्तु एक रामनाम का प्रताप नहीं ग्रसा यह बिचारि के रामनाम ग्रसने हेतु झटपट कपटीका रूप धारण किया, परन्तु श्रीरामनाम ऐसे चतुर बलवान हैं कि झट कलियुग का कपट जानलिये ताते कलियुग के दावमें नहीं आये और कलियुगही को नाश करदिये। भाव श्रीरामनाम कलियुग से सबभांति प्रबल है। (प्रश्न) हे स्वामीजो, इहांपर प्रथम कलियुग को कालनेमि कहा पीछे नाम को हनुमान्

कहा सो क्यों [उत्तर] हे शिष्य, इसका हेतु यह है कि जो कोई श्रीराम नामके ऊपर प्रथम अपना बल छल करते हैं उनको करलेने देते हैं तब पीछे उनको दण्ड देते हैं, इससे कालनेमि कलि कपट निधानु प्रथम कहा, पीछे नाम सुमति समरथ हनुमान कहा भाव अपने पर जो कोई उपाधि करते हैं तो कम रिसाते हैं और दासोंके ऊपर जो उपाधि करते हैं तिनपर बहुत क्रोध करते हैं । यथा—सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ । निज अपराध रिसाहि न काऊ ॥ जो अपराध भगत कर करई । राम रोष पावक सो जरई ॥ इत्यादि कहा है सो गोस्वामीजी आगे दिखाते हैं ॥ ८ ॥

12 दोहा—रामनाम नरकेसरी, कनककसिपु कलिकाल ।
जापक जन प्रहलाद जिमी, पालहिं दलि सुरसाल ॥ ९ ॥

अर्थ—हे शिष्य, प्रथम तो श्रीगोस्वामीजीने कलियुग को कपटी की उपमा देकरके वर्णं किया और रामनाम को सुमति समरथ हनुमान्जीकी उपमा दी सो केवल रामनामकी प्रबलता दिखाने के वास्ते कहा कुछ नाम जापक जनके रक्षार्थ नहीं कहा और अब जो कहते हैं सो नाम जापक जनके रक्षार्थ पुनः रामनाम को और कलियुग को महाबली की उपमा देकरके वर्णन करते हैं ! श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि रामनाम जोहै सोईतो नरकेसरीनाम नृसिंहजीहैं और कलिकाल जो है सो महादुःखदायी कनककशिपु नाम हिरण्य-कशिपु है और जापक जन अर्थात् रामनामके जो जपने वाले जन नाम दास हैं सोई तो प्रहलादजी हैं जिमो नाम जैसे तिनको सुर जो देवता हैं तिनको शाल नाम दुःखदायी जो हिरण्यकशिपु रूप कलिकाल है तिनको नृसिंहरूप राम नामने दलि नाम नाश करके पालिहि नाम पालन करैंगे इति भाव । जैसे महा दुःखदायी हिरण्यकशिपु कि जिसने प्रह्लादजी को क्लेश देने में एक भी कसर न राखी परन्तु रामनाम के प्रताप से प्रह्लादजी को कुछ न भया पीछे आप ही भगवत् ने नृसिंहावतार धारण करके संपूर्ण देवताओंके दुःखदायी महाप्रबल हिरण्यकशिपुको मारकर जनप्रह्लाद की रक्षा की तैसे ही इहांपर रामनाम जो है सोई तो महाक्रोधी नृसिंहजीहैं और कलियुगजो है सोई तो महाबली हिरण्यकशिपु हैऔर ज्ञान वैराग्य योग जप तप संध्या गायत्री प्राणायाम तीर्थ व्रत पूजा पाठ सोई तो देवता लोगहैं तिन को वशकर राक्खा है और दुःख देता है भाव जो कोई करता है तिनको नानाप्रकारके विघ्न करदेना इति सुरशाल, और रामनाम

के जो जपने वाले जन हैं सोई तो इहां पर प्रह्लादजी हैं तिनको हिरण्यकशिपुरूप कलिकाल नाना प्रकार के दुःख देतेहैं अर्थात नाम जपने के समयमें नाना प्रकारके ढंग गढ़ोना मनोर्थ होना आलस आना निद्रा लगना ऐसा प्रवल हिरण्यकशिपु रूप दुष्टकलियुग को नृसिहरूप श्रीरामनाम दलिनाम नाश करिके प्रह्लाद रूप जापक जनको पालन करैंगे भाव किसी प्रकार का नाम जापका जनको दुःख नहीं होसकता है ताते निर्भय होकर रामनाम जपो यह उपदेश भया। हे शिष्य, इहां प्रथम रामनाम नरकेसरी कहा पीछे कनककशिपु कलिकाल कहा इससे यह दिखायो नाम जापक जनको जहां कोई दुःख देताहै तहां प्रथमही रामनाम महाक्रोधी नृसिहजी होकरके रक्षार्थ तैयार हैं काहेसे कि दासके अपराध नहीं सहसकते हैं इससे प्रथम कहा। हे शिष्य, निर्द्वन्द्व होकर श्रीरामनाम जपो कोई बातका भय मतकरो काहेसे कि शिरपर महावली रामनाम नृसिहरूप रक्षक खडे हैं फिर कलियुगका क्या डर है इहां पर्यंत सत-पंच चौपाई मनोहरहै काहेसे कि कलियुगमें एकनामही सारहै। यथाप्रमाण—अन्त समय में गोस्वामीजीने सब काशीवासियोंको उपदेश किया है यथा ॥६॥

कवित्त—अलप तो अवधि जीव तामें बहु सोच पोच करिवेको बहुत हैं काह काह कीजिये। पार न पुरानहु को वेदहु को अन्त नाहिं वानी तो अनेक चित्त कहँ कहँ दीजिये॥ काव्य कीकला अनंत छंदको प्रबंध बहु रागतो रसीले रस कहँ कहँ पीजिये। सब बातनकी एकबात तुलसी बताय जात जन्म जौं। सुधारा चाहौ रामनाम लीजिये।

भाँय कुभाँय अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसिदसहूँ॥ १॥
रामनाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा॥ २॥
संतत जपत शंभु अविनाशी। शिव भगवान ज्ञानगुनराशी॥ ३॥
आकर चारि जीव जग अहहीं। काशी मरत परम पद लहहीं॥ ४॥
सोपि राममहिमा मुनिराया। शिव उपदेश करत करि दाया॥ ५॥
तुम पुनि रामनाम दिनराती। सादर जपहु अनंग अराती॥ ६॥
जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा। तेहि किमि कहिय विमोह प्रसंगा॥ ७॥
काशीमरत जंतु अवलोकी। जासु नाम बल करउं विशोकी॥ ८॥
विवसहु जासु नाम नर कहहीं। जन्म अनेक रचित अघ दहहीं॥ ९॥
सादर सुमिरन जो नर करहीं। भववारिधि गोपद इव तरहीं॥१०॥

जाकर नाम सुनत शुभ होई। मोरें गृह आवा प्रभु सोई॥ ११॥
जिन्हकर नाम लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं॥ १२॥
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिन्धु अपारा॥ १३॥
रामनाम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हइन पापपुंज समुहाहीं॥ १४॥
उलटा नाम जपत जग जाना। बाल्मीकि भए ब्रह्म समाना॥ १५॥
बारकराम कहत जग जेऊ। होत तरन तारन नर तेऊ॥ १६॥
जासु नाम पावक अघतूला। सुमिरत सकल सुमंल मूला॥ १७॥
जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमौ मुकुति होय श्रुतिगावा॥ १८॥
जद्यपि प्रभुके नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एकते एका॥ १९॥
राम सकल नामन्हते अधिका। होउ नाथ अघखगगनबधिका॥ २०॥
जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं। अन्त रामकहिं आवत नाहीं॥ २१॥
जासु नाम बल शंकर काशी। देत सबहिं समगति अविनाशी॥ २२॥
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं॥ २३॥
जासुनाम जपि सुनहु भवानी। भवबंधन काटहिं नरज्ञानी॥ २४॥
रामनाम विनु गिरा न सोहा। देखु विचारि त्यागि मदमोहा॥ २५॥
जासु नाम त्रयतापनसावन। सोइप्रभु प्रगट समुभु जियरावन॥ २६॥
तीरथ अमित कोटिसमपावन। नाम अखिल अघपूगनसावन॥ २७॥

छन्द पाई न केहिगति पतितपावन रामभजि सुनु सटमना। गनिका अजामिल व्याध गीध गजादि खलतारे घना॥ आभीर जमन किरात खसश्वपचादि अति अघरूपजे। कहि नाम बारक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते॥ रघुवंश भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं। कलिमल मनोमल धोई विनुश्रम रामधाम सिधावहीं॥ सतपंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उरधरे। दारुन अविद्या पंचजनित विकार श्रीरघुवर हरे॥ सुंदर सुजान करुनानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो। सो एक राम अकाम हित निर्वान प्रद सम आन को॥ जाकी कृपा लवलेश ते मतिमन्द तुलसीदास हूँ। पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥

अर्थ—हे शिष्य, श्रीगोस्वामीजी कहते हैं कि सतपंच, अर्थात् (सत्यपंच) चौपाई मनोहर जानि के अर्थात् नाम बंदना नवो दोहा वाली जो परम सिद्धांत की चौपाई हैं तिनको जो जन जानिके भाव नवो दोहाका सिद्धांत श्रीरामनाम जो

नर जानि के अपने हृदय में धारण करें तिनके दारुण नाम महा कठिन जो पंच अविद्या हैं अर्थात् तम १, मोह २, महामोह ३, तामिस्र ४, अंधतामिस्र ५, इति पंच पर्वा अविद्या करके जो जनित नाम उत्पन्न हैं नाना प्रकार के विकार सो श्री रघुवर रामजी हरलेंगे भाव सत्यपंच चौपाई पाँचहुँ अविद्या करके जनित विकार को हर लेंगे इससे इहांपर सतपंच चौपाई भी कहा और पंचअविद्या भी कहा। अथवा हे शिष्य, दूसरा अर्थ यह है कि (सतपंच) नाम एक सौ पांच चौपाई मनोहर जो जानि के धारण करे उनके पंच जनित बिकार को श्रीरामजी हर लेंगे। (प्रश्न) हे स्वामीजी, १०५ चौपाई कौन हैं सो कहिए। (उत्तर) हे शिष्य, नामहीं सम्बन्धी १०५ चौपाई हैं दूसरी नहीं जैसे कि नाम वंदना के ऊपर में ६ चौपाई हैं और नाम वंदना में ७२ चौपाई हैं और सातों काण्ड की २७ चौपाई हैं यह सब मिला कर १०५ चौपाई होती हैं जिनको इस वातमें संदेह हो सो रामायणजी को एक तरफ से देखकर मिला लेवें (प्रश्न) हे स्वामी जी, मनोहर कहने का भाव क्या है सो कृपा करके कहिए। (उत्तर) हे शिष्य, मनोहर कहनेका भाव यह है कि नाम वंदना में श्रीगोस्वामीजी ने कहा है कि, [आखर मधुर मनोर दोऊ] इत्यादि रामनाम दोऊ अक्षरों को मनोहर कहा है और रामनामहीं दोऊ अक्षर को नव दोहा पर्यन्त वंदना करके विधिपूर्वक प्रतिपादन किया है इससे नवौ दोहा की चौपाई मनोहर हैं इससे मनोहर कहा। हे शिष्य, यह नवौ दोहा की चौपाई सम्बत् १६६१ की लिखी रामायण से शोधी गई है ताते पाठ में कोई प्रकार का सन्देह नहीं करना बहुत शुद्ध पाठ है और इस वेदार्थप्रकाश रामायण को एकान्त में बैठ करके सावधान होकर देखोकि आदि कवि श्रीवाल्मीकिजी के अवतार श्रीगोस्वामि तुलसीदास जी ने क्या अपूर्व सिद्धांत कहा है इससे परे सिद्धांत सब कथनीयमात्र हैं जो मूर्ख इस परम सिद्धांत से रहित है उसका संग कभी भूलकर भी नहीं करना यह मेरा बार बार उपदेश है। हे शिष्य, यही सिद्धांत सब संतका है सो पूर्व ही में कह आये हैं और इसी पर सिद्धांत को श्रीकृष्णचन्द्रजी ने परम कृपापात्र सखा अर्जुनजी को कहाहै सो विस्तार पूर्वक [आदिपुराण] में प्रसिद्ध है. और जैसा नाम माहात्म्य श्री गोस्वामीजी ने कहा है तैसे ही श्री कृष्णचंद्रजी ने भी कहा है सो स्तोत्र यह है। यथा आदिपुराणे श्री कृष्णउवाच।

रामनाम सदा ग्रही रामनामप्रियः सदा ॥ भक्तिस्तस्मै प्रदातव्या नच मुक्तिः कदाचन ॥ १ ॥ गायन्ति रामनामानि वैष्णवाश्च युगे युगे ॥ त्यक्त्वा च सर्वकर्माणि धर्माणि च कपिध्वज ॥ २ ॥ रामनामैव नामैव रामनामैव केवलम् ॥ गतिस्तेषां गतिस्तेषां गतिस्तेषां सुनिश्चितम् ॥ ३ ॥ श्रद्धया हेलया नाम वदन्ति मनुजा भुवि ॥ तेषां नास्ति भयं पार्थ रामनामप्रसादतः ॥ ४ ॥ रामनामरता यत्र गच्छन्ति प्रेमसंप्लुताः ॥ भक्तानामनुगच्छन्ति मुक्तयः स्तुतिभिस्सह ॥ ५ ॥ मानवा ये सुधासारं रामनाम जपन्ति हि ॥ ते धन्या मृत्युसंत्रासरहिता रामबल्लभाः ॥६॥ नामैव परमा मुक्तिर्नामैव परमा गतिः ॥ नामैव परमा शान्तिर्नामैव परमा मतिः ॥७॥ नामैव परमा भक्तिर्नामैव परमा धृतिः ॥ नामैव परमा प्रीतिर्नामैव परमा स्मृतिः ॥८॥ नामैव परमं पुण्यं नामैव परमं तपः ॥ नामैव परमो धर्मो नामैव परमो गुरुः ॥९॥ नामैव परमं ज्ञानं नामैव चाखिलं जगत् ॥ नामैव जीवनं जन्तोर्नामैव विपुलं धनम् ॥ १० ॥ नामैव जगतां सत्यं नामैव जगतां प्रियम् ॥ नामैव जगतां ध्यानं नामैव जगतां परम् ॥११॥ नामैव शरणं जन्तोर्नामैव जगतां गुरुः ॥ नामैव जगतां बीजं नामैव पावनं परम् ॥ १२ ॥ रामनामरता ये च ते वै श्रीरामभावुकाः ॥ तेषां संदर्शनादेव भवेद्भक्तिरसात्मिका ॥ कामादिगुणसंयुक्ता नाममात्रैकबान्धवाः ॥ प्रीतिं कुर्वन्ति ते पार्थ न तथा जितषड्गुणाः ॥ १४ ॥ तं देशं पतितं मन्ये यत्र नास्ति सुवैष्णवः ॥ रामनामपरो नित्यं परानन्दविवर्द्धनः ॥ १५ ॥ रामनामरता जीवा न पतन्ति कदाचन ॥ इन्द्राद्यास्संपतन्त्यन्ते तथा चान्येऽधिकारिणः ॥ १६ ॥ नामस्मरणमात्रेण प्राणान्मुञ्चन्ति ये नराः ॥ फलं तेषां न पश्यामि भजामि तांश्च पार्थिव ॥ २७ ॥ नामस्मरणमात्रेण नरो याति निरापदम् ॥ ये स्मरन्ति सदा रामं तेषां जाने न किं फलम् ॥ २८ ॥ नामैव जगतां बन्धुर्नामैव जगतां प्रभुः ॥ नामैव जगतां जन्म नामैव सचराचरम् ॥ ९९ ॥ नामैव धार्य्यते विश्वं नामैव पाल्यते जगत् । नामैव नीयते नाम नामैव भुञ्जते फलम् ॥ २० ॥ नामैव गृह्यते नाम परं गोप्यं परात्परम् ॥ नामैव कार्य्यते कर्म नामैव नीयते फलम् ॥ २१ ॥ नामैव चांगशास्त्राणां तात्पर्य्यार्थवरं मतम् ॥ नामैव वेदसारांशं सिद्धान्तं सर्वदा शिवम् ॥ २२ ॥ नाम्नैव नीयते मेधा परे ब्रह्मणि निश्चला । नाम्नैव चंचलं चित्तं मनस्तस्मिन्प्रलीयते ॥ २३ ॥ श्रीरामस्मरणेनैव नरो याति परां गतिम् । सत्यं सत्यं सदा सत्यं न जाने नामजं फलम् ॥ २४ ॥ रामनाम प्रभावोऽयं सर्वोत्तम उदाहृतः । समासेन तथा पार्थ वक्ष्येऽहं तव हेतवे ॥ २५ ॥

न नाम सदृशं ध्यानं न नाम सदृशो जपः। न नाम सदृशस्त्यागो न नाम सदृशी गतिः॥ २६॥ न नाम सदृशं तीर्थं न नाम सदृशं तपः। न नाम सदृशं कर्म न नाम सदृशः समः॥ २७॥ न नाम सदृशी मुक्तिर्न नाम सदृशः प्रभुः। ये गृह्णन्ति सदा नाम त एव जितषड्गुणाः॥ २८॥ कुर्वन्वा कारयन्वापि रामनाम जपंस्तथा। नीत्वा कुलसहस्राणि परं धामाधिगच्छति॥ २६॥ नाम्नैव नीयते पुण्यं नाम्नैव नीयते तपः। नाम्नैव नीयते धर्म्मो जगदेतच्चराचरम्॥ ३०॥ रामनामप्रभावेण सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्। विश्वासेनैव श्रीरामनाम जाप्यं सदा बुधैः॥ ३१॥ शान्तो दान्तः क्षमा शीलो रामनाम परायणः। असंख्यकुलजानां वै तारणे सर्वदा क्षमः॥ ३२॥ ये नामयुक्ता विचरन्ति भूमौ त्यक्त्वार्थकामान्विषयांश्च भोगान्। तेषां च भक्तिः परमा च निष्ठा सदैव सुभगा भवन्ति॥ ३३॥ स्मरन्ति रामनामानि त्यक्त्वा कर्माणि चाखिलम्॥ सपूतः सर्वपापेभ्यः पद्मपत्रमिवाम्भसा॥ ३४॥ त्यक्त्वा श्रीरामनामानि कर्म कुर्वन्ति येऽधमाः॥ तेषां कर्माणि बंधाय न सुखाय कदाचन॥ ३५॥ यस्य चेतसि श्रीरामनाम मांगलिकं परम्॥ सजित्वा सकलाँल्लोकान् परंधाम परिव्रजेत॥ ३६॥ नामयुक्ता जनाः पार्थ जात्यन्तरसमन्विताः॥ प्रीतिं कुर्वन्ति श्रीराम न तथा नष्टषड्गुणाः॥ ३७॥ गायन्ति रामनामानि सततं ये जना भुवि॥ नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यः पुनः पुनः॥ ३८॥ रामनामाश्रया ये वै भावुकाः प्रेमसंप्लुताः। ते कृतार्थास्सदा तात सत्यं सत्यं नचान्यथा॥ ३६॥ इति विपितं तात स्वया बुद्ध्या विधारय। रामनामप्रसादेन सर्वं सुखमवाप्स्यसि॥४०॥ तां नामगाथां विचरन्ति भूमौ गीत्वा सदा ते पुरुषाः सुधन्याः। ये नामगाथापरतत्त्वनिष्ठास्ते धन्यधन्या भुवि कृत्यपुण्याः॥ ४१॥ रामनाम जनासक्तो रामनाम जनप्रियः। स पूतो निर्विकल्पश्च सर्वपापबहिर्मुखः॥ ४२॥ रामनामप्रसंगेन ये जपन्तीह चार्ज्जुन। तेऽपिध्वस्ताखिलाघौघा यान्ति रामास्पदं परम्॥ ४३॥ घोषयेन्नामनिर्वाणं कारणं यस्त्वनन्यधीः। तस्य पुण्यफलं पार्थ वक्तुं कैः शक्यते भुवि॥ ४४॥ तस्मान्नामानि कौन्तेय भजस्व दृढचेतसा। रामनामसमायुक्तास्ते मे प्रियतमाः सदा॥ ४५॥ सततं नाम गायन्ति विनिर्विण्णेन चेतसा। तेषांमध्ये सहावासः श्रीरामस्य विशेषतः॥४६॥ श्रद्धया हेलया वापि गायन्ति नाम मंगलम्। तेषां मध्ये परं नाम वसेन्नित्यं न संशयः॥ ४७॥ न तत्र विस्मयःकार्य्यो भवता रामनाम्नि च। सत्यं वदामि ते

पार्थ प्रियाय मम चात्मने ॥ ४८ ॥ यन्नामस्मरतो नित्यं महाद्यज्ञानबन्धनम् ॥ छिद्यते चाश्रमेणैव तमहं राघवं भजे ॥ ४९ ॥ श्रद्धया परया युक्तो रामनामपरायणः। करोति जानकीजानिस्तस्य चिंतां पुनः पुनः ॥ ५० ॥ अशेषताकैर्युक्तः सर्वदोषपरिप्लुतः ॥ सपूतःसर्वपापेभ्यो यस्य नाम परंतपः ॥५१॥ रामनाम सदा प्रेम्णा संस्मरामि जगद्गुरुम् ॥ क्षणं न विस्मृतिं याति सत्यंसत्यं वचोमम॥५२॥ परनिन्दा समायुक्तःपरदारपरायणः ॥ सपूतःसर्वपापेभ्योयस्य नामपरं तप ॥५३॥ परहिंसासमायुक्तो लोभ मोहसमाकुलः ॥सपूतः सर्वपापेभ्यो यस्य नाम्नि सदा रुचिः ॥ ५४ ॥ अशेषपातकैर्व्याप्ताःस्वधर्म्मपरिवर्जिताः। एते तरन्ति पापिष्ठा रामनाम प्रसादतः ॥ ५५ ॥ तिष्ठन्ति रामनामानि तिष्ठन्ति वदनानि च। तथापि नरके मूढाः पतन्तीत्यद्भुतं महत् ॥ ५६ ॥ गायन्ति रामनामानि कर्म्म कुर्वन्ति चाखिलम्। स याति परम स्थानं रामेणसह मोदते ॥ ५७ ॥ विसृज्य रामनामानि कर्म कुर्वन्ति चाखिलम्। किमाश्चर्य्यं किमाश्चर्य्यं किमाश्चर्य्यं धनंजय ॥ ५८ ॥ शान्तो दान्तः क्षमा शीलो रामनामार्थचिन्तकः। तस्य सद्गुणसंख्यानं वक्तुंनैव क्षमोऽप्यहम् ॥ ५९ ॥ विसृज्य रामनामानि कर्म कुर्वन्ति ये नराः। अप्राप्य सद्गतिं पार्थ भ्रमित्वा कर्मवर्त्मसु ॥ ६० ॥ सर्वयोनिषु कौन्तेयभ्रमति ते नराऽधमाः विसृज्य रामनामानि मायामोहितचेतसः ॥६१॥ यदृच्छया तु श्रीराम नाम गृह्णन्ति सादरम् ॥ सपूतः सर्वपापेभ्यो रामनामप्रसादतः ॥६२॥ येन केन प्रकारेण नाममात्रैकजल्पकाः। श्रमं विनैव गच्छन्ति परेधाम्नि समादरात् ॥६३॥ नामयुक्तान् जनान् दृष्ट्वा यःपश्येत्सादरं सखे ॥ स याति परमं स्थानं रामेण सह मोदते ॥ ६४ ॥ नामयुक्तान् जनान् दृष्ट्वा प्रणमंतिच ये नराः। ते पूताः सर्वपापेभ्यः कर्मणा तेन हेतुना ॥ नामयुक्तान् जनान् दृष्ट्वा स्निग्धो भवति यो नरः ॥ सयाति परमं स्थानं परमानन्दसागरम् ॥ ६६ ॥ गीत्वा च राम नामानि विचरंद्रामसन्निधौ। इदं ब्रवीमि ते सत्यं तस्पवश्यो जगत्पतिः ॥ ६७ ॥ गीत्वा च रामनामानि ये रुदंति नरोत्तमाः ॥ तेषां हरिः परिक्रीतो परमेशेन संयुतः ॥ ६८ ॥ गीत्वा च रामनामेति पतन्ति भुवि ये नराः ॥ ते वै धन्यतमा लोके वैष्णवानां वरो मतः ॥ ६९ ॥ यदृच्छया न गृह्णन्ति रामनामेति मंगलम् ॥ अदृश्यास्ते जनाः पार्थ दृष्टिमात्रेण वर्जिताः ॥ ७० ॥ स्वप्नेऽपि रामनाम्नस्तु येषामुच्चारणं नहि ॥ भाग्यहीनास्तु ते नीचाः पापिनामग्रगामिनः ॥ ७१ ॥ भिक्षोपायेन गृह्णन्ति रामनाम परेश्वरम् ॥ लोकाचारे तु

निरतास्ते वै पाखण्डिनो ध्रुवम् ॥ ७२ ॥ रामनामजपाज्जीवा अनायासेन संसृतिम् ॥ तरन्त्येव तरन्त्येव तरन्त्येव सुनिश्चितम् ॥ ७३ ॥

तत्रवाऽर्जुनवाक्यं श्रीकृष्णं प्रति।

भवत्येव भवत्येव भवत्येव महामते ॥ सर्वपापपरिक्षीणास्तरन्तिनामबांधवाः ॥ ७४ ॥ नमोऽस्तु नामरूपाय नमोऽस्तु नामजल्पिने ॥ नमोऽस्तु नामसाध्याय वेदवेद्याय शाश्वते ॥ ७५ ॥ नमोऽस्तु नामनित्याय नमो नाम प्रभाविने ॥ नमोस्तु नामशुद्धाय नमो नाममयाय च ॥ ७६ ॥ श्रीरामनाममाहात्म्यं यः पठेच्छ्रद्धयान्वितः ॥ स याति परमं स्थानं रामनामप्रसादतः॥७७॥ रामनामार्थमुत्कृष्टं पवित्रं पावनं परम् ये ध्यायन्ति सदा स्नेहात्ते कृतार्था जगत्त्रये ॥ ७८ ॥

इति आदिपुराणे श्रीकृष्णाऽर्जुनसंवादे श्रीरामनाममाहात्म्यं संपूर्णम्।

दोहा--यह वेदार्थप्रकाश नित, कहहिं सुनहिं करि नेम।
रामनाम निर्वाणप्रद, अवशि होइ तेहि प्रेम ॥ १ ॥
रामायण तुलसीकृत, अगम अगाध अपार।
तेहि के सार विचारयुत, कियो जगत परचार ॥ २ ॥
सज्जन सुमति विचारयुत. गुनि लेहु मनमाहिं।
हैं यानहिं सतपंच मत, श्रीरामायण माहिं ॥ ३ ॥

इति श्रीवेदार्थप्रकाशरामायण वैभवप्रकाशिका टीकासहितः समाप्तः।

श्रीसीतारामाऽर्पणमस्तु।
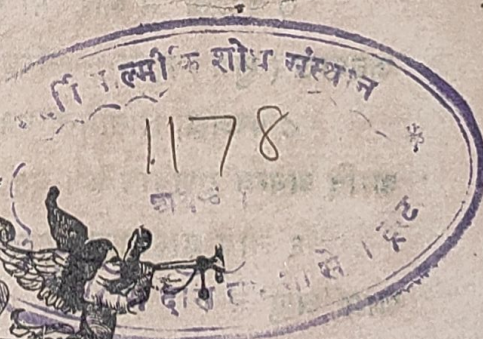
श्रीमते भगवते रामानन्दायनमः ।

तत्रादौ मंगलाचरणम् ।

भाष्यं येन सुभाषितं मतिमता वेदान्त विद्या विदा,
विद्याम्भोधि रवातरि त्रिभुवना चार्य्येण ये नात्रसः ।
मिथ्या ब्रह्म वद प्रहार विकल श्रुत्यंग रक्षापटू,
रामानन्द यतिः सदा विजयते योगीन्द्र चूडा मणिः ॥१॥

श्री विशिष्टाद्वैत सम्प्रदाय के

मुख्य सिद्धान्तों का संग्रह ।

१ चित्, अचित्, और ईश्वर ये तीन मूल तत्व हैं।

२ "चित" जीव को कहते हैं । "अचित्" प्रकृति का नाम है । इसी प्रकृति का नामान्तर मात्र है "माया" "अविद्या" इत्यादि ।

३ तीनों तत्व सत्य और नित्य हैं।

४ सर्व जगत् के जन्म स्थिति संहार आदि का कारण परब्रह्म है।

५ ब्रह्म ही जगत् का 'उपादान कारण' और निमित्त कारण है । सर्व कार्य के दो कारण होते हैं, (१] उपादान कारण और (२) निमित्त कारण । मिटीके घड़े का उपादान कारण मिटी है, और निमित्त कारणकुम्हार ।

६ जीव, प्राकृत पंचभूतादि रूपी पदार्थ, और ब्रह्म इन तीनों पदार्थों के समुदाय ही को जगत् कहते हैं।

७ परब्रह्म में कोई भी दुष्ट गुण (हेय गुण) नहीं हैं और वह सर्व कल्याण (शुभ) गुणों से परिपूर्ण है।

८ परब्रह्म, ज्ञानानन्द स्वरूप है। वह ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य, तेज आदि अनन्त गुणवान् है। वह सर्वज्ञ है, सर्व शक्ति है, और सर्व व्यापी है।

९ जीव ज्ञानानन्द स्वरूप हैं, ज्ञान गुणवान् हैं, अनन्त हैं । उनका परि-णाम 'अणु' है।

१० जीव अनादि अविद्या (अज्ञान) करके संचित जो पुण्य पाप रूप कर्म हैं, उन कर्मों के कारण प्रकृति सम्बन्ध (शरीरादि सम्बन्ध) रूप संसार को प्राप्त होते हैं। उनका स्वाभाविक स्वरूप ज्ञानानन्दात्मक है । प्रकृति के

सम्बन्ध से उसका स्वाभाविक स्वरूप छिप ऐहित (आच्छादित) होजाता है।

११ प्रकृति सत्व रजस्तमोगुण मयी त्रिगुणात्मिका है। वह सर्वदा परिणाम को पहुँचती हुई रहती है। नाना विकारों को यह उत्पन्न करती है। मूल प्रकृति एक और नित्या है।

१२ असत् (अविद्यमान) पदार्थ की उत्पत्ति नहीं होती। एक प्रकार की अवस्था से युक्त एक पदार्थ का अन्य प्रकार की अवस्था को प्राप्त होना ही उत्पत्ति कही जाती है। उसको छोड़कर अवस्थान्तर को प्राप्त होना उसका नाश है। मृत्तिका रूप एक बस्तु प्रथम पिण्डत्वावस्था युक्त रहती है. उस समय में वह पिण्ड कही जाती है। वही विद्यमान मृत्तिका भारी उदर गला आदि से युक्त घटत्वावस्थाको प्राप्त होती है, तब वही मृत्तिका घड़ा कही जाती है। वही मृत्तिका पुनश्च उस घटत्वावस्था का त्याग कर चुर्णत्वावस्था को प्राप्त होती है। यहां एकही मृत्तिका नाना अवस्थाओं को प्राप्त होती हुई दिखाई देती हैं। घड़े की उत्पत्ति मृत्तिका में अवस्थान्तर की प्राप्ति है, अर्थात् वही अवस्था उसकी उत्पत्ति है। उस घड़े का नाश चूर्णत्वावस्था को प्राप्त होना, अर्थात् चूर्णत्वावस्था ही है, ऐसेही अन्यत्र भी समझना चाहिये।

१३ सृष्टि के पूर्व प्रलय दशा में चित् (जीव) और अचित् (प्रकृति) दोनों ही सूक्ष्म अवस्था को प्राप्त रहती हैं। जैसा कि सृष्टि होने पर प्रकृति के पृथिवी जल आदि नाना नाम और रूप होते हैं, वैसे प्रलय दशा में नहीं रहते। जीवों की स्थिति भी ऐसीही समझना चाहिये। वही सूक्ष्मावस्था कारणावस्था कही जाती है। सृष्टि समय में इन दोनों को स्थूल अवस्था की प्राप्ति होती है, और नाना प्रकार के नाम होते हैं। इस प्रकार स्थूल अवस्थाको प्राप्त होनाही इनकी उत्पत्ति है। इसी स्थूल अवस्थाको कार्यावस्थाभी कहते हैं।

१४ परिणाम शीला प्रकृति का सूक्ष्म और स्थूल अवस्था को प्राप्त होना, मृत्तिका का पिण्डत्वावस्था और घटत्वावस्था को प्राप्त होने के तुल्य है। सूक्ष्मावस्था युक्त प्रकृति स्थूल रूप में परिणत होती है। जीव स्वरूप परिणाम रहित है। अतएव उसको स्थूलावस्था और सूक्ष्मावस्था परिणाम के कारण नहीं होती। किन्तु प्रलय दशा में जीव शरीरादि शून्य होने के कारण उसका ज्ञान संकुचित रहता है। सृष्टि काल में स्थूल शरीर प्राप्त होने का कारण ज्ञान का विकास होता है। बस, येही ज्ञान का संकोच और विकास जीव के सूक्ष्म और स्थूल अवस्था के कारण हैं। अर्थात संकुचित ज्ञानवान्

होना सूक्ष्मावस्था और विकसित ज्ञानवान् होना स्थूलावस्था है। इन्हीं दो अवस्थाओं के कारण जीवों में उत्पत्ति और विनाश का व्यवहार होता है जीव स्वरूप तो नित्य निर्विकार है।

१५ चिदचिदात्मक समस्त प्रपञ्च परब्रह्म के शरीर भूत हैं। जैसा कि पाञ्चभौतिक हस्त पादादि युक्त पिण्ड जीव का शरीर है, वैसाही चेतन और अचेतन परब्रह्म के शरीर हैं। शरीर के भीतर जीव की सत्ता से जैसे शरीर का धारण होता है वैसाही चेतन और अचेतन पदार्थों में परमात्मा की सत्ता से उनका धारण होता है। परब्रह्म सर्व पदार्थों में अन्तर्गत रहकर उनका नियम न धारण आदि करता है।

१६ उत्पत्ति और नाश अवस्था विशेष को प्राप्त होना ही है। (१२ वीं पेराग्राफ देखो) परब्रह्म में भी सृष्टि और प्रलय दशाओं में भिन्न भिन्न अवस्थायें होती हैं, प्रलय दशा में परब्रह्म सूक्ष्म अवस्था से युक्त प्रकृति और जीवों में अन्तर्यामी रहता है, सृष्टि दशा में स्थूल अवस्था से युक्त प्रकृति और जीवों में अन्तर्यामी रहता है। सूक्ष्मावस्था युक्त जीव और प्रकृति (चित् अचित्) के आत्मा होना एक अवस्था है और स्थूलावस्था युक्त जीव और प्रकृति के आत्मा होना एक अवस्था है। इनमें पहली कारणावस्था और दूसरी कार्यावस्था है। जैसा कि एकही मृत्तिका पिण्डत्वावस्था से युक्त रहती हुई कारण, और घटत्वावस्था से युक्त होकर कार्य कहलाती है, वैसाही परब्रह्म भी ऊपर कही हुई अवस्था से युक्त रहने पर कारण और दूसरी अवस्था से युक्त होकर कार्य होता है। अतएव ब्रह्म ही जगत् का कारण ब्रह्म ही जगत् है।

१७ स्थूल अवस्था से युक्त चित् (जीव) और अचित् (जड़ पदार्थ प्रकृति) ये दोनों परब्रह्म के शरीर हैं। (१५ वां पेराग्राफ देखो) इस प्रकार शरीर होने से ये परब्रह्म के विशेषण हैं, अर्थात् यहां पर इन दोनों पदार्थों का परब्रह्म के प्रति शरीर होना ही विशेषणत्व है। इन दोनों पदार्थों का परब्रह्म आत्मा है। अतएव इन दोनों विशेषणों (जीव और प्रकृति) से वह युक्त है, इस प्रकार विशेषणों से युक्त होना ' विशिष्टता, भी कही जाती है। इस कारण से परब्रह्म 'चिदचिद्विशिष्ट' कहा जाता है। इसका तात्पर्य—चित् और अचित् से युक्त होकर रहना ही है, अर्थात् चित् (जीव) और अचित् (प्रकृति) के साथ अन्तरात्मा होकर सम्बद्ध रहनाही परब्रह्म में चिदचिद्वैशिष्ट्य है। चित् और

अचित् की दो अवस्थायें अर्थात् सूक्ष्म और स्थूल अवस्था होना ऊपर वर्णित है। (१३ और १४ पेराग्राफ देखो) इन दोनों अवस्थाओं में वे दोनों पदार्थ परब्रह्म के शरीर हैं। अतएव परब्रह्म स्थूलावस्था युक्त चिदचिद्विशिष्ट (चिद चिच्छरीरक) और सूक्ष्मावस्था युक्त चिदचिद्विशिष्ट है। परब्रह्म एक है अतएव सिद्ध हुआ कि स्थूलावस्था युक्त चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म और सूक्ष्मावस्था युक्त चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म दोनों में अद्वैत-अभेद है। यह विशिष्टाद्वैत शब्द का अर्थ है।

१८ देव मनुष्य आदि नाना शरीरों में रहने पर भी जैसा जीवों पर शरीर गत दोषों का सम्बन्ध नहीं होता, वैसाही चिदचिदात्मक (जीव और प्रकृति) समस्त प्रपञ्चों से परब्रह्म अन्तर्यामी रूप से रहने पर भी उनके (जीव और जड़) दोषों से परब्रह्म का सम्बन्ध नहीं होता, अर्थात् परब्रह्म में उन के दुर्गुणों का असर नहीं पहुँचता।

१९ जीवों को अनादि अविद्या से संचित कर्म के सम्बन्ध से स्वाभाविक, स्वरूप तिरोहित अर्थात् आच्छादित है। (९, १० पेराग्राफ देखो) कर्म सम्बन्ध से छुटकारा पाने पर स्वाभाविक स्वरूप का आविर्भाव होता है। ऐसा होना प्रकृति मण्डल से बाहर जाने पर है। प्रकृति मण्डल के पार जाकर अप्राकृत परम पद में पहुँचने से ही स्वाभाविक स्वरूप का आविर्भाव होगा। तभी परब्रह्म का अनुभव होता है। इस प्रकार प्रकृति मण्डल के पार जाकर अप्राकृत लोक में पहुंच कर स्वाभाविक स्वरूप का आविर्भाव होकर परब्रह्म का अनुभव को प्राप्त होना ही मोक्ष है।

२० मोक्ष की प्राप्ति का उपाय भक्ति (उपासना) है। तेल की धारा के समान अविच्छिन्न परब्रह्म ध्यान कियाजावे, और वह ध्यान अनवरत भावना करने के कारण प्रत्यक्ष के समान हो जाय, तथा परब्रह्म में अत्यन्त प्रीति होने के कारण अत्यन्त प्रिय होवे, तो वह भक्ति कही जाती है। प्रतिदिन फल की कामना और कर्तृत्व का त्यागकर वर्णाश्रमोचित नित्य नैमित्तिक कर्मों के अनुष्ठान करने से भक्ति की सिद्धि होती है। उस भक्ति से परब्रह्म की प्राप्ति अर्थात् मोक्ष [१९ वाँ पेराग्राफ देखो] प्राप्त होती है।

॥ एकादशरत्न ॥

पण्डित श्रीसरयूदासजी महाराज की संग्रहीत १० पुस्तकें।

१ श्री उपासनात्रय सिद्धान्त भाषा टीका।

इस ग्रन्थ में श्रीरामानुकीय वैष्णवों के मत से श्रीनारायण उपासन, वृन्दाबन वासियों के मत से श्रीकृष्ण उपासना, और अयोध्यावासियों के मत से श्रीराम उपासना सिद्धान्त विस्तार से वर्णन है। जिसमें वैकुण्ठ, गोलोक, और साकेत; अयोध्या का पूर्ण वृतान्त ७०० श्लोकों में वर्णन है। इसमें द्वादश कला, षोड़श कला का भेद भी देखया है, यह ग्रन्थ तीनों उपासकों को एक एक अवश्य रखना चाहिये मूल्य केवल १)

२ श्री वैष्णव कुलभूषण सारसंग्रह भाषा टीका।

इस ग्रन्थ में गुरु शिष्यके लक्षण दीक्षा काल तिथि, वैदिक तांत्रिक मंत्रों के भेद रहस्यत्रय, गुरु परम्परा, कण्ठी, तिलक; माला, शंख, चक्र धनुष, बाणकेधारण बिधि, माला यज्ञोपवीत बनाने की, धारण करनेकी विधि, कैसे मंत्रजपै, किस २ अंगुलियों से, किस २ आसन पर बैठ कर, शिष्य करने की विधि, और भी अनेक विषय वर्णन है ग्रन्थ चारो सम्प्रदाय के वैष्णवों को रखना चाहिये। जैसा नाम है तैसाही गुण है। मूल्य विशेष नहीं है केवल १) रु० है।

३ श्री वैष्णव धर्म दिवाकर भाषा टीका।

इस ग्रन्थ में सब मतों को निर्णय करके अन्त में वैष्णव धर्म सर्वोपरि देखाया है जिसमें राजस, तामस और सात्विक धर्म का पूर्ण विभाग है कण्ठी तिलक, शंखचक्र, धनुषबाण धारण करने का प्रमाण. शैव, शाक्ति, गुरू को छोड़ कर वैष्णव से मन्त्र लेना, मछरी. मांस का खूब खण्डन है शास्त्रार्थ के लिये यह ग्रन्थ अपूर्व हथियार है। सब वैष्णवों को अवश्य रखना चाहिये। मूल्य ।।।) है।

४ श्रीराम मन्त्र परम वैदिक सिद्धांत भाषा टीका।

इस अपूर्व ग्रन्थ में श्री रामानुजीय वैष्णवों ने जो अपने २ रहस्य ग्रन्थों में श्रीराम कृष्णादि मंत्रों की घोर निन्दा की है जिसके लिये उज्जैन कुम्भ

पर श्री रामानुजीय वैष्णवों के संग शास्त्रार्थ हुआ था और श्री रामानुजीय हार गए यह सब विषय शास्त्र प्रमाण सहित लिखदिये हैं। यद्यपि यह ग्रन्थ चारो सम्प्रदाय के लिए है तथापि श्री रामानंदीय वैष्णवों के लिए तो सर्वस्व जीवन है। इसमें मन्त्र मन्त्रार्थ रहस्यत्रय गुरु परम्परा सब विषय आगए हैं। एकही ग्रन्थ रखलेना काफी है। मूल्य केवल ।।।) आना है।

५ श्री राम पटल भाषा टीका।

इसमें कर्म धर्म के सिवाय रहस्य त्रय गुरुपरम्परा चन्द्र, सूर्य ग्रहण में स्नान करने की विधि, परिक्रमा करने की विधि, भजन स्मरण करने की विधि मन्त्र जाप करने की बिधि, शिष्य करने की विधि, पात्र शुद्धि, वस्त्र धारण करने की बिधि, टकसार का भेद और भी अनेक शास्त्रोक्त विधि लिखी हैं चारो सम्प्रदायके बैष्णवों को एक एक अवश्य ही रखना चाहिए बिशेष प्रशंसा क्या करैं। मूल्य ।।।)

६ कलि पाखण्डोदय भाषा टीका।

इस पुस्तक में श्री राम कृष्ण की निंदा करने वालें को और तिलक कण्ठी, माला पूजा, पाठ, तीर्थ, व्रतादि की निंदा करने वालों को राक्षस और यमराज के दूत सिद्ध किये हैं। दयानंदमत का खूब खण्डन है। यदि आप पाखण्डियों नास्तिकों के मुख तोड़ने चाहैं तो एक पुस्तक अवश्य ही रख लीजिए मूल्य ।) है।

७ श्रीराम कृष्ण लीलाऽनुकरण सिद्धान्त भाषा टीका

इसमें ब्राह्मण बालकों को शृङ्गार करके श्रीरामकृष्ण की लीला करना शास्त्र प्रमाण है। लीला कब से चली, दशहरा में लीला करना धर्म है। लीला [illegible] की विधि, लीला का भूमण्डल में प्रचार होना. श्री गोस्वामीजी के शिष्य मेघा भक्त की नाटी इमलीके नीचे लीला में श्रीरामजीका प्रगट होना। टेकराम पंडा का हनुमानजी बनकर बरुणा नदी पार होना, श्रीरामनगर आदि में लीला होना विस्तार से वर्णन है देखने योग्य है। मूल्य =) है।

८ श्री विश्वम्भर उपनिषद भाषा टीका।

अथ वर्णवेद की शाखा है। श्रीरामउपासकों के लिए सर्वस्व कहिए, जीवन कहिये जो कुछ कहिए इसमें राममंत्र रहस्यत्रय, श्रीयुगल मन्त्र का पूर्ण वर्णन है अवश्य लीजिए यह ग्रन्थ आजतक नहीं छपा रहा अब छपा है। मू०।)

१० श्री सत पञ्च चौपाई मनोहर भाषा टीका।

बस श्रीगोस्वामीजी कृत रामायण का सार सिद्धान्त को यदि जानने चाहते हैं तो इस पुस्तक को एक२ अवश्य रखिए इसमें श्रीरामनाम का माहात्म्या, और नाम जपने की विधि खूब लिखी है। मूल्य ≈)

(११) श्री साकेत सुषमा।

बस इस पुस्तक में श्रीअयोध्या, साकेत, सान्तानिक लोक कहां हैं कितने लोकोके ऊपर हैं कितने आवर्णों के भीतरहैं, विस्तारसे लिखा है। अवधसरिस प्रिय मोहि न सोऊ। यह प्रसंग जानै कोउकोऊ। देखने योग्यहै मूल्य ≈)॥ आना है।

अत्यन्त शुद्ध असली। श्री मानस रामायण।

हम अपने ग्राहक तथा अन्यान्य सज्जनों को सहर्ष निवेदन करते हैं कि श्री-अयोध्यावासी प्रसिद्ध महात्मा स्वामी श्रीराम बल्लभा शरणजी महाराज उन्ही की आज्ञा नुसार पं०श्रीसरयू दासजी महाराजने सम्बत् १६६१ सम्बत् १७०१ सम्बत् १८२८ की लिखी हुई प्रतिके अनुसार यह रामायण अत्यन्त शुद्ध किया है। इस संशोधित प्रतिमें प्रथम तो पाठ अत्यन्त शुद्ध है। दूसरे जितने प्राचीन पाठ हैं और गूढ २शब्द हैं सब के पाद टिप्पणी कर दिये हैं तिसरे जहां २ शंका संबन्धि चौपाई दोहा समझ में आई हैं सबके शंका समाधान प्रमाण समेत विधि पूर्वक कर दिये हैं। चौथे नवाह, मास परायण पाठ करने की विधि शास्त्रोक्त प्रमाण से ठीक ठीक लिख दिये हैं। पाँच वें अनुष्ठान करने के लिए एक २ चौपाई दोहे की बिधि भी दे दिये हैं जिसे कि काम धेनु कल्प वृक्ष रामायण से आप लोग सुख पूर्वक अर्थ धर्म, काम और मोक्ष तथा ज्ञान. वैराग्य, भक्ति स्त्री, पुत्र, धन, विद्या, वशी करण, मोहन, उच्चाटन, आदि अनेक लौकिक पार लौकिक सभी कार्यों को सिद्ध कर सकते हैं। छठवें श्रीगोस्वामीजी के असली जीवन चरित्र है ऐसा कभी न सुने होंगे। सातवें जहाँगीर बादशाहने जो सम्वत् १६५५ में गोस्वामी की तसवीर उतर वाई थीं सो भी दी है, इससे साक्षात्दर्शन होता है। ऐसीही उत्तर काण्ड में भी श्रीराम पंचायतन की अद्भुत तसवीर लगीहै। इस रामायण की विशेष प्रशंसा करना सूर्य को दीपक देखना है। मेरे समझ में आजतक ऐसी रामायण कहीं नहीं छपी है। वर्तमान समय में जितनी शुद्ध रामायण छपी हैं, उनसे इस रामयण को एक वार भी सज्जन लोग अवश्य ही मिलाकर देख लें आपही जान जावेंगे। रफपर छपा हुआ २) गलेज कागज पर २।)